इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय
शिक्षा विद्यापीठ

बी.ई.एस.ई.-132
निर्देशन एवं उपबोधन

खंड

1

निर्देशन एवं उपबोधन का परिचय

इकाई 1
निर्देशन एवं उपबोधन को समझना 7

इकाई 2
विद्यालय में निर्देशन 37

इकाई 3
निर्देशन कार्यक्रम में कार्मिक 65

इकाई 4
विद्यालयों में उपबोधन 82

विशेषज्ञ समिति

प्रो. नीरजा शुक्ला (सेवानिवृत्त)
एन.सी.ई.आर.टी, नयी दिल्ली

प्रो. जैसी अब्राहिम
जे.एम.आई, नयी दिल्ली

प्रो. एम. सी. शर्मा (सेवानिवृत्त)
शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

प्रो. एन.के.दाश
शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

डॉ. स्वाति पात्रा
एस.ओ.एस.एस, इग्नू

डॉ. आईशा कन्नड़ी
शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

डॉ. गौरव सिंह
शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

डॉ. ऐलिजाबेथ कुरूविला
शिक्षा विद्यापीठ, नग्नू

कार्यक्रम समन्वयक

प्रो. सरोज पाण्डेय
शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

डॉ. गौरव सिंह
शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

पाठ्यक्रम निर्माण दल (संशोधन पूर्व)

पाठ्यक्रम में योगदान
डॉ. बी फालाचंद्रा (सेवानिवृत्त)
एन.सी.ई.आर.टी, दिल्ली
श्री वी. एस. रवीद्रन
अभ्यासकर्त्ता परामर्शदाता
वाई मल्लप्पा
एन.सी.ई.आर.टी, बैंग्लोर

उपासना विज
विद्यालय परामर्शदाता

प्रो. दया पंत (सेवानिवृत्त)
एन.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली

प्रो. विभा जोशी
शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

पाठ्यक्रम निर्माण दल (संशोधन)

पाठ्यक्रम योगदान
डॉ. बी फालाचंद्रा (सेवानिवृत्त)
एन.सी.ई.आर.टी, दिल्ली
श्री वी.एस. रवीद्रन
अभ्यासकर्त्ता परामर्शदाता
वाई मल्लप्पा
एन.सी.ई.आर.टी, बैंग्लोर
उपासना विज
विद्यालय परामर्शदाता
प्रो. दया पंत (सेवानिवृत्त)
एस.सी.ई.आर.टी., नयी दिल्ली
प्रो. विभा जोशी
शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू
डॉ. आयशा कन्नड़ी
शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

विषय-वस्तु संपादन
प्रो. जेस्सी अब्राहम
जामिया मिल्लिया इस्लामिया, नयी दिल्ली
डॉ. आईशा कन्नड़ी
शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

भाषा एवं आरूप संपादन
डॉ. आईशा कन्नड़ी, शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

पाठ्यक्रम समन्वयक
डॉ. आईशा कन्नड़ी, शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

अनुवादक
सुश्री आरूषी मलिक (इकाई 1 एवं 2)
सुश्री पुष्पा मिश्रा (इकाई 3 एवं 4)

पुनरीक्षण
प्रो. एन.के. गुप्ता, एनसीईआरटी, नयी दिल्ली

सामाग्री निर्माण

प्रो. सरोज पाण्डेय
निदेशक, शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

श्री एस.एस वेंकटाचलम
सहायक कुलसचिव (प्रकाशन), शिक्षा विद्यापीठ, इग्नू

दिसम्बर, 2017

©इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, 2017

ISBN-978-81-

सर्वाधिकार सुरक्षित, इस कार्य का कोई भी अंश इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की लिखित अनुमति लिए बिना मिमियोग्राफ अथवा किसी अन्य साधन से पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

शिक्षा विद्यापीठ एवं इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के बारे में विश्वविद्यालय कार्यालय मैदान गढ़ी नई दिल्ली से अधिक जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की ओर से निदेशक, प्रो. सरोज पाण्डेय, शिक्षा विद्यापीठ द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

लेजर टाइप सेटिंग : टेसा मीडिया एण्ड कम्प्यूटर, C-206, A.F.Enclave-II, नई दिल्ली

मुद्रक :

बी.ई.एस.ई.132 निर्देशन एवं उपबोधन

खंड 1 निर्देशन और उपबोधन का परिचय

इकाई 1 निर्देशन और उपबोधन को समझना

इकाई 2 विद्यालय में निर्देशन

इकाई 3 निर्देशन कार्यक्रम में कार्मिक

इकाई 4 विद्यालयों में उपबोधन

खंड 2 तकनीकें तथा कार्यप्रणाली

इकाई 5 निर्देशन की तकनीकें

इकाई 6 निर्देशन कार्यक्रम

इकाई 7 सामूहिक निर्देशन

इकाई 8 उपबोधन की तकनीकें

खंड 3 वृत्तिक-विकास

इकाई 9 व्यवसाय की प्रकृति एवं वृत्तिक-विकास

इकाई 10 व्यावसायिक सूचना

इकाई 11 वृत्ति प्रतिरूप

इकाई 12 भारत में बालिकाओं का वृत्ति-विकास

खंड 4 विशेष आवश्यकता वाले शिक्षार्थियों का निर्देशन

इकाई 13 निःशक्त शिक्षार्थियों का निर्देशन

इकाई 14 निःशक्त शिक्षार्थियों की सामाजिक-सवेंगात्मक समस्याएँ

इकाई 15 शिक्षार्थियों की व्यवहारिक समस्याएँ

इकाई 16 मानसिक स्वास्थ्य एवं तनाव प्रबंधन

बीईएसई.132 : निर्देशन और उपबोधन

विषय प्रवेश

आधुनिक जीवन की जटिलताओं के कारण युवाओं पर नए दायित्व आ पड़े हैं। आज उन्हें नए कौशलों तथा क्षमताओं की आवश्यकता है जो पूर्वकाल के अपेक्षाकृत सरल समाज में अपेक्षित नहीं थे। जिन कौशलों और क्षमताओं या योग्यताओं की उन्हें आज आवश्यकता है, उनका संबंध स्वयं को समझाने, स्वयं को सामाजिक व भावात्मक रूप से विकसित करने, उपलब्ध जानकारी पर काबू पाने (निष्णात होने) और अपने अपनाए गए व्यवसायों के संबंध में भी पर्याप्त जानकारी ढूंढने से है, जो उनकी प्रगति के लिए आवश्यक होती है। विद्यार्थियों में इन कौशलों तथा सक्षमताओं को विकसित करने के लिए अध्यापकों में भी नई क्षमताओं की आवश्यकता होती है ताकि वे विद्यार्थियों को निर्देशित तथा उपबोधित कर सकें। सामान्यतः कुछ ऐसे विद्यालय हैं जिनमें एक सुव्यवस्थित निर्देशन सेवा प्रदान की जाती है। वस्तुतः निर्देशन तथा उपबोधन कोई वैकल्पिक सेवाएँ नहीं है अपितु ये तो समग्र शैक्षिक प्रक्रिया के अभिन्न अंग होते हैं। विद्यालय में संगठित निर्देशन सेवाओं को प्रदान करने का प्रयोजन है कि यह इस उद्यम में अध्यापक तथा अन्य कार्मिक अपनी भूमिका निभाएँ। निम्नलिखित प्रयोजनों को ध्यान में रखकर यह पाठ्यक्रम तैयार किया गया है :

- विद्यार्थी-अध्यापकों को निर्देशन और उपबोधन की ज़रूरत और महत्त्व के प्रति संवेदनशील बनाना;
- बच्चों के लिए देख-रेख पूर्ण अभिवृत्ति और सरोकार विकसित करना;
- निर्देशन और उपबोधन की आवश्यकता वाले क्षेत्रों/स्थितियों का पता लगाना;
- विद्यार्थियों के इष्टतम सामर्थ्य प्राप्त करने हेतु उनकी सामाजिक, भावात्मक, शैक्षिक एवं कैरियर संबंधी समस्याओं में मदद करने के लिए सक्षमताएँ विकसित करना;
- विद्यार्थियों की समस्याओं को सुलझाने के लिए निर्देशन और उपबोधन की विभिन्न तकनीकों से आपको अवगत कराना;
- विद्यालय में निर्देशन कार्यक्रम की रूपरेखा व योजना बनाना व उन्हें कार्यान्वित करना; और
- विद्यालय में समावेशी अधिगम परिवेश को बढ़ावा देना।

पाठ्यक्रम की विषय-वस्तु को चार खंडों में बांटा गया है जिनका संक्षिप्त विवरण नीचे दिया गया है।

प्रथम खंड का शीर्षक है **निर्देशन एवं उपबोधन का परिचय**। इसके अंतर्गत निर्देशन तथा उपबोधन सेवाओं की प्रकृति, उनके दर्शन तथा प्रक्रियाओं की विवेचना की गई है। इसके अतिरिक्त निर्देशन तथा उपबोधन के विभिन्न उपागमों पर भी चर्चा की गई है तथा पाठ्यक्रम, अधिगम तथा अनुशासन को प्रभावित करने में निर्देशन और उपबोधन की भूमिका का वर्णन भी दिया गया है। इसमें निर्देशन के लिए अध्यापकों तथा वृत्ति शिक्षकों की भूमिका भी वर्णित है।

खंड दो का शीर्षक है **तकनीकें तथा कार्यप्रणाली**। इसमें निर्देशन और उपबोधन की विभिन्न तकनीकों को प्रस्तुत किया गया है। इससे निर्देशन संबंधी विभिन्न सेवाओं तथा उनका मूल्यांकन और अनुवर्तन की भी विवेचना की गई है। यहाँ पर समूह निर्देशन प्रविधियों को भी स्पष्ट किया गया है।

तीसरे खंड का शीर्षक है **वृत्तिक-विकास**। इस खंड में व्यावसायिक विकास की अवधारणा, इसका स्वरूप तथा प्रक्रियाओं पर चर्चा की गई है। इसके अतिरिक्त इनसे संबंधित अवधारणाएँ– जैसे वृत्तिक ढांचे (Pattern), व्यावसायिक सफलता तथा परिपक्वता आदि पर भी प्रकाश डाला गया है। साथ-साथ कार्य की प्रकृति तथा स्त्रियों व युवतियों के व्यावसायिक विकास पर भी चर्चा की गई है।

चौथे खंड का शीर्षक है **विशेष आवश्यकता वाले शिक्षार्थियों का निर्देशन**। जैसा कि शीर्षक से स्पष्ट है कि इस खंड का संबंध विशेष समस्याओं वाले बच्चों के निर्देशन से है। इसमें विकलांग बच्चों की पहचान करना उनकी समस्याओं के निदान, उपचारीकरण तथा अध्यापकों और अभिभावकों की भूमिका पर चर्चा की गई है। विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों तथा उनकी सामाजिक-संवेदनात्मक समस्याओं को विवेचित किया गया है। साथ-साथ यह भी स्पष्ट किया गया है कि ऐसे विद्यार्थियों की सहायता अध्यापक तथा अभिभावक कैसे कर सकते हैं। विभिन्न प्रकार की सुविधाएँ तथा ऐसे सरकारी अभिकरण जो इन बच्चों को सहायता पहुँचाते हैं– उन सभी का वर्णन किया गया है।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY

खंड परिचय

निर्देशन तथा उपबोधन नामक पाठ्यक्रम, जो कि बी.एड प्रोग्राम का एक वैकल्पिक पाठ्यक्रम है, का यह प्रथम खंड है। इस खंड का मुख्य केंद्र बिंदु आपको विद्यार्थियों के जीवन में निर्देशन तथा उपबोधन के स्थान, उसकी आवश्यकता तथा महत्त्व से परिचित कराना है। सामान्यतः हम यह सोच बैठते हैं कि निर्देशन तथा उपबोधन की आवश्यकता तो मात्र उन विद्यार्थियों को होती है जो किसी मनोवैज्ञानिक समस्या से ग्रस्त होते हैं। विद्यालयों में निर्देशन और उपबोधन का प्रयोजन सभी विद्यार्थियों को सहायक संबंध स्थापित करने (सहायता करने) को परिवेश में लाना है। इस तरह, निर्देशन हमारी शिक्षा प्रणाली का एक अपरिहार्य अंग है। यह बच्चों को समझने में अध्यापकों तथा अभिभावकों के लिए एक बहुमूल्य निविष्टि या आगत का कार्य करती है ताकि उनके (बच्चों के) समुचित विकास को बढ़ावा दिया जा सके। इससे किसी व्यक्ति को अपने आपको समझने में सहायता मिलती है तथा वे उसी प्रकार अपनी समस्याओं का सामना कर सकते हैं। इस खंड में चार इकाइयाँ हैं।

प्रथम इकाई का शीर्षक है : **निर्देशन एवं उपबोधन को समझना**। यह इकाई इस खंड तथा इस पाठ्यक्रम की प्रथम या परिचयात्मक इकाई है। इस इकाई में निर्देशन प्रक्रिया को समझने तथा निर्देशन की प्रकृति, इसके उद्देश्य, कार्यक्षेत्र, आवश्यकता तथा सिद्धांतों के विवेचन पर बल दिया गया है। साथ-ही-साथ इसमें निर्देशन के विभिन्न प्रकारों का विस्तृत वर्णन भी किया गया है। इन बिंदुओं की सहायता से हम इस शब्द के व्यापक अर्थ को समझ सकते हैं। उपबोधन की परिभाषा, प्रयोजन और उसके सिद्धांतों पर भी इकाई 1 में चर्चा की गई है। हमने उपबोधन की विभिन्न उपागमों और उपबोधन प्रक्रिया पर भी चर्चा की है।

विद्यालय में निर्देशन इस खंड की **दूसरी इकाई** है। इस इकाई का आरंभ **निर्देशन** तथा **पाठ्यचर्या** से होता है। इसमें पाठ्यचर्या की अवधारणा, निर्देशन और पाठ्यचर्या का एकीकरण तथा विद्यालयी पाठ्यचर्या के द्वारा निर्देशन आदि को समझाया गया है। इस इकाई के अन्य केंद्र बिंदु हैं– कक्षा-अधिगम और निर्देशन के संदर्भ में निर्देशन व अधिगम, कक्षा के संदर्भ में अनुशासन और नवकालीन मीडिया से जुड़े मुद्दों से निपटना।

इकाई तीन का शीर्षक है **निर्देशन कार्यक्रम में कार्मिक**। इसके अंतर्गत निर्देशन कार्यक्रम तथा निर्देशन कार्मिकों की आवश्यकता का वर्णन किया गया है। विद्यालय में विभिन्न प्रकार निर्देशन-कार्मिकों की आवश्यकता तथा उपलब्धता होती है। एक कक्षा अध्यापक, वृत्तिक शिक्षक तथा उपबोधक सभी निर्देशन कार्मिक कहलाते हैं। इस इकाई में इन सभी की भूमिकाओं को भी स्पष्ट किया गया है। विद्यालयों में आवश्यकता-आधारित न्यूनतम निर्देशन कार्यक्रम और इन कार्मिकों की भूमिका पर एक अलग से भाग दिया गया है। यह उस स्थिति के लिए है जब किसी विद्यालय के लिए यह संभव न हो कि वह एक व्यापक विद्यालय निर्देशन कार्यक्रम चला सके।

इकाई चार, विद्यालयों में उपबोधन में उपबोधन के विभिन्न प्रकारों और क्षेत्रों से परिचित कराया गया है। विद्यालय परिवेश में स्थिति के अनुरूप व्यक्तिगत स्तर पर या सामूहिक स्तर पर उपबोधन सेवाएँ प्रदान की जा सकती हैं। इस तरह, हमने सामूहिक और व्यक्तिगत दोनों प्रकार के उपबोधनों पर चर्चा की है। समकक्ष उपबोधन भी इस इकाई में चर्चा का विषय रहा ताकि आप विद्यालय निर्देशन कार्यक्रम के समर्थन के लिए समकक्ष निर्देशन कार्यक्रम आयोजित कर सकें। इसके अलावा, अध्यापकों में बहु-सांस्कृतिक और संकटकालीन उपबोधन कौशल भी विकसित किए जाने चाहिए ताकि विद्यालय में ऐसे अवसर आने पर इनका उपयोग किया जा सके। इस इकाई में हमने उपबोधन के इन विशिष्ट कार्यों पर प्रकाश डाला है।

इकाई 1 निदर्शन एवं उपबोधन को समझना

इकाई की रूपरेखा

1.1 प्रस्तावना

1.2 उद्देश्य

1.3 निर्देशन : एक परिचय

- 1.3.1 निर्देशन की आवश्यकता
- 1.3.2 निर्देशन का प्रयोजन
- 1.3.3 निर्देशन के सिद्धांत

1.4 निर्देशन के प्रकार

1.5 उपबोधन का अर्थ

- 1.5.1 उपबोधन की परिभाषाएँ
- 1.5.2 उपबोधन और संबंद्धित क्षेत्र

1.6 उपबोधन के सिद्धांत

1.7 उपबोधन के प्रयोजन

1.8 उपबोधन के प्रमुख उपागम

- 1.8.1 निदेशात्मक उपागम
- 1.8.2 अनिदेशात्मक उपागम
- 1.8.3 संकल्पनात्मक उपागम

1.9 उपबोधन प्रक्रिया

- 1.9.1 अवधारणाएँ
- 1.9.2 सोपान/अवस्थाएँ

1.10 शिक्षा में निर्देशन और उपबोधन

1.11 सारांश

1.12 इकाई के अंत में अभ्यास कार्य

1.1 प्रस्तावना

आपने अवश्य अनुभव किया होगा कि कई बार विद्यार्थी कक्षा में बिल्कुल ध्यान नहीं देते, कोई प्रतिक्रिया व्यक्त नहीं करते और विमुख (विरोधी प्रवृत्ति के) भी होते हैं। ऐसे भी उदाहरण हैं जब वे अपने अध्ययन (पढ़ाई) में पीछे रहते हैं, उनकी शैक्षणिक उपलब्धि बहुत कम होती है और यह समस्या तब और भी जटिल हो जाती है जब इस कमी की पूर्ति करने के लिए कोई अभिप्रेरणा नहीं होती और एकाग्रता की भी कमी होती है। इसके अतिरिक्त जब वे उच्च अध्ययन के लिए कोई विशिष्ट विषय चुनना चाहते हैं तो वे किसी भी प्रकार का निर्णय करने में अपने को असमर्थ पाते हैं। कई बार ऐसा भी होता है कि वे विद्यालय आना भी नहीं चाहते। कक्षा में उपस्थित होने पर भी उनका मन कहीं ओर होता है– दिवा-स्वप्न देखते हैं, समाजीकरण यानी लोगों के साथ मिलने-जुलने में न्यूनतम रुचि रखते हैं अथवा आक्रामक व्यवहार प्रदर्शित करते हैं।

उपरोक्त समस्याएँ शारीरिक, सामाजिक, संवेगात्मक, नैतिक, आध्यात्मिक विकास आदि क्षेत्रों में व्यक्ति के कुसमायोजन के फलस्वरूप हो सकती हैं। शिक्षक का दायित्व है कि वह इनके कारणों को समझे तथा इसे समझ कर या तो इनका निवारण इनकी गंभीरता के अनुसार करें या उन्हें किसी व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित निर्देशक के पास निर्देशन के लिए भेजें। व्यक्ति में निहित क्षमताओं के पूर्ण विकास में मदद के लिए शैक्षिक प्रक्रिया में व्यक्ति के क्रियाकलापों को निदेशित व नियंत्रित करने में निर्देशन और उपबोधन एक सहायक के रूप में कार्य करते हैं।

इस इकाई में हम निर्देशन की प्रकृति, प्रयोजन, कार्यक्षेत्र, निर्देशन की आवश्यकता, उसके प्रकारों, सिद्धांतों व शिक्षा से संबंध की चर्चा करेंगे।

उपबोधन, विद्यालय के समग्र निर्देशन कार्यक्रम का प्रमुख और सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भाग माना जाता है। विद्यालय निर्देशन कार्यक्रम के अन्य सभी कार्यकलाप और सेवाएँ उपबोधन प्रक्रिया से होकर गुजरते हैं और इसे पूरा करने में सहायक भी होते हैं। उपबोधन ही केवल ऐसा साधन है जिसके द्वारा अन्ततः किसी भी व्यक्ति विशेष की सहायता की जाती है। इसलिए, उपबोधन की अवधारणा को भलीभांति समझना अत्यंत आवश्यक है। वृत्तिक आशय में प्रयुक्त उपबोधन का अर्थ, इसके सामान्य जीवन में प्रचलित अर्थ से काफी भिन्न है। सामान्य व्यक्ति के लिए, इसका अर्थ है, सलाह, सुझाव, अनुमोदन या कुछ विशेष जानकारी प्रदान करना। लेकिन वृत्तिक रूप में यह ऐसी वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिससे कोई भी व्यक्ति स्वयं को समझ पाता है और अपने आस-पास के पर्यावरण को समझ कर आत्मनिर्भर, आत्म-निर्देशित और आत्म-संतुष्टि की ओर अग्रसर होते हुए जीवन का अर्थ समझता है और अच्छा जीवन जीने के योग्य बनता है। उपबोध्य की पहले से विद्यमान समस्याओं को सुलझाने के उद्देश्य से उपबोधन दिया जाता है ताकि भविष्य में ऐसी समस्याएँ दोबारा न उभरें और इसके साथ-साथ उपबोध्य का व्यक्तिगत, सामाजिक, संवेगात्मक, शैक्षिक और व्यावसायिक विकास हो सके। अतः हम कह सकते हैं कि उपबोधन उपचारात्मक, रोधात्मक और विकासात्मक पहलुओं से जुड़ा हुआ है। इस इकाई में आपको उपबोधन की अवधारणा और इसके स्पष्ट अर्थ से अवगत कराया जाएगा और बाद में हम उपबोधन के सिद्धांतों व लक्ष्यों, सैद्धांतिक पक्षों, तकनीकों और उपबोधन की प्रक्रिया पर विस्तृत चर्चा करेंगे।

1.2 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात् आप इस योग्य हो जाएंगे कि :

- निर्देशन के स्वरूप, प्रयोजन, कार्यक्षेत्र और उसकी आवश्यकता की व्याख्या कर सकेंगे;
- निर्देशन के विभिन्न सिद्धांतों की सूची बना सकेंगे;
- निर्देशन के प्रकारों का वर्णन कर सकेंगे;
- शिक्षा के साथ इसके संबंध का उल्लेख कर सकेंगे;
- निर्देशन और उपबोधन की आवश्यकता का पता लगा सकेंगे;
- निर्देशन और उपबोधन के बीच अंतर जान सकेंगे;
- निर्देशन और उपबोधन के लक्ष्यों और उद्देश्यों का वर्णन कर सकेंगे;
- उपबोधन शब्द और विभिन्न क्षेत्रों से इसके संबंध की व्याख्या कर सकेंगे;
- उपबोधन के लक्ष्यों को व्यक्त कर सकेंगे;

- उपबोधन के सिद्धांतों का वर्णन कर सकेंगे;
- उपबोधन की विभिन्न उपागमों की तुलना कर सकेंगे; और
- उपबोधन की प्रक्रिया की चर्चा कर सकेंगे।

1.3 निर्देशन : एक परिचय

निर्देशन में शिक्षा की समस्त प्रक्रिया शामिल है, जो बालक के जन्म से ही आरम्भ हो जाती है। चूंकि व्यक्तियों को अपने समस्त जीवन में सहायता की आवश्यकता पड़ती है, यह कहना गलत नहीं होगा कि निर्देशन की आवश्यकता भी आजीवन पड़ती है।

यदि हम निर्देशन के शाब्दिक अर्थ पर विचार करें तो इसका तात्पर्य है निर्दिष्ट करना, बतलाना, मार्ग दिखाना (मार्गदर्शन)। इसका अर्थ सहायता करने तक ही सीमित न होकर उससे कहीं व्यापक है। यदि कोई व्यक्ति सड़क पर गिर जाता है तो हम उसे उठने में सहायता करते हैं परंतु हम उसका निर्देशन तब तक नहीं करते जबतक उसकी सहायता किसी निश्चित दिशा में जाने के लिए नहीं करते।

निर्देशन शब्द सभी प्रकार की शिक्षा से जुड़ा है– औपचारिक, अनौपचारिक, व्यावसायिक शिक्षा आदि, जिसमें व्यक्ति की सहायता करना ही उद्देश्य होता है ताकि वह अपने पर्यावरण में भावात्मक रूप से समायोजन कर सके। ऐसा भी कहा जा सकता है कि व्यक्तियों को उपयुक्त चयन और समायोजन बनाने हेतु निर्देशन दिया जाता है।

1.3.1 निर्देशन की आवश्यकता

पुराने समय में, जब समाज कम जटिल था, यदि किसी स्थानीय समुदाय में या परिवार के किसी सदस्य को किसी प्रकार की समस्या होती थी तो परिवार का मुखिया अथवा समुदाय का नेता सामान्यतः होता था जो उसका निर्देशन करता था। यद्यपि इस प्रकार का मार्गदर्शन समस्या की गहन और पूरी जानकारी के बिना तात्कालिक परामर्श होता था अथवा यह किसी व्यावसायिक प्रशिक्षण की सहायता के बिना बालकों का निर्देशन करने के लिए अध्यापकों और अभिभावकों का अधिकार क्षेत्र होता था जो कई बार सहायता करने के स्थान पर केवल भ्रामक होता था। परंतु अब यह समाज में विभिन्न परिवर्तनों के कारण संभव नहीं है और व्यक्ति के निर्देशन के लिए व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित व्यक्तियों की सहायता की आवश्यकता पड़ती है।

मैथ्यूसन (1954) के मतानुसार, शैक्षिक कार्मिक कार्य एक व्यावसायिक प्रक्रिया है जो व्यक्तियों की चार क्षेत्रों में सहायता करती है : (1) स्वयं का मूल्यांकन करना और स्वयं को समझना; (2) व्यक्तिगत-सामाजिक यर्थाथताओं में स्वयं को ढालना (समायोजन करना); (3) मौजूदा और भावी परिस्थितियों के अनुकूल बनाना; और (4) वैयक्तिक क्षमताओं को विकसित करना।

इसलिए कहा जा सकता है कि निर्देशन की आवश्यकता निम्नलिखित कारणों से पड़ती है:

1) शिक्षा के प्रति जागरुकता निरंतर बढ़ रही है। जनसंख्या में वृद्धि और सीमित रोजगार के अवसरों के कारण, शिक्षित बेरोज़गारों की संख्या में वृद्धि हो रही है। शिक्षित बेरोजगार युवकों की सहायता उचित निर्देशन व मार्गदर्शन से की जा सकती है, ताकि वे अपनी क्षमताओं के अनुकूल कार्य स्थिति को पहचान सकें।

2) हमारे विद्यालय इस समय प्राथमिक, मिडिल और उच्चतर स्तरों पर गंभीर समस्याओं का सामना कर रहे हैं। विद्यार्थियों की आवश्यकताओं और योग्यताओं के अनुसार पाठ्यचर्या विकसित करके निर्देशन सेवाएँ शैक्षिक प्राधिकारियों की सहायता कर सकती हैं।

3) निर्देशन के माध्यम से विशेष कार्यों के लिए सही व्यक्तियों की पहचान की जा सकती है।

4) समाज में हो रहे परिवर्तनों के कारण, परिवार में द्वंद्व बढ़ते जा रहे हैं और किशोर तनावपूर्ण परिस्थितियों से गुजर रहे हैं जिसके कारण कुंठाएँ बढ़ रही हैं। किशोरावस्था में अनुशासन व अपराध की समस्याएँ भी उत्पन्न होती हैं।

5) जीवन-शैली में तेज़ी से बदलाव और जटिलता के कारण अभिभावकों पर समाज की माँगे (अपेक्षाएँ) भी बढ़ रही हैं जिसने अभिभावकों और बालकों के बीच वैयक्तिक संपर्क को कम कर दिया है। इस प्रकार की घटनाओं के कारण कुसमायोजित (तालमेल स्थापित न कर पाने वाले) बालकों की समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं जो बहुत आम होती जा रही हैं।

6) पहले विभिन्न रोज़गार के अवसरों के बारे में अधिक सजगता और जागरुकता नहीं थी। एक किसान का बेटा कृषि व्यवसाय अपनाता था और वकील का बेटा वकालत करता था चाहे उनकी अभिक्षमता/अभिरुचि उस व्यवसाय के लिए हो या न हो। निर्देशन के माध्यम से विद्यार्थियों की योग्यताओं, अभिरुचियों और अभिक्षमताओं के अनुसार व्यवसाय या पाठ्यक्रम चुनने में उनकी सहायता की जा सकती है।

7) मानव मूल्यों में गिरावट तथा निहित स्वार्थों के कारण हो रहे धार्मिक तथा नैतिक शोषण के कारण सही रास्ता चुनने के लिए विद्यार्थियों के लिए निर्देशन अनिवार्य हो गया है ताकि वे दूसरों से गुमराह होने के बजाए धर्म और नैतिकता में अपना चिंतन और कार्य विकसित कर सकें।

8) निर्देशन की आवश्यकता व्यक्तियों के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए भी पड़ती है।

9) हमारे देश में कुछ समस्या-क्षेत्र हैं जिनमें मार्गदर्शन की आवश्यकता पड़ती है जैसे, जातिगत समस्याएँ, नई आर्थिक नीतियों और सेवानिवृत्त व्यक्तियों की समस्याएँ।

10) महिलाओं की परंपरागत छवि में परिवर्तन के कारण से पारिवारिक ढांचे में संतुलन बनाने के लिए निर्देशन की आवश्यकता है।

इस प्रकार, निर्देशन की भूमिका जन्म से मृत्यु तक जीवनपर्यंत चलती रहती है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) निम्नलिखित कथन सही है अथवा गलत, उपयुक्त शब्द पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) निर्देशन 'शिक्षित बेरोजगारों' की सहायता करता है। (सही/गलत)

ii) अनुशासन और अपराध की समस्याएँ सुलझाने में निर्देशन की आवश्यकता नहीं पड़ती। (सही / गलत)

iii) निर्देशन तनाव और कुंठाएँ बढ़ाता है। (सही / गलत)

iv) निर्देशन अंतःवैयक्तिक संबंधों को सुधारने में सहायता करता है। (सही / गलत)

v) निर्देशन व्यक्तियों को सही मार्ग दिखाता है। (सही / गलत)

vi) निर्देशन विद्यार्थियों की केवल शैक्षिक आवश्यकताएँ पूरी करता है। (सही / गलत)

1.3.2 निर्देशन का प्रयोजन

निर्देशन का कार्य व्यक्ति को योग्यताओं, अभिरुचियों और समाज की आवश्यकताओं के अनुरूप स्वयं को ढालने में सहायता करना है। दूसरे शब्दों में, इसका तात्पर्य वांछित दिशा में विकास करने में व्यक्ति की सहायता करना है और बदलते समय व समाज की आवश्यकताओं तथा मांगों के अनुकूल स्वयं को बनाना है।

प्रारंभिक विद्यालय स्तर पर निर्देशन का प्रयोजन घर, विद्यालय, धर्म और समकक्ष (हमउम्र के साथ) संबंधों (विद्यार्थी संबंधों) जैसी प्राथमिक समूह शक्तियों के एकत्रीकरण के लिए विद्यार्थियों की सहायता करना है। ये वे शक्तियाँ हैं जो विद्यार्थियों की किशोरावस्था के लिए आधार बनाती हैं और फिर उन शक्तियों को एक सामंजस्यपूर्ण व्यक्ति में परिवर्तित करती है।

माध्यमिक विद्यालय स्तर पर निर्देशन, मुख्य रूप से इन शक्तियों के विभिन्न वैशिष्टय पहलुओं पर बल देता है क्योंकि ये विद्यार्थियों के ज्ञान, स्वीकृति और स्वयं की दिशा / पहलुओं को प्रभावित करता है। शैक्षिक योजना, रोजगार चयन, अंतःवैयक्तिक संबंधों व अंतःवैयक्तिक स्वीकृति के क्षेत्रों में उनकी क्षमताओं और अवसरों के अनुसार अपने विकास के लिए विद्यार्थियों को सेवाएँ प्रदान करना माध्यमिक स्तर पर निर्देशन सेवाओं का मूल कार्य है।

इस प्रकार, निर्देशन का प्रयोजन वैयक्तिक संतुष्टि और सामाजिक उपयोगिता – जिसमें विद्यार्थी, अध्यापक, अभिभावक आदि शामिल हैं, के लिए आत्म-स्थितिपरक संबंधों को समझने और उनसे निपटने के लिए व्यक्ति की क्षमता में सुधार करना है।

विद्यार्थियों के लिए योगदान

क) उनकी योग्यताओं, अभिक्षमताओं, अभिरुचियों और कमियों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करके उन्हें स्वयं को समझने में सहायता करना।

ख) अन्य लोगों से बेहतर संबंध बनाना और उस परिवेश को समझना जिसमें वे रहते हैं।

ग) वृत्ति, विषयों आदि के बारे में जानकारी प्राप्त कर विद्यालय से सर्वाधिक जाना।

घ) अपनी अभिरुचियों, योग्यताओं, का पता लगाना, कार्यशील समाज के विभिन्न पहलुओं के बारे में जानना और उनकी योग्यताओं का अधिकतम लाभ उठाने के लिए सीखना।

च) प्रतिभाशाली (gifted) और मंद अध्येताओं तथा विशेष आवश्यकताओं वाले विद्यार्थियों की पहचान करना एवं उनमें उचित अभिवृत्ति विकसित करने में उनकी सहायता करना और उनकी संभावित योग्यताओं का अधिक से अधिक उपयोग करना।

अध्यापक की सहायता

1) निर्देशन, वास्तव में परामर्शकर्ता द्वारा चलाए जा रहे सेवाकालीन शिक्षा कार्यक्रमों के माध्यम से अपने विद्यार्थियों के बारे में अध्यापकों की जानकारी बढ़ाने के लिए अवसर प्रदान करता है। विद्यालय उपबोधक अध्यापकों को परीक्षणों का संचालन करने और परीक्षणों के परिणामों की व्याख्या भी प्रतिपादित करने में सहायता करता है। ये परीक्षणों के परिणाम वह सूचना देते हैं जो अध्यापकों को उनके विद्यार्थियों के कक्षा व्यवहार और कार्य-निष्पादन को बेहतर रूप से समझने में उनकी सहायता करते हैं।

2) विद्यार्थियों की विशेष अभिरुचियों, क्षमताओं और पूर्व अनुभव संबंधी आंकड़े निर्देशन संकाय द्वारा संचयी अभिलेख पर उपलब्ध कराए जाते हैं। विद्यार्थियों की शारीरिक स्थिति, चिकित्सीय इतिहास, पारिवारिक पृष्ठभूमि, शैक्षिक रिकार्ड, मानकीकृत परीक्षाओं में प्राप्तांक, वैयक्तिक विशेषताएँ आदि विद्यार्थी को बेहतर शिक्षण प्रदान करने में अध्यापक की सहायता करते हैं।

3) अभिभावकों के लिए लाभदायक– अध्यापक बालक की योग्यताओं, अभिरुचियों और क्षमताओं की स्पष्ट जानकारी अभिभावकों को दे सकता है ताकि अभिभावक बालक को जान-समझ सके, जैसा है वैसा ही उसे स्वीकार कर सके।

4) क्षेत्रीय समुदाय समष्टि की बेहतर मानसिक स्वास्थ्य प्राप्त करने में सहायता करना।

5) पूरे विद्यालय की कई प्रकार से मदद करना– जैसे विद्यार्थियों की उनकी अभिरुचि और अभिक्षमताओं के आधार पर उपबोधन करके पाठ्यक्रम चुनने में सहायता करना। विद्यालयी कार्यक्रम के उन पहलुओं पर प्रशासन संबंधी जानकारी देना जो विद्यार्थियों के रोज़गार और व्यक्तित्व निर्माण से संबंधित हैं।

निर्देशन का कार्यक्षेत्र

निर्देशन में निम्नलिखित क्षेत्र शामिल हैं :

1) व्यक्ति एवं पाठ्यचर्या

क) शैक्षिक उपलब्धि और प्रगति

ख) पाठ्यचारी (curricular) और पाठ्यचर्या सहगामी (co-curricular) कार्यकलापों के माध्यम से वैयक्तिक विकास

2) विद्यालय में व्यक्ति के निजी-सामाजिक संबंध

क) स्वयं को समझना और वैयक्तिक विशेषताओं की जानकारी

ख) दूसरों को समझना और उनके साथ संबंध स्थापित करना

3) व्यक्ति व उसकी शैक्षिक, व्यावसायिक अपेक्षा एवं अवसर

क) भावी शिक्षा और व्यावसायिक अपेक्षाओं की पूर्ति करने के लिए तैयार करना

ख) शैक्षिक और व्यावसायिक क्षेत्रों में उपयुक्त अवसरों का उपयोग

शैक्षिक व व्यावसायिक निर्देशन के कार्यक्षेत्र को समझने के लिए अब हम उपर्युक्त वर्णित निर्देशन में प्रत्येक क्षेत्र पर एक-एक करके चर्चा कर सकते हैं।

1) क) **शैक्षिक उपलब्धि और प्रगति :** कभी-कभी ऐसा होता है कि विद्यार्थी की शैक्षिक उपलब्धि कम होती है परंतु बुद्धि-लब्धि अधिक होती है। ऐसे मामले में निर्देशन कार्यकर्ता कुछ मनोवैज्ञानिक परीक्षणों की सहायता से पता लगा सकता है कि कमी कहाँ है और इस प्रकार वांछित स्तर प्राप्त करने में विद्यार्थी की सहायता कर सकता है। कभी-कभी विद्यार्थी की अध्ययन से संबंधित कुछ ऐसी समस्याएँ भी होती हैं कि वह अध्ययन नहीं कर पाता और अपने शिक्षकों के साथ उन्हें सुलझाने में सफल नहीं हो पाता। इसलिए, इन परिस्थितियों में निर्देशन कार्यकर्ता प्रभावकारी सिद्ध हो सकता है।

ख) **वैयक्तिक विकास :** निर्देशन कार्यक्रम इस प्रकार तैयार किए जाते हैं कि विद्यार्थियों का वैयक्तिक विकास सर्वोत्तम रूप से हो पाता है।

2) **वैयक्तिक-सामाजिक संबंध :** दूसरों के साथ अच्छी तरह आगे बढ़ना और उनके साथ अच्छे संबंध बनाना इस बात का सूचक है कि व्यक्ति समाज में भली-भांति समायोजित है। निर्देशन स्वयं को समझ कर दूसरों के साथ प्रभावकारी ढंग से व्यवहार करने के लिए व्यक्ति की सहायता करता है।

3) **शैक्षिक और व्यावसायिक अपेक्षाओं के साथ व्यक्ति का संबंध :** निर्देशन शैक्षिक विषयों, रोज़गार आदि के चयन जैसे जीवन के विभिन्न चरणों में प्रभावकारी निर्णय करने में व्यक्ति की सहायता करता है और विभिन्न रोज़गारों और उनसे जुड़े क्षेत्रों से संबंधित आवश्यक सूचना उपलब्ध कराता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

2) निम्नलिखित को मिलाइए :

समूह - क	समूह - ख
i) व्यक्ति का पाठ्यचर्या के साथ संबंध	क) स्वयं, दूसरों और उनके साथ संबंधों को समझना
ii) विद्यालय में विद्यार्थियों के वैयक्तिक-सामाजिक संबंध	ख) शैक्षिक उपलब्धि और प्रगति
iii) विद्यार्थी का शैक्षिक-व्यावसायिक अपेक्षाओं और अवसरों के साथ संबंध	ग) उपयुक्त शैक्षिक और व्यावसायिक अवसरों (सुविधाओं) का उपयोग

1.3.3 निर्देशन के सिद्धांत

निर्देशन कुछ सिद्धांतों पर आधारित हैं। यह आवश्यक है कि हमें मानव जीवन में उपयोग से पहले किसी भी विषय के ज्ञान के प्रयोग में निहित विभिन्न कार्यों की जानकारी तथा उस विषय के बुनियादी सिद्धांतों को समझ लेना चाहिए।

निर्देशन के सिद्धांत इस प्रकार हैं :

1) **निर्देशन एक जीवनपर्यंत प्रक्रिया है :** निर्देशन एक आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है जो बाल्यावस्था से मृत्युपर्यंत चलती है। यह कोई ऐसी सेवा नहीं है जो किसी विशेष निर्धारित समय अथवा स्थान पर आरंभ अथवा समाप्त होती है।

2 **निर्देशन वैयक्तिकरण पर बल देता है :** यह इस बात पर महत्त्व देता है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपने व्यक्तित्व को विकसित करने के लिए स्वतंत्रता दी जानी चाहिए और जब आवश्यकता हो तो व्यक्ति का निर्देशन किया जाना चाहिए।

विभिन्न स्तरों पर व्यष्टि सापेक्ष-शिक्षा के लिए, निर्देशन सेवाओं का उचित संगठन बहुत ज़रूरी है ताकि प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यताओं, अभिरुचियों और अभिक्षमताओं को अनन्य/विलक्षण तरीकों से विकसित कर सके।

3) **निर्देशन आत्म-निर्देशन को महत्त्व देता है :** निर्देशन का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का विकास इस प्रकार करना है कि उसे निर्देशन की आवश्यकता न हो। निर्देशन व्यक्ति को अपने पर्यावरण में अच्छी तरह समायोजित करता है और उसे आत्म-निर्भरता तथा आत्म-निर्देशन की ओर अग्रसर करता है। जो विद्यार्थी सहायता प्राप्त करना चाहता है वह अपने उपबोधक से पूछता है अथवा उससे अपनी कठिनाइयों को दूर करने के लिए अनुरोध कर सकता है। परंतु निर्देशन की प्रशंसा वह तब ही करता है जब उसे अनेक ऐसी वैकल्पिक प्रक्रियाएँ समझाई व दर्शायी जाती हैं जिन्हें वह प्रत्येक प्रक्रिया के संभावित परिणामों के साथ अपना सके।

4) **निर्देशन सहयोग पर आधारित है :** निर्देशन दो व्यक्तियों– निर्देशन जिज्ञासु और निर्देशन प्रदाता के पारस्परिक सहयोग पर निर्भर करता है। किसी भी व्यक्ति को उसकी सहमति के बिना निर्देशन प्राप्त करने के लिए बाध्य/विवश नहीं किया जा सकता।

5) **निर्देशन सभी के लिए है :** निर्देशन प्रत्येक व्यक्ति की क्षमताओं के विकास का ध्येय रखता है। यद्यपि कुसमायोजित विद्यार्थियों को उपबोधक अधिक समय देते हैं, परंतु निर्देशन का मूल सिद्धांत यह है कि निर्देशन कुछ व्यक्तियों को ही प्राप्त न होकर अनेक व्यक्तियों को उपलब्ध होना चाहिए। यह बहुत अच्छा या सहायक होगा कि सामान्य और श्रेष्ठ सभी बालकों पर समान रूप से ध्यान देकर उनके बौद्धिक-विकास को उद्दीप्त किया जाए।

6) **निर्देशन एक संगठित कार्यकलाप है :** निर्देशन एक आकस्मिक कार्यकलाप नहीं है। एक व्यापक कार्यक्रम होने के बावजूद कुछ प्राप्त करने का इसका एक निश्चित प्रयोजन होता है। अतः यह एक व्यवस्थित और सुसंगठित क्रियाकलाप है।

7) **निर्देशन कार्यकर्ताओं को विशेष तैयारी की आवश्यकता होती है :** साधारणतः यह माना जाता है कि निर्देशन में सामान्य सर्वेक्षण पाठ्यक्रम– जो कि सभी अध्यापकों को तैयार करने में प्रत्येक अध्यापक की न्यूनतम आवश्यकता होनी चाहिए, के अलावा विशेषज्ञ के लिए शिशु एवं किशोर विकास, मानसिक स्वास्थ्य आदि में ज्ञान व व्यावहारिक अनुभव सहित मनोविज्ञान में प्रशिक्षण अवश्य होना चाहिए।

निर्देशन कार्यकर्ता को यह भी जानना चाहिए कि उसके समुदाय में किस प्रकार की एजेंसियाँ और संसाधन उपलब्ध हैं ताकि सहायता प्राप्त करने वाले व्यक्ति इन संसाधनों का उपयोग कर सकें।

इसके साथ-साथ मौजूदा विद्यालयी निर्देशन कार्यक्रम का आवधिक (समय-समय पर) मूल्यांकन किया जाना चाहिए।

8) **निर्देशन व्यक्तिगत भेदों को सम्मान देता है :** दो व्यक्ति एक समान नहीं होते। निर्देशन विद्यार्थियों के बीच इन व्यक्तिगत असमानताओं (भिन्नताओं) को समझता है

और प्रत्येक व्यक्तियों की विलक्षण आवश्यकताओं, समस्याओं और विकासात्मक विशेषताओं को सम्मान प्रदान करता है।

9) **निर्देशन अनभिव्यक्त तथ्यों को भी ध्यान में रखता है :** निर्देशन के सभी व्यवहारों में सर्वाधिक हानिकारक निर्देशन व्यवहार उपयुक्त आंकड़ों के उपलब्ध न होने पर भी उनके बिना उपबोधन करना है। आंकड़ों के अभाव में निर्देशन नीम-हकीम खतरा-ए-जान जैसा है। बुद्धिमतापूर्वक निर्देशन करने के लिए यथासंभव पूरी जानकारी के साथ, व्यक्तिगत मूल्यांकन और अनुसंधान के कार्यक्रम आयोजित किए जाने चाहिए और प्रगति तथा निर्देशन कार्यकर्त्ताओं के लिए उपलब्धि के सही संचयी रिकार्ड उपलब्ध कराए जाने चाहिए।

10) **निर्देशन लचीला होता है :** संगठित निर्देशन कार्यक्रम व्यक्ति एवं समुदाय की आवश्यकताओं के अनुसार लचीला होना चाहिए।

11) **निर्देशन अंतःसंबंधित क्रियाकलाप है :** प्रभावकारी निर्देशन के लिए व्यक्ति के बारे में संपूर्ण सूचना का होना ज़रूरी है क्योंकि किसी भी समस्या को समूचे कार्यक्रम के साथ संबद्ध किए बिना अलग से देखना कठिन होता है। जैसे शैक्षिक, व्यावसायिक और वैयक्तिक-सामाजिक निर्देशन परस्पर-संबंधित हैं परंतु इन्हें समूचे निर्देशन कार्यक्रम के विभिन्न पहलुओं के तौर पर अलग समझा जा सकता है।

12) **निर्देशन आचार संहिता पर बल देता है :** मार्गदर्शन के नैतिक अनुप्रयोगों में उपबोधित किए जाने वाले व्यक्तियों के व्यक्तित्व के प्रति सम्मान शामिल होता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

3) निम्नलिखित कथन सही है अथवा गलत, उपयुक्त शब्द (सही/गलत) पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) निर्देशन जन्म के समय से ही आरंभ हो जाता है और किशोरावस्था तक चलता है। (सही/गलत)

ii) निर्देशन में वैयक्तिकरण पर बल दिया जाता है। (सही/गलत)

iii) निर्देशन व्यक्ति को केवल अपना समायोजन करने में सहायता करता है। (सही/गलत)

iv) निर्देशन केवल कुसमायोजित व्यक्तियों की आवश्यकताएँ ही पूरी करता है। (सही/गलत)

v) निर्देशन व्यक्तिगत भिन्नताओं पर ध्यान नहीं देता। (सही/गलत)

vi) निर्देशन कड़े नियमों से बंधा है। (सही/गलत)

vii) निर्देशन सूचना की गोपनीयता बनाए रखता है। (सही/गलत)

viii) निर्देशन कार्यकर्ताओं को विशेष प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती। (सही/गलत)

ix) निर्देशन एक आकस्मिक क्रियाकलाप है। (सही/गलत)

1.4 निर्देशन के प्रकार

निर्देशन एक सतत् प्रक्रिया है और यह जीवन के सभी पहलुओं से संबंधित है। अतः निर्देशन की आवश्यकता जीवन के विभिन्न पहलुओं में पड़ती है। सामान्यतः निर्देशन सेवाओं के मुख्य प्रकार हैं :

1) शैक्षिक निर्देशन

2) व्यावसायिक वृत्तिक निर्देशन

3) वैयक्तिक-सामाजिक निर्देशन

शैक्षिक निर्देशन

यह व्यक्ति की सहायता करने की प्रक्रिया है ताकि वह अपनी शिक्षा के लिए सर्वाधिक अनुकूल परिवेश में अपने आप को जमा सके। यह व्यक्ति के शैक्षिक कार्यक्रम को बुद्धिमत्तापूर्वक योजना बनाने तथा स्थिति के अनुसार स्वयं को ढालने में सहायता करने से जुड़ा है ताकि व्यक्ति सफलतापूर्वक उस कार्यक्रम को आगे बढ़ा सके जिसे समाज अपने लिए और उसके लिए उचित समझता है। यह मुख्यतः पाठ्यक्रमों, पाठ्यचर्या और अध्ययन संबंधी समस्याओं से जुड़ा है। विद्यार्थियों की निम्नलिखित अध्ययन कौशलों को विकसित करने हेतु प्रशिक्षण दिया जा सकता है :

- विभिन्न स्रोतों से शैक्षिक सूचना/आँकड़ों का पता लगाना व उन्हें एकत्र करना
- शैक्षिक आँकड़ों को सुव्यवस्थित करना
- अध्ययन पाठ्यक्रम संबंधी आँकड़ों/सूचना को लिंक करना/उपयोग करना
- नोट्स लेना (टिप्पणियाँ लिखना)
- नोट्स बनाना
- अपेक्षित आँकड़ों को पुनः प्राप्त करना
- सार प्रस्तुत करना
- याद करने की (स्मरण) तकनीकें

इसके अलावा, विद्यालय निर्देशन कार्यक्रम आलोचनात्मक चिंतन विकसित करने में भी विद्यार्थियों की मदद कर सकता है। निर्णय लेने और समस्या-समाधान करने संबंधी कौशल विकसित करने, विद्यालय के माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों को भविष्य में उच्चतर शिक्षा की योजना बनाने हेतु भी निर्देशन की आवश्यकता होती है।

व्यावसायिक/वृत्तिक निर्देशन

उचित व्यवसाय चुनने, इसके लिए तैयारी करने, उसमें प्रवेश करने तथा प्रगति करने में व्यक्ति की सहायता करने की प्रक्रिया व्यावसायिक निर्देशन कहलाता है। व्यावसायिक निर्देशन माध्यमिक विद्यालय, महाविद्यालयों में विद्यार्थियों के शैक्षिक पाठ्यक्रमों के और व्यावसायिक पाठ्यक्रमों के रूप में व्यापारिक तथा वाणिज्यिक श्रेणी के पाठ्यक्रमों से जुड़ा है।

वैयक्तिक-सामाजिक निर्देशन

वैयक्तिक-सामाजिक निर्देशन में सामाजिक, भावात्मक और अवकाश-समय निर्देशन शामिल है। यह स्वास्थ्य, भावात्मक, समायोजन, सामाजिक समायोजन आदि की समस्याओं से

संबंधित है। वैयक्तिक निर्देशन का प्रयोजन व्यक्ति की उसके भौतिक (शारीरिक), भावात्मक, सामाजिक, नैतिक और आध्यात्मिक विकास में सहायता करना है।

अन्य प्रकार

मनोरंजनात्मक (मनोविनोदार्थ) मार्गदर्शन निर्देशन व्यक्ति की वैयक्तिक विशेषताओं के अनुकूल मनोविनोद गतिविधियों को चुनने में व्यक्ति की सहायता करता है। समुदाय निर्देशन में विभिन्न कार्यकलापों के कार्यक्रम की योजना तैयार करने में व्यक्ति के लिए सहायता करना शामिल है। ये क्रियाकलाप व्यक्ति की अपने व्यक्तित्व की विशेषताओं और उसके अन्य कार्यकलापों में संतुलन बनाए रखते हैं।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

4) रिक्त स्थान भरिए :

i) निर्देशन एक ..... प्रक्रिया है।

ii) व्यावसायिक निर्देशन व्यक्ति की ..... चुनने में सहायता करता है।

iii) वैयक्तिक निर्देशन का प्रयोजन व्यक्ति की ..... और ..... विकास में सहायता करना है।

iv) मनोरंजनात्मक (मनोविनोदार्थ) मार्गदर्शन ..... चुनने में सहायता करता है।

v) समुदाय निर्देशन में ..... के कार्यक्रम की योजना बनाना शामिल है।

1.5 उपबोधन का अर्थ

1.5.1 उपबोधन की परिभाषाएँ

उपबोधन, निर्देशन कार्यक्रम का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भाग है। वृत्तिक दृष्टिकोण से उपबोधन का अर्थ, इसके प्रचलित अर्थ से काफी भिन्न है। आइए अब उपबोधन के अर्थ का अधिक बारीकी से अध्ययन करें। इसके लिए हमें उपबोधन की विभिन्न परिभाषाओं का विश्लेषण करना होगा। यह अवधारणा को समझने में सहायक होगा।

एक लोकप्रिय व सर्वाधिक प्रचलित परिभाषा के अनुसार व्यक्तिगत उपबोधन दो व्यक्तियों के बीच एक वैयक्तिक और प्रत्यक्ष (face to face) संबंध है जिसमें उपबोधक अपने संबंध और अपनी विशिष्ट क्षमताओं द्वारा एक ऐसी अधिगम (सीखने) परिस्थिति मुहैया कराता है जिसमें उपबोध्य– जो एक सामान्य व्यक्ति होता है, की स्वयं अपने को और वर्तमान व संभावित भावी स्थितियों को समझने में मदद की जाती है ताकि वह अपनी विशिष्टताओं और क्षमताओं का प्रयोग इस तरह से करें जो उसके स्वयं के लिए संतोषप्रद और समाज के लिए लाभकारी हो और साथ ही साथ वह भावी समस्याओं का समाधान करना और भावी ज़रूरतों को पूरा करना भी सीख सके (टालबर्ट, 1972)।

ब्लैकहैम (1977) के अनुसार, ''उपबोधन सहायता करने का एक अद्वितीय संबंध है जिसमें उपबोध्य को उसकी इच्छानुसार सीखने, सोचने, चिंतन करने, अनुभव करने और बदलने के तरीकों के लिए अवसर प्रदान किए जाते हैं।''

शर्तज़र एंड स्टोन (1974) का मानना है कि, ''उपबोधन एक अन्तःक्रियात्मक प्रक्रिया है जो स्वयं की और पर्यावरण की सार्थक समझ को सुगम बनाती है जिसके परिणामस्वरूप वह भावी व्यवहार के लिए लक्ष्यों व मूल्यों को स्थापित और/या उनका स्पष्टीकरण कर सकता है।

कौटल एंड डाउनी (1970) ने उपबोधन को इस तरह परिभाषित किया है : ''वह प्रक्रिया जिसके द्वारा उपबोधक अपने उपबोध्य को उसके स्वयं के बारे में तथा दूसरों के साथ उसकी अन्तःक्रिया के विषय में जानकारी का सामना करने, समझने और स्वीकार करने में मदद करता है ताकि वह अपने जीवन के विभिन्न विकल्पों के बारे में प्रभावशाली (सार्थक) निर्णय ले सके।''

स्टेफायर और ग्रांट (1972) के अनुसार, उपबोधन प्रशिक्षित उपबोधक और उपबोध्य के बीच व्यावसायिक संबंध को निरूपित करता है। यह संबंध व्यक्ति-से-व्यक्ति का होता है हालांकि इसमें कई बार दो से अधिक व्यक्ति भी हो सकते हैं। यह उपबोध्य को उसके जीवन अन्तरालों से संबंधी मतों/विचारों को समझने व उन्हें स्पष्ट करने में मदद के लिए है ताकि वह अपनी अनिवार्य प्रकृति के अनुरूप उपलब्ध क्षेत्रों में सार्थक और विवेकपूर्ण चयन कर सके। यह परिभाषा दर्शाती है कि उपबोधन एक प्रक्रिया है, दूसरे शब्दों में कहें तो एक संबंध है जिसे लोगों को चयन करने में मदद के लिए तैयार किया जाता है। वे शिक्षा (अधिगम), व्यक्ति-विकास और स्व-ज्ञान जैसे विषयों में बेहतर चयन कर सकते हैं, जिन्हें बेहतर भूमिका बोध और ज्यादा प्रभावी भूमिका व्यवहार में परिवर्तित किया जा सकता है।

2010 में आयोजित अमेरिकन काउंसलिंग ऐसोसिएशन सम्मेलन में भाग लेने वाले 31 संगठनों में से 29 ने उपबोधन की इस परिभाषा को सर्वसम्मति से सहमति प्रदान की :

उपबोधन एक व्यावसायिक संबंध है जो विविध व्यक्तियों, परिवारों और समूहों को मानसिक स्वास्थ्य, कल्याण, शिक्षा और वृत्तिक लक्ष्य प्राप्त करने के लिए सशक्त बनाता है (कैप्लन, 2014, पृ. 366)।

उपबोधन चिकित्सीय परिवेश में एक अन्तःक्रिया है जो मुख्यतः संबंधों, धारणाओं और व्यवहार (भावनाओं सहित) के बारे में चर्चा करने पर केन्द्रित होती है जिसके माध्यम से बच्ची की अनुभव की गई समस्या पर प्रकाश डाला जाता है या उपयुक्त या उपयोगी तरीके से रचित या पुनःरचित किया जाता है और जिससे नए हल उत्पन्न होते हैं और समस्या एक नया अर्थ धारण/ग्रहण कर लेती है (बोर. 2002, पृ. 15)।

उपबोधन स्व-ज्ञान, भावनात्मक स्वीकृति और वृद्धि तथा व्यक्तिगत संसाधनों के अनुकूलतम विकास को बढ़ावा देने के लिए संबंधों का कुशल और सैद्धांतिक प्रयोग है। इसका समग्र लक्ष्य ज्यादा संतोषप्रद और संसाधनपूर्ण तरीके से रहने के लिए काम के अवसर प्रदान करना है (ब्रिटिश एसोसिएशन फॉर काउंसलिंग, 1991, पृ.1)।

उपयुक्त विभिन्न परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि ''उपबोधन एक प्रकार का संबंध होता है। इसमें व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित और सक्षम उपबोधक और उपबोध्य के आपसी संबंधों का समावेश होता है। स्नेह, विश्वास, आपसी समझ और स्वीकृति इसकी विशेषताएँ होती हैं।

1.5.2 उपबोधन और संबंद्धित क्षेत्र

उपबोधन को बेहतर तरीके से समझने में, अन्य क्षेत्रों से जुड़े इसके संबंधों के अध्ययन आवश्यक हैं।

उपबोधन और साइकोथेरेपी (मनोचिकित्सा)

'उपबोधन' और 'मनोचिकित्सा' का प्रयोग अक्सर समानार्थी माने जाते हैं, इसीलिए एक-दूसरे के लिए इनका प्रयोग किया जाता है। उपबोधन के लिए मनोचिकित्सा का और मनोचिकित्सा के लिए उपबोधन शब्द का प्रयोग किया जाता है। दोनों का अर्थ समान है या इनमें अंतर है, इसके विषय में व्यावसायिकों का मत एक नहीं है। तथापि, अधिकांश साहित्य में वर्णित है कि उपबोधन से अभिप्राय अल्पकालिक मानसिक स्वास्थ्य उपचार है जबकि मनोचिकित्सा के अंतर्गत दीर्घकालिक परामर्श और उपचार शामिल है। उपबोधन यहाँ और अभी की स्थिति में उत्पन्न भावनात्मक परेशानी है। उदाहरण के लिए, माता-पिता को गंवा चुके बच्चे, परीक्षा में फेल होने वाले बच्चे या गृह-कलह अथवा भूकंप जैसी जोखिमपूर्ण आपदा का सामना कर चुके बच्चों के समूह की संवेगात्मक परेशानी या व्यथा पर काबू पाने के लिए परामर्श-सत्र (उपबोधन सत्र) लाभप्रद होंगे और जीवन के आगे बढ़ने में सहायक होंगे। मनोचिकित्सा उस स्थिति में उपयोगी होता है जहां व्यक्ति काफी लंबे समय से निरंतर संवेगात्मक परेशानी और व्यथाग्रस्त है और यह उसके व्यवहार में प्रकट होने लगता है। ऐसे मामलों में मनोचिकित्सा व्यक्ति को स्वयं अपनी समस्या से निपटने और रोगी के मन में बैठी घटनाओं, मनोवृत्तियों और विचार प्रक्रिया में गहराई से झांकने में व विचार करने में मदद करता है, जो उसकी मनःस्थिति का कारण बनी। संक्षेप में, मनोचिकित्सा व्यक्ति को स्वयं को समझने और परेशानियों के मूल कारणों को सुलझाकर अपने जीवन के अनुभवों के बारे में नवीन दृष्टिकोण विकसित करता है।

व्यावसायिक प्रशिक्षण, अन्य सहकर्मियों की वरीयताएँ और किए गए कार्य इस बात को प्रभावित कर सकते हैं कि कौन-सी व्यावसायिक उपाधि–'उपबोधक' या 'मनोचिकित्सक' चुनी जाए। विद्यालयी परिवेश में, उपबोधन में मनोचिकित्सा या मनोचिकित्सा में उपबोधन शामिल हो सकता है। कुछ केवल सूचना देने और अपबोधन में निहितार्थों का ही कार्य करते हैं। उन्हें बच्चों का उपचार करने के लिए मनोचिकित्सा उपागमों और तरीके का प्रयोग नहीं करना चाहिए। अप्रशिक्षित अपबोधक ज्यादा प्रभावी नहीं हो सकते और बच्चों को क्षति भी पहुँचा सकते हैं।

उपर्युक्त उल्लिखित भिन्नताओं के बावजूद, इन दोनों क्षेत्रों को अलग करना काफी कठिन कार्य है। इन दोनों क्षेत्रों में भिन्नताओं की तुलना में अतिव्याप्ति अधिक है। इन दोनों में उपबोध्य/सेवार्थी और चिकित्सक/उपबोधक के बीच के संबंधों को अधिक महत्त्व दिया जाता है। जटिल प्रकृति की संवेगात्मक समस्याओं से निपटने में, उपबोधक घनिष्ठ रूप से मनोचिकित्सा का अनुप्रयोग करता है।

निर्देशन और उपबोधन

निर्देशन और उपबोधन दोनों अंतरपरिवर्त्य रूप में प्रयुक्त होते हैं। आम आदमी और यदा-कदा उपबोधक भी इनका प्रयोग इस प्रकार करते हैं– जैसे कि ये समानार्थक हैं। लेकिन यह सही नहीं है। दोनों एक-दूसरे से जुड़ी प्रक्रियाएँ हैं लेकिन इन्हें समरूपी नहीं कहा जा सकता। निर्देशन अपेक्षाकृत अधिक व्यापक प्रक्रिया है जिसमें उपबोधन भी शामिल है। निर्देशन सेवाओं के अंतर्गत उपबोधन के अतिरिक्त अन्य बहुत-सी सेवाएँ शामिल हैं। हम कह सकते हैं कि समूचे निर्देशन कार्यक्रम में उपबोधन सर्वाधिक विशिष्ट और महत्त्वपूर्ण सेवा है।

अनुदेश और उपबोधन

उपबोधन से संबद्ध अन्य महत्त्वपूर्ण शब्द हैं, अनुदेश। अनुदेश और उपबोधन के बीच कुछ मूलभूत अंतर हैं। सामान्यतौर पर अनुदेश प्राप्तकर्ता, अनुदेशों का अनिवार्य रूप से अनुसरण करता है जबकि उपबोधन के अंतर्गत उपबोध्य उपबोधक की बातों को मानने के लिए बाध्य नहीं होता। वास्तव में उपबोधन के अंतर्गत किसी चीज को करने की बात नहीं कही जाती। इसी प्रकार से यद्यपि अनुदेश देने का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का विकास करना है और तात्कालिक उद्देश्य विषय, कौशल आदि की शिक्षा देना है लेकिन उपबोधन के मामले में यह सिद्धांत लागू नहीं होता। जहाँ एक ओर अनुदेशात्मक कार्यक्रम समयबद्ध और सुव्यवस्थित अनुदेशात्मक कार्यक्रम होता है, वहीं, दूसरी ओर उपबोधन न तो समयबद्ध है न ही व्यवस्थित।

सलाह और उपबोधन

कभी-कभी उपबोधन से अभिप्राय सलाह देना समझा जाता है। इस भ्रांति को दूर करना आवश्यक है। क्या किया जाए यह जानने के लिए सलाह ली जाती है तथा सलाह इस अपेक्षा के साथ दी जाती है कि जो बताया गया है वह किया जाएगा। सलाह लेने वाला व्यक्ति किए जाने वाले कार्य और उसके परिणामों के लिए वास्तव में उत्तरदायी नहीं होता और अपने कृत्य से संबद्ध सभी कारकों को समझना भी उसके लिए आवश्यक नहीं होता। जबकि उपबोधन में सभी संबद्ध कारकों को भली-भांति समझना अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है। सलाह देने में, सलाहकार संबद्ध व्यक्ति के लिए आवश्यक निर्णय लेता है जबकि उपबोधन के अंतर्गत निर्णयन मुख्य रूप से उपबोधन प्राप्तकर्ता का ही संपूर्ण दायित्व होता है। इसलिए उपबोधक भी अपने सुझाए गए उपायों के लिए पूर्णतया उत्तरदायी होता है। छोटी-सी मुलाकात या किसी विशेष स्थिति के अंतर्गत सलाह दी जा सकती है लेकिन, जैसा कि उपबोधन के संदर्भ में देखा गया है, यह एक प्रक्रिया है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

5) बताइए निम्नलिखित कथन 'सही' हैं अथवा 'गलत'।

i) उपबोधन एक सतत् प्रक्रिया है।

ii) उपबोधन का उद्देश्य रोगी की मानसिक दशा में सुधार लाना है।

iii) उपबोधन के अंतर्गत उपबोधक और उपबोध्य में आकस्मिक संबंध स्थापित होता है।

iv) उपबोधक बनने के लिए, मूलभूत चिकित्सा पृष्ठभूमि का होना आवश्यक हैं।

v) निर्देशन और उपबोधन दोनों समानार्थक शब्द हैं।

vi) उपबोधन का एक उद्देश्य मुवक्किल के लिए निर्णय लेना है।

6) i) मनश्चिकित्सा और उपबोधन के बीच की दो समानताओं का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

ii) उपबोधन और अनुदेश के बीच का मुख्य अंतर कौन-सा है?

.....

.....

.....

.....

.....

iii) उपबोधन को परिभाषित कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

iv) सलाह देना किस प्रकार उपबोधन देने से भिन्न हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

1.6 उपबोधन के सिद्धांत

उपबोधन विभिन्न सिद्धांतों पर आधारित है। ये सिद्धांत हैं :

1) उपबोधन एक प्रक्रिया है और उपबोधक को इस प्रक्रिया की जानकारी भली-भांति होनी चाहिए। इसके ज्ञान के अभाव में निराशा ही हाथ लगती है।

2) उपबोधन कोई भी प्राप्त कर सकता है, विशेषतौर पर स्कूलों में सभी या किन्हीं विशेष समस्याओं से संबद्ध विद्यार्थी या कोई भी विशेष विद्यार्थी इसका लाभ उठा सकता है। जैसाकि हमने पहले बताया था, स्कूली जीवन में उपबोधन की प्रकृति उपचारी नहीं है बल्कि अधिक विकासात्मक और उपचारी है।

3) उपबोधन कुछ मूलभूत मान्यताओं पर आधारित है। ये हैं :

   क) इस जगत का हर मनुष्य अपना उत्तरदायित्व स्वयं निभाने में सक्षम है।

   ख) हर मनुष्य को लोकतंत्र के सिद्धांतों के आधार पर अपना रास्ता चुनने का अधिकार है।

4) उपबोधक आत्म-वरण के अधिकार से उपबोध्य को वंचित नहीं करता बल्कि उसकी रुचि से जुड़े कार्यों को सुगम बनाता है। उपबोधक को चाहिए कि यह उपबोध्य को उसी रूप में स्वीकार करे जैसा वह है, और उसका सम्मान करें।

5) उपबोधन से आशय सलाह देना नहीं है।

6) उपबोधन का अर्थ उपबोध्य के लिए चिंतन करना नहीं है बल्कि उसे इस योग्य बनाना है कि वह उचित चिंतन कर सके।

7) उपबोधन समस्या का समाधान करना नहीं है। उपबोधक का कार्य उपबोध्य की समस्या के समाधान में सहायता करना है।

8) उपबोधन से आशय साक्षात्कार करना नहीं है बल्कि सेवार्थी के साथ ऐसे बातचीत करना है जिससे वे अपने-आप को समझ सकें।

9) उपबोधक को व्यक्तिगत भिन्नताओं का निर्धारण करना चाहिए और इन्हें ध्यान में रखना चाहिए।

10) उपबोधक को चाहिए कि वह सेवार्थी की अभिवृत्ति आदि में ऐसे परिवर्तन लाए कि आत्म-आलोचना के साथ-साथ वह, किसी भी आलोचना का सामना कर सके।

11) उपबोधक मात्र एक संसाधक या उत्प्रेरक का कार्य करता है। वह ऐसा वातावरण तैयार करता है जो उन्मुक्त और सुरक्षित हो। वह अपने स्नेहपूर्ण व्यवहार से उपबोध्य के साथ ऐसा संबंध स्थापित करता है जिससे वह अपने दोषों को समझते हुए, बेहतर तरीके से आत्म-सुधार करता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

7) निम्नलिखित कथनों में से जो ठीक हैं उन पर सही (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) उपबोधक को उपबोध्य में अपनी सोच विकसित करने का प्रयास करना चाहिए।

ii) विद्यालय में उपबोधन ऐसे विद्यार्थियों को दिया जाता है जो समस्याओं से घिरे हों।

iii) उपबोधन देने के दौरान उपबोधक उत्प्रेरक के रूप में कार्य करता है।

iv) उपबोधन से आशय उपबोध्य के लिए सोच विकसित करना और निर्णयों का निर्धारण करना है।

8) उपबोधन की मूलभूत मान्यताओं का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

1.7 उपबोधन के प्रयोजन

कई विद्वानों का मानना है कि सभी बुराइयों को उपबोधन से दूर किया जा सकता है। लेकिन यह सत्य नहीं है। विभिन्न व्यक्तियों की इस संदर्भ में राय भी भिन्न-भिन्न है। अनेक बार उपबोधन के माध्यम से अवास्तविक कार्यों को पूरा किए जाने की आशा की जाती है। इसका मुख्य कारण उपबोधन का अर्थ भली-भांति न समझना है और इसी वजह से उपबोधन के वास्तविक लक्ष्यों की पहचान भी नहीं हो पाती। सामान्य तौर पर उपबोधक द्वारा उपबोधन के संदर्भ में स्वीकृत कुछ मुख्य लक्ष्य हैं :

1) **सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य की उपलब्धि**

कोई भी व्यक्ति मानसिक रूप से स्वस्थ तभी कहलाता है जब वह अन्य व्यक्तियों के साथ सार्थक सहसंबंध स्थापित करने और संतोषप्रद जीवन जीने के योग्य हो। मनुष्य ऐसा हो कि वह दूसरों को प्यार करे और दूसरे उसे प्यार कर सकें। उपबोधन का एक प्रयोजन व्यक्ति को इस अवस्था की प्राप्ति में सहायता करना है।

2) **समस्या-समाधान**

उपबोधन का दूसरा प्रयोजन, व्यक्ति को समस्या या कठिन परिस्थिति से बाहर निकालना है। लेकिन ध्यान रखें कि इस कार्य में उपबोधक को केवल व्यक्ति की सहायता करनी है, क्योंकि अंत में समस्याओं का समाधान व्यक्ति को स्वयं ही करना होता है।

3) **निर्णयन के लिए उपबोधन**

जीवन में सफल होने के लिए सही और समय पर निर्णय लेने की योग्यता अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है। उपबोधन का मुख्य उद्देश्य स्वतंत्र निर्णय लेने में व्यक्ति को सक्षम बनाना है। उपबोधक व्यक्ति के सही लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए आवश्यक जानकारी या उद्देश्य को स्पष्ट करके, उसकी सहायता कर सकता है लेकिन अंतिम निर्णय उपबोध्य को स्वयं लेने चाहिए।

4) **व्यक्तिगत प्रभाविता को सुधारना**

प्रभावी व्यक्ति वही है जो आवेग को नियंत्रित कर सके, सृजनात्मक ढंग से सोच सके और समस्याओं को पहचानने, सुस्पष्ट करने और हल करने में सक्षम हो। देखा गया है कि ये सभी लक्ष्य एक-दूसरे से जुड़े हैं। इन सभी की अलग पहचान होते हुए भी, ये परस्पर व्यापी है तथा अन्योन्याश्रित हैं।

5) **परिवर्तन के लिए सहायता करना**

विकास के लिए, परिवर्तन सदैव आवश्यक माना जाता है। व्यक्ति की मनोवृत्ति, विचारधारा या व्यक्तित्व में परिवर्तन लाने में उपबोधन सहायक होता है।

6) **व्यवहार परिवर्तन**

उपबोधन का अन्य उद्देश्य व्यवहार परिवर्तन में सहायता प्रदान करना है। प्रभावी और अच्छे समायोजन के लिए अवांछनीय व्यवहार या आत्मदोषी व्यवहार को दूर करना होगा और वांछनीय व्यवहार की प्राप्ति अति आवश्यक है। व्यवहारमूलक उपबोधक इस दृष्टिकोण के प्रमुख प्रतिपादक हैं।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

9) बताइए निम्नलिखित कथन सत्य है या असत्य।

i) उपबोधन का एक ध्येय अभिवृत्ति परिवर्तन करना है।

ii) सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य का अर्थ, शरीर में मानसिक रोग का न होना है।

10) उपबोधन के तीन लक्ष्यों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

1.8 उपबोधन के प्रमुख उपागम

कोई भी व्यवसाय कुछ निश्चित धारणाओं और मान्यताओं पर आधारित होता है और सामान्यतौर पर इन्हें सिद्धांत कहा जाता है। उपबोधन भी इसका अपवाद नहीं है। यद्यपि उपबोधन के क्षेत्र में, विभिन्न विस्तृत सिद्धांतों को प्रस्तुत किया गया है, फिर भी किसी एक सिद्धांत से उपबोधन के सभी पहलुओं पर प्रकाश नहीं डाला जा सकता। इसलिए उपागम (शब्द) को सभी ने स्वीकारा है क्योंकि यह अपेक्षाकृत अधिक व्यापक शब्द है।

उपागम उपबोधन प्रक्रिया के लिए एक संगत परिभाषा प्रदान करता है जिसमें उपबोधन लक्ष्यों का स्पष्ट कथन तथा उपबोधन तकनीक विशेष के चयन का तर्काधार भी सम्मिलित होता है।

उपबोधन के तीन प्रमुख उपागम हैं : निदेशात्मक उपागम, अनिदेशात्मक उपागम और संकलनात्मक उपागम।

1.8.1 निदेशात्मक उपागम

जैसा कि नाम में ही निहित है, यह उपागम उपबोधक की अधिक सक्रिय भूमिका को उजागर करता है। उपबोधक निदेशन की विभिन्न विधियों के प्रयोग द्वारा उपबोध्य को सहायता प्रदान करता है ताकि वह सही समाधान खोजने में सफल हो सकें। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक निदान में अपने विशिष्ट ज्ञान, अनुभव और आँकड़ों की व्याख्या के द्वारा उपबोधक अपने उपबोध्य को संबद्ध समस्याओं के शीघ्र उपचार में सहायता प्रदान करता है।

इस उपागम के प्रतिपादक, ई.जी. लियमसन् के अनुसार, ''उपबोधक द्वारा दिए जाने वाले निर्देशन की आवश्यकता, उपबोध्य व्यक्ति की स्व-नियमन (self-regulation) की क्षमताओं के विलोमानुपाती होती है।'' यद्यपि जैसे-जैसे उपबोधन प्रक्रिया आगे बढ़ती है, समस्या को सुलझाने का मुख्य उत्तरदायित्व उपबोधक का ही होता है, लेकिन उपबोध्य को भी समस्या का हल खोजने के प्रति अधिकाधिक प्रोत्साहित किया जाता है ताकि वह आत्म-निर्देशन का

अधिक दायित्व स्वयं ले सके। यह उपागम उपबोध्य और उपबोधक के मध्य एक अधिक वैयक्तिक संबंध की अपेक्षा रखता है। इसके लिए उपबोधक उपबोध्य के साथ मनोवैज्ञानिक तादात्मय स्थापित करने का प्रयत्न करता है ताकि वह उपबोध्य को गहन रूप से समझ सके।

उपबोधन के चरण

निदेशात्मक उपबोधन के छः चरण हैं। ये हैं :

क) **विश्लेषण**

इसके अंतर्गत उपबोध्य को भली-भांति समझने के लिए उससे जुड़े विभिन्न स्रोतों के आँकड़े इकट्ठे किए जाते हैं। इसमें मनोवैज्ञानिक परीक्षणों आदि का संचालन सम्मिलित होता है। तथापि इस प्रकार के परीक्षण और अन्य औपचारिकताएँ उन दोनों के संबंधों में बाधक नहीं बननी चाहिए। इसका महत्त्व उस सीमा तक ही हो जिस सीमा तक एक उपबोधक अपने उपबोध्य को भली-भांति समझ सके।

ख) **संश्लेषण**

इसका अर्थ प्राप्त किए आँकड़ों के संक्षेपण और उसे संगठित करने से है जिससे उपबोध्य के गुणों, दायित्वों, समायोजनों और कुसमायोजनों आदि का पता लगाया जा सके। इन आँकड़ों में मनोवैज्ञानिक परीक्षणों से प्राप्त आँकड़ों को भी शामिल किया जाता है।

ग) **निदान**

इस चरण में ऐसे निष्कर्षों को सूत्रबद्ध किया जाता है जो विद्यार्थियों द्वारा दर्शाई जाने वाली समस्याओं और उनकी प्रकृति पर आधारित होते हैं। मनोवैज्ञानिक परीक्षणों और प्रश्नावली आदि के परिणामों के आधार पर ऐसे निष्कर्ष प्राप्त किए जाते हैं।

घ) **प्राज्ञान**

इसके अंतर्गत उपयुक्त निष्कर्षों के आधार पर विद्यार्थी की समस्या के भावी (संभावित) समाधानों को उजागर किया जाता है।

च) **उपबोधन**

समूची प्रक्रिया में उपबोधन सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण चरण है जिसमें काफी समय लगता है। यह ऐसा पहलू है जहाँ उपबोधक की विषय विशेषज्ञता सर्वाधिक अपेक्षित होती है। यह अत्यंत व्यक्तिगत अध्यापन-अधिगम प्रक्रिया है। यह ऐसा प्रत्यक्ष शिक्षण हो सकता है जो विद्यार्थी की समस्याओं को उज़ागर करने के लिए सुस्पष्ट व्याख्या करके और विद्यार्थी की मनोवृत्ति, रुचि आदि की खोज करने में भी सहायता प्रदान करके दिया जा सकता है। कई बार उपबोधक अपने उपबोध्य से मैत्रीपूर्ण रूप में बातचीत करता है। इसमें प्रायोगिक सत्र भी शामिल हो सकते हैं जहाँ उपबोधक के स्नेहपूर्ण व्यवहार से उपबोध्य अपने अंतिम लक्ष्य को भली-भांति समझ पाता है। अतः अपनी सक्षमताओं और परिस्थितियों के आधार पर उपबोध्य एक निश्चित सीमा तक आत्म-संचालन के योग्य हो जाता है। इस प्रकार से प्राप्त सफलता उसके सफल व्यवहारों को प्रबलित करती है जिसके फलस्वरूप वह जीवन में एक समायोजित जीवन-शैली स्थापित कर लेता है।

अतः उपबोधन में शामिल हैं– (क) विद्यार्थी की आत्म-मूल्यांकन में सहायता करना अर्थात् विद्यार्थी की अभिरुचियों, क्षमताओं और उद्देश्यों को पहचानना; (ख) विद्यार्थी की इस प्रकार सहायता करना जिससे विद्यार्थी अपनी अभिनिर्धारित क्षमताओं और योग्यताओं का सदुपयोग कर एक कार्य योजना बना सके; और (ग) अंत में अनुकूली जीवन-शैली का निर्माण करना।

उपबोध्य को आत्म-मूल्यांकन में सहायता करने के लिए दो प्रकार के आँकड़े आवश्यक हैं– स्वप्रेक्षित आंकड़े और बाह्य मूल्यांकन से प्राप्त आंकड़े। कुछ प्रकार की जानकारी का सर्वोत्तम माध्यम उपबोध्य स्वयं ही होता है। परंतु विश्लेषण और नैदानिक सूत्रों से प्राप्त जानकारी को उपबोधक को स्वयं प्रेषित करना चाहिए। परंतु उपबोध्य को कुल ज्ञान देना चाहिए लेकिन इस कार्य में उसे सावधानी बरतनी चाहिए कि वह उपबोध्य को आभास न हो कि वे दोनों ही अज्ञानता की समान अवस्था में हैं। उपबोधक को विश्लेषण/निदान आदि से संबद्ध चरणों की विस्तृत जानकारी उपबोध्य को नहीं देनी चाहिए। हाँ, उसे समग्र प्रक्रिया से अवगत अवश्य कराया जाना चाहिए। उपबोधक का व्यवहार हठधर्मी नहीं होना चाहिए, परंतु सैद्धांतिक ज्ञान, अनुभव और निर्णयन के आधार पर उपबोध्य की सहायता करनी चाहिए। यदि उपबोधक दर्शाता है कि यह निर्णय लेने में सक्षम नहीं है तो वह उपबोध्य का विश्वास, प्राप्त नहीं कर सकेगा। उसे लगातार चर्चा करते रहना चाहिए। इसके लिए उपबोधक को समय-समय पर उपबोध्य के मुख और चेहरे के हाव-भाव से संकेत लेने चाहिए। इस प्रकार उपबोधक तथा उपबोध्य के मध्य सहयोग स्थापित होना चाहिए ताकि मामले की वैध व्याख्या की जा सके तथा अनुकूल व्यवहार परिवर्तन का प्रभावी कार्यक्रम बनाया जा सके।

छ) **अनुवर्तनः** यह चरण निदेशात्मक उपबोधन का अत्यंत महत्त्वपूर्ण चरण है। हो सकता है, अभी उपबोध्य अपने उपबोधक की सहायता से समस्या को हल कर लें। तथापि अनुवर्तन की आवश्यकता यह सुनिश्चित करने के लिए है कि यदि कोई नई समस्या आती है या पिछली समस्या पुनः आती है तो उपबोध्य इस स्थिति से निपटने योग्य हुआ है या नहीं। उपबोध्य द्वारा उपबोधक से उसकी शक्ति और रुचियों को जानने और जीवन में आगे बढ़ने में मदद करनी होगी।

1.8.2 अनिदेशात्मक उपागम

इस उपागम में उपबोधक ऐसा वातावरण प्रदान करता है जिसमें सेवार्थी बिना किसी भय या दबाव के पूर्णतया मुक्त अवस्था में अपने विचारों और अनुभूतियों की खोज करता है। उपबोध्य को उसकी क्षमताओं से अवगत करा कर उपबोधक उत्प्रेरक का कार्य करता है। इस उपागम में आँकड़ों का स्रोत उपबोध्य स्वयं होता है और व्यवहार में बदलाव लाने का अंतिम उत्तरदायित्व उपबोधक की बजाए सेवार्थी का होता है। उपबोधक को इतना निष्क्रिय भी नहीं होना चाहिए कि उपबोध्य/सेवार्थी लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयास करना बंद कर दें और उपबोधक को इतना सक्रिय भी नहीं होना चाहिए कि सेवार्थी की बजाए उपबोधक स्वयं मुख्य केंद्र बन जाए।

केंद्रीय परिकल्पनाएँ

कार्ल रोजर्स– जो सेवार्थी केंद्रित उपागम के प्रतिपादक हुए हैं, ने केंद्रीय परिकल्पना को इस प्रकार सूत्रबद्ध किया है :

क) व्यक्ति के भीतर कुछ ऐसी प्रच्छन्न क्षमता होती है जिससे अवगत होने पर वह अपने उन पक्षों को समझ सकता है जो उसके असंतोष, दुश्चिंता तथा कष्ट का कारण बनते

हैं। इसके अतिरिक्त वह क्षमता भी होती है जिससे वह अपने-आपको पहचान सकता है तथा जीवन के साथ अपने संबंधों को स्वानुभूति और परिपक्वता की दिशा में ले जा सकता है तथा इसके फलस्वरूप उसे आंतरिक सुख का आभास होता है।

ख) इस क्षमता का आभास तब होगा, जब मनोचिकित्सक ऐसा मनोवैज्ञानिक पर्यावरण निर्मित करें जिसमें सेवार्थी को एक अप्रतिबंधित सार्थक मानव के रूप में स्वीकारा जा सके, जिसमें उसकी वर्तमान भावनाओं तथा संप्रेषणों को समझने का एक निरंतर संवेदनशील प्रयास संभव हो, तथा इस तद्नुभूतिक बोध को उपबोध्य तक पहुँचाने का एक सतत् प्रयास किया जाए।

ग) इसके आगे यह परिकल्पना की गई है कि इस प्रकार के सौहार्दपूर्ण और भयरहित वातावरण में उपबोध्य स्वयं को पुनःसंगठित कर सकेगा।

घ) इस प्रकार उपबोध्य के साथ चिकित्सापरक संबंधों से प्राप्त समायोजित जीवन-शैली वास्तविक जीवन में भी समस्त रूप में सामान्यीकृत (लागू) हो जाएगी।

अतः इस सिद्धांत का मुख्याधार है कि उपबोधन स्थिति के सौहार्दपूर्ण व स्वीकार्य वातावरण में सेवार्थी अपने स्व और अनुभूति के मध्य गलत धारणाओं तथा असंगतताओं को ठीक करने में सक्षम हो जाता है। उपबोधक में कुछ ऐसे व्यक्तिगत गुण होने चाहिए– जैसे संगतता (उपबोधक सही और संपूर्ण व्यक्ति होता है), अप्रतिबंधित सकारात्मक आदर (उपबोधक की ऐसी अभिवृत्ति जहाँ उपबोध्य के विचारों, भावनाओं या व्यवहार को बिना अच्छा या बुरा मूल्यांकित किए स्वीकार कर लिया जाता है) तथा तद्नुभूति (उपबोधक की वह योग्यता जिसके द्वारा वह उपबोध्य के संसार को जान लेता है या वैसा ही अनुभव करता है जैसा उपबोध्य अनुभव करता है)।

तथापि वह सिद्धांत उपबोधक में कुछ विशेष गुणों के होने को कम महत्त्व देता है– जैसे कि उसका व्यवहारकुशल होना और समस्या निवारण तकनीकों या विकासात्मक प्रक्रियाओं में निपुण होना। इसके अतिरिक्त रोजर्स ने निदान परीक्षण या ऐसे अन्य तकनीकों के प्रयोग को यह कहकर अस्वीकार कर दिया कि इनके द्वारा सेवार्थी की स्वाभाविक वृद्धि में बाधा पड़ती है। इसके बजाए वह इस बात पर बल देता है कि उपबोधक को चाहिए कि वह उपबोध्य की बातों को ध्यान से सुनें, उनका अर्थ निकाले उसकी टिप्पणियों पर विचार करें, न कि सीधे प्रश्न करें या व्याख्या करें।

1.8.3 संकल्पनात्मक उपागम

इस उपागम के अंतर्गत उपबोधक विभिन्न उपलब्ध दृष्टिकोणों से प्राप्त संकल्पनाओं के आधार पर उपबोधन प्रदान करता है। वह विशिष्ट सैद्धांतिक अध्ययन का विशेष रूप से अनुसरण नहीं करता बल्कि किसी विशेष विचारधारा पर जोर न देते हुए ऐसी कार्यप्रणाली और तकनीकों का प्रयोग करता है, जो उसकी राय में किसी भी विशेष उपबोध्य के मामले में सर्वाधिक प्रभावी है।

एफ.सी. थॉर्न के अनुसार, ''संकलनवाद, उपबोधन के क्षेत्र में सर्वाधिक व्यवहार्य और उपयुक्त उपागम है क्योंकि जिस प्रकार किन्हीं दो व्यक्तियों को समतुल्य नहीं माना जा सकता, उसी प्रकार से व्यक्तित्व के किसी एक सिद्धांत के माध्यम से व्यक्तियों के विभिन्न व्यवहारमूलक प्रतिरूपों की व्याख्या नहीं की जा सकती। इसी प्रकार से, हर समस्या अपने-आप में अनोखी होती है और हर मामले में प्रयुक्त तकनीक या उपागम भी आवश्यक नहीं है कि किसी दूसरे मामले में भी समान रूप से प्रभावी हो। इसलिए अलग-अलग मामलों की प्रकृति के अनुसार

उपागम का अनुप्रयोग किया जाता है और संकलनवाद इस विचारधारा को सहमति प्रदान करता है।''

संकलनवादी दृष्टिकोण बताने में थॉर्न द्वारा 'समन्वित मनोचिकित्सा' शब्द का प्रतिपादन किया गया। थार्न का सैद्धाांतिक आधार निम्नलिखित पूर्वधारणाओं पर आधारित है :

i) सभी मनोवैज्ञानिक स्थितियाँ, समाकलन की विसंगतियों के उदाहरण हैं और मनोवैज्ञानिक उपबोधन का लक्ष्य इस समाकलन प्रक्रिया को सुदृढ़ करना है ताकि आत्म-अभिव्यक्ति के उच्चस्तरों को विकसित किया जा सके। अतः वर्तमान वास्तविक स्थिति में व्यक्ति ही केंद्र बिंदु होता है।

ii) चिकित्सक के लिए पता लगाना आवश्यक है कि जीवन से जुड़े उत्तरदायित्वों को निभाने में क्या उपबोध्य के पास आवश्यक संसाधन हैं या नहीं।

iii) यदि चिकित्सक संतुष्ट हो जाता है तो वह उपबोध्य को कुछ रोज़ाना के कार्य शुरू करने का उत्तरदायित्व सौंप देता है।

iv) चिकित्सा के अधीन उपबोध्य को इस प्रकार प्रशिक्षित किया जाता है जिससे वह स्वयं को संचालित करने के आवश्यक कौशल सीख सके।

थॉर्न ने मनोचिकित्सा की बजाए ''मनोवैज्ञानिक तरीके से मामले को सुलझाना/निपटना'' पदांश का प्रयोग किया है और इस प्रक्रिया में निम्नलिखित चरण शामिल हैं :

क) सेवार्थी की समस्याओं की विस्तृत जानकारी प्राप्त करने के लिए क्रमबद्ध विश्लेषण/निदान।

ख) उपबोधन की विभिन्न विधियों को उनके गुण और दोष के आधार पर समझना।

ग) लक्षणों की तुलना में अन्तर्निहित कारणों पर अधिक ध्यान देना।

घ) उपबोध्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए, विशिष्ट विधि चुनना।

च) प्राप्त परिणामों के आधार पर विधि का मूल्यांकन।

छ) वैज्ञानिक तरीके से आँकड़ों का विश्लेषण और परिणाम का मूल्यांकन करना।

आरनोल्ड लेजारस द्वारा प्रतिपादित 'बहुविधा (बहुरूपात्मक) चिकित्सा' संकलनात्मक उपागम का अन्य उदाहरण है। इसके अनुसार व्यक्तित्व प्रकार्यों के सात प्रमुख क्षेत्र हैं : (1) व्यवहार (अवलोकनीय कार्यवाही), (2) भावात्मक (संवेगात्मक), (3) संवेदन (भावनाएँ), (4) बिंब (कल्पनाशक्ति), (5) संज्ञान (चिंतन प्रक्रिया), (6) अंतःवैयक्तिक संबंध (सामाजिक), और (7) औषध/जैविक (भौतिक)। इन सभी विशेषताओं को शामिल करने में आरनोल्ड ने आधारभूत पहचान पत्र (Basic ID) परिवर्णी शब्द (acronym) का प्रयोग किया।

इस उपागम का महत्त्वपूर्ण लक्षण है कि हर व्यक्ति अपने आधारभूत पहचान पत्र (Basic ID) के संदर्भ में अद्वितीय है। इसकी यह धारणा है कि दुरनुकूलित व्यवहार गलत अधिगम का परिणाम है और उपबोधन का लक्ष्य सेवार्थी में वांछित परिवर्तन लाना है जो चिरस्थायी हों और जिन्हें प्रभावकारी और मानवोचित ढंग से पूरा किया जा सके।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

11) निम्नलिखित कथनों में जो सही है उन पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का प्रयोग अनिदेशात्मक उपबोधन में किया जाता है।

ii) उपबोधन में संकल्पनात्मक उपागम से आशय सफलता मिलने तक एक के बाद एक उपागम का प्रयोग करते रहना है।

iii) निदान निदेशात्मक उपबोधन का चरण है।

iv) अनिदेशात्मक उपबोधन में, उपबोधक की भूमिका मुख्य नहीं होती।

12) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

i) ..... अनिदेशात्मक उपबोधन उपागम के प्रतिपादक हैं।

ii) समाकलित मनोविज्ञान शब्द का प्रतिपादन ..... ने उपबोधन के लिए अपने ..... उपागम की व्याख्या के लिए किया था।

13) i) निदेशात्मक उपबोधन में शामिल चरणों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

ii) बहुविधा (बहुरूपात्मक) चिकित्सा से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

1.9 उपबोधन प्रक्रिया

उपबोधन का आरंभ किसी उपबोध्य विशेष से उसके जीवनवृत्त से संबंधित प्रश्नावली को भरवा कर किया जाता है। इस प्रक्रिया में शामिल हैं, पुनर्बलन से जुड़ी कार्यप्रणाली, आग्रही (निश्चयात्मक) प्रशिक्षण, विसंवेदनीकरण प्रतिपुष्टि और संज्ञानात्मक पुनर्रचना– विशेष रूप से व्यवसायों में, भावात्मक और संज्ञानात्मक विधाएं। भौतिक और काल्पनिक विधाओं में, उपबोधक गेस्टाल्ट और अन्य समग्र तकनीकों का प्रयोग करता है। जैसे खाली कुर्सी में भूमिका प्रतिवर्ती संवाद बोलना, आमना-सामना, पेट से सांस लेना, सकारात्मक प्रतिबिंबन, चित्रण और फोकसन। अंतःवैयक्तिक विधाओं में आत्म-प्रबंधन (instruction in parenting) और सामाजिक कौशलों का प्रयोग किया गया है।

संवृत्तिक रूप में उपबोधन का संबंध सदैव दूसरों की सहायता करने से है, चाहे यह किसी भी संदर्भ में प्रयुक्त किया गया हो। लेकिन यहाँ इसका उपयुक्त अर्थ और भी सार्थक है। क्योंकि विशेष समस्या की बजाए समग्र व्यक्ति हमारे ध्यान का केंद्र बिंदु है।

उपबोधन का सर्वश्रेष्ठ वर्णन एक प्रक्रिया के रूप में हो सकता है। इसका अर्थ है कि उपबोधन में कुछ निश्चित समय अवधि में अभिज्ञेय (पहचान योग्य) घटनाओं का अनुक्रम शामिल होता है। लिया गया समय, घटनाओं का अनुक्रम, अंतर्निहित गति के अन्वेषण की प्रकृति और विस्तार आदि अलग-अलग व्यक्तियों में भिन्न होते हैं। तथापि ऐसे कुछ बुनियादी चरण हैं जो इस प्रकार की उपबोधन प्रक्रियाओं का अनिवार्य भाग होते हैं। ऐसे चरणों के विस्तार में जाने से पहले, आइए इनसे जुड़ी कुछ अवधारणाओं से अवगत हों।

1.9.1 अवधारणाएँ

तत्परता

सेवार्थियों को मुख्य रूप से दो व्यापक श्रेणियों में वर्गीकृत किया जाता है। पहली श्रेणी में वे सेवार्थी शामिल होते हैं जो स्वैच्छिक रूप से सहायता चाहते हैं, और दूसरी श्रेणी में वे सेवार्थी आते हैं जो विशेष रूप से किसी व्यक्ति अथवा संस्था द्वारा भेजे जाते हैं। मामला चाहे जैसा भी हो, उपबोधन में यह पूर्वधारणा होती है कि सेवार्थी उपबोधन चाहता है, जिसके कारण वह सहायता के लिए आ रहा है। इस इच्छा को 'तत्परता' कहा जाता है।

प्रतिसंकल्प

लोग प्रायः सहायता माँगने और इसे स्वीकारने में कठिनाई अनुभव करते हैं क्योंकि कुछ मामलों में वे परिवर्तन के परिणामों का सामना करने में कुछ अनिच्छुक होते हैं और कुछ के लिए सहायता लेने का अर्थ असफलता को स्वीकारना है। इसी तरह कुछ अनुभव करते हैं कि उन्हें सहायता की आवश्यकता नहीं है और इसी वजह से उनकी सहायता न की जाए। इस प्रकार की नकारात्मक भावना जो सहायता लेने से व्यक्ति को रोकती है 'प्रतिसंकल्प' कहलाती है।

व्यक्तिवृत्त

इस क्षेत्र में व्यक्तिवृत्त शब्द का प्रयोग अक्सर होता है। व्यक्तिवृत्त से आशय उपबोध्य के वर्तमान और पिछले जीवन से जुड़े तथ्यों का सुव्यवस्थित संग्रह है। लेकिन उपबोधक के सैद्धांतिक अभिविन्यासों के साथ ध्यान का केंद्र भी परिवर्तित होता रहता है– जैसे मनोवैश्लेषिक रूप से अभिविन्यासित उपबोधक बचपन से जुड़े संगत अनुभवों को ध्यान में रखकर कार्य करता है।

सौहार्द

उपबोधन में सौहार्द को जितना महत्त्वपूर्ण समझें, कम रहेगा। यह उपबोधक द्वारा निर्मित ऐसा मैत्रीपूर्ण और अनुकूल वातावरण (माहौल/स्थिति) है जो प्रभावी उपबोधन संबंधों के निर्माण में उत्प्रेरक है। सौहार्द स्थापित करने में मुख्य रूप से स्नेहपूर्ण संबंधों का माधुर्य, उपबोधक के प्रति इस स्नेह की अभिव्यक्ति और विश्वास की अनुभूति– जो बिना शर्त वाली स्वीकृति से विकसित होती है, अत्यंत महत्त्वपूर्ण कारक हैं। उपबोध्य को बुलाने के लिए स्वयं उठ कर जाना, उससे स्नेहपूर्ण ढंग से मिलना, उसे आराम से बिठाना और आरंभ में समस्या से उसका ध्यान हटाना आदि ऐसी तकनीकें हैं जिन्हें उपबोधन के आरंभिक चरण में इस्तेमाल किया जा सकता है।

अन्यारोपण

इसका संबंध उपबोध्य द्वारा उपबोधक यानी चिकित्सक के समक्ष उन संवेगों का अन्यारोपण अर्थात् अभिव्यक्ति से है जो उसने अपने जीवन के आरंभिक काल में अनुभव किए थे। उपबोधन स्थितियों में ऐसी अभिव्यक्ति काफी स्वाभाविक है क्योंकि उपबोध्य उपबोधक पर

विश्वास करता है और अपनी भावनाओं और संवेदनाओं को खुलकर अभिव्यक्त करने के लिए उसे प्रेरित भी किया जाता है। उपबोधक को इन भावनाओं का आदर करना चाहिए और इन्हें चिकित्सीय रूप में संचालित करना चाहिए ताकि संबंध विच्छेद न होने पाएं।

प्रति-अन्यारोपण

यह स्थिति उस समय घटित होती है जबकि चिकित्सक अपने अनसुलझे द्वंद्वों को उपबोध्य को दर्शा देते हैं, उपबोधक, उपबोध्य के साथ असुविधा महससू करने लगते हैं या क्रोध, रोष आदि विवेकहीन (अविवेकी) स्थिति का अनुभव करते हैं या वे खुद उपबोध्य पर निर्भर करना शुरू कर देते हैं या अपने उपबोध्य की समस्या (दुविधा) में अतिभावुकतापूर्ण ढंग से सम्मिलित हो जाते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि प्रति-अन्यारोपण में ऐसी भावनाएँ स्थायी हो जाती हैं जो उपबोधक के लिए उचित नहीं है। यदि उपबोधक द्वारा दिए गए तर्कों से भी स्थिति नहीं सुधरती है तो उपबोधक को स्वयं के लिए किसी संवृत्तिक की सहायता लेनी चाहिए।

प्रतिरोध

इस अवस्था में उपबोध्य उपबोधक द्वारा निर्धारित किए गए लक्ष्यों की दिशा में किए जाने वाले प्रयासों का प्रतिरोध करता है। हाल की प्रवृत्तियों से पता चलता है कि प्रतिरोध उपबोधन प्रक्रिया का अपेक्षित अंग है और उपबोधक के परिणामों पर इसका सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। प्रतिरोध का विस्तार शत्रुतापूर्ण व्यवहार से आरंभ करते हुए निष्क्रिय रूप से प्रतिरोध करने तक है जैसे चिकित्सक को मिलने के लिए जानबूझ कर देरी से पहुँचना आदि।

1.9.2 सोपान/अवस्थाएँ

उपबोधन प्रक्रिया कुछ विशेष अवस्थाओं से होकर गुजरती है और इन्हें मुख्यतः निम्नलिखित अवस्थाओं में वर्गीकृत किया जा सकता है :

1) **प्रारंभिक सोपान (अवस्था) : उपबोध्य द्वारा आत्म-अन्वेषण**

प्रारंभिक चरण में उपबोध्यों को आत्म-अन्वेषण के लिए प्रेरित किया जाता है ताकि वे अपने-आपको भली-भांति समझने का प्रयास करें और अपने उद्देश्यों को स्पष्ट रूप से समझ सकें। सामान्य उपबोधन लक्ष्य निश्चित किए जाते हैं और इसी के अनुरूप वातावरण भी तैयार किया जाता है। इसी प्रकार से उपबोध्य की प्रकृति और समस्या की जटिलता को ध्यानपूर्वक समझते हुए और एकत्रित जानकारी के आधार पर, उपबोधक किसी अस्थायी परिकल्पना (निर्णय) तक पहुँचता है। मनोवैज्ञानिक परीक्षण, प्रश्नावलियों और अन्य सूचियों– जैसे आकलन साधन इन निर्णयों में मदद करते हैं।

प्रारंभिक अवस्था को दो उप-भागों में विभाजित किया जाता है – (क) पहली मुलाकात और (ख) प्रारंभिक उपबोधन सत्र।

क) **पहली मुलाकात :** इसका मूल उद्देश्य उपबोधक और उपबोध्य के बीच मधुर कार्यकारी संबंध की नींव स्थापित करना है ताकि एक-दूसरे को समझते हुए समस्या का निवारण किया जा सके। यह अत्यंत चुनौतीपूर्ण अवस्था मानी जाती है क्योंकि जब सेवार्थी इस अवस्था में उपबोधक के पास पहुँचता है तो उस समय वह अनिश्चित और दुविधाभरी भावनाओं से ओत-प्रोत होता है। इसलिए उपबोधक बातचीत द्वारा, मुख के हाव-भावों और अपने समग्र व्यवहार के माध्यम से अपने सेवार्थी को दर्शाता है कि वह उसे भली-भाँति समझ रहा है और उसकी समस्या का निवारण वह पूरी लगन से करेगा। लेकिन ऐसे संबंध स्थापित करने

में उसे कुछ निश्चित शिष्टाचार को ध्यान में रखना पड़ता है– जैसे खुद उठ कर उपबोध्य को आरामदायक स्थिति में बिठाना, बातचीत के दौरान फोन की घंटी पर ध्यान न देना आदि। ऐसी पहली मुलाकात के दौरान उपबोधक को यह सोचने की आवश्यकता होती है कि क्या वह उपबोध्य की समस्या को हल करने में सक्षम है। यदि नहीं, तो सेवार्थी को किसी उचित व्यावसायिक एजेंसी में भेजना आवश्यक हो जाता है। सेवार्थी को भी इस तथ्य के प्रति जागरूक कराना चाहिए कि उपबोधन के उपरांत वह क्या प्राप्त करेगा और वह खुद क्या आशा रखता है। इसी प्रकार से गोपनीयता, निजता-अधिकार, अन्य नैतिक और कानूनी बातों को भी भली-भाँति स्पष्ट कर लेना चाहिए। इस अवस्था के दौरान सत्रों की लंबाई (समय-सीमा), शुल्क का भुगतान, आपसी समझ के आधार पर मिलने का समय तय करना आदि बातों को भी पहले से ही स्पष्ट कर लेना चाहिए।

ख) **प्रारंभिक उपबोधन सत्र :** इसके दौरान उपबोधक अधिकांश समय में बिना कोई अनावश्यक प्रश्न पूछते हुए सेवार्थी की बातों को ध्यान से सुनता है और उसे अपने विचारों को खुलकर कहने के लिए प्रेरित करता है। अतः सेवार्थी को ध्यानपूर्वक सुनकर, सेवार्थी की बात पर ध्यान देकर, उसके शारीरिक व्यवहारों और अन्य प्रतिक्रियाओं पर ध्यान देते हुए उपबोधक पूरी जानकारी प्राप्त करता है। यदि सेवार्थी विचारों को अभिव्यक्त करने में सक्षम नहीं है तो साधारण शब्दों के माध्यम से जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

2) मध्यम अवस्था : गहन अन्वेषण और विश्लेषण

इस चरण में उपबोधक अपने सेवार्थी की बाहरी समस्याओं से हटकर भीतरी समस्याओं की ओर ध्यान केंद्रित करता है अर्थात् प्राथमिक संज्ञानात्मक स्तर से संवेगात्मक स्तर की ओर बढ़ना। इस स्तर पर उपबोध्य क्रमशः अपनी भावनाओं को उजागर करता है। वह अपने सेवार्थी को अधिक गहराई से समझने का प्रयास करता है, कभी-कभी विरोधात्मक रुख भी अपनाता है, उसकी टिप्पणियों की कठोर व्याख्या करता है आदि। इस बिंदु पर कुछ उपबोधक अपने उपबोध्यों के बौद्धिक या व्यक्तित्व कार्यशीलता को समझने में कुछ विशेष परीक्षणों का प्रयोग भी करते हैं। अतः जैसे-जैसे उपबोध्य अपनी समस्याओं को खुलकर अभिव्यक्त करता है, उसमें जागरूकता उत्पन्न होती है, उपबोधक और उपबोध्यों के बीच अन्यारोपण, प्रति-अन्यारोपण, प्रतिरोध आदि जैसी संवेगात्मक अंतःक्रिया विकसित होनी शुरू हो जाती हैं। यद्यपि मनोविश्लेषक विशेषज्ञ इस बात से सहमत हैं कि सभी उपबोधन संबंधों में यह एक सार्विक परिघटना है।

3) अंतिम अवस्था : कार्य योजना के माध्यम से लक्ष्यों का कार्यान्वयन

इस अवस्था तक पहुँच कर, उपबोध्य यथार्थ स्तर पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करना आरंभ कर देते हैं। वे पहले की अपेक्षा अपने प्रति अधिक जागरूक और स्वाभाविक हो जाते हैं और रोज़ाना के जीवन में इस समझ का प्रयोग भी आरंभ कर देते हैं। यह ऐसी अवस्था है जहाँ नई समझ को रचनात्मक रूप दिया जाता है। जोर व्यावहारिक परिवर्तन पर होता है। व्यवहार, मनोवृत्ति और कौशल प्रारंभिक अवस्था के विशिष्ट लक्ष्य होने चाहिए। जो उपबोध्य निर्णय लेने में देरी करते हैं, उनका उपचार भूमिका अभिनय द्वारा या पूर्वाभ्यास, स्वाग्रहिता प्रशिक्षण आदि जैसी विशेष कार्यनीतियों द्वारा किया जाता है।

4) **समाप्ति**

यदि पहले से निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति हो जाती है तो उपबोधन समाप्ति की अवस्था में पहुँचते हैं। यदि उपबोधक समझता है कि समस्या का समाधान हो गया है तो वह प्रत्यक्ष रूप से मुद्दे पर प्रकाश डाल सकता है। या यदि सेवार्थी सुनिश्चित हो गया है कि समस्या दूर हो चुकी है तो वह उपबोधन समाप्ति की घोषणा कर सकता है। लेकिन इस कार्य में उपबोधक को पूर्ण रूप से सचेत रहना चाहिए कि प्रगति रोध के अभाव में तो उपबोध्य कहीं समाप्ति की घोषणा नहीं कर रहा। उसे इस ओर भी सचेत रहना चाहिए कि उपबोध्य द्वारा समाप्ति की घोषणा कहीं प्रतिरोध का प्रतीक तो नहीं है। यदि ऐसा हो तो स्थिति को ध्यानपूर्वक संभालना चाहिए।

यदि समाप्ति यथोचित है तो उपबोधक को अंतिम कुछ सत्रों में उपबोध्य को अपनी निर्भरता से मुक्त करने का भरसक प्रयास करना चाहिए। ऐसी स्थिति में उपबोध्य में प्रायः लक्षण पुनः आ सकते हैं तथा घबराहट, उत्सुकता, चिंता आदि का अनुभव हो सकता है। जब उपबोधक सफलतापूर्वक अपना कार्य पूरा करता है तो वह उपबोधन के मुख्य लक्ष्य की प्राप्ति भली-भाँति कर लेता है और जीवन के अगले अध्याय से जुड़े नए अधिगम पर ध्यान केंद्रित करता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

14) निम्नलिखित कथनों में जो सही है उन पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) उपबोधन एक प्रक्रिया है क्योंकि यह मनोवैज्ञानिक परीक्षणों के उपयोग से संबद्ध है।

ii) उपबोधन के दौरान उपबोध्य के साथ भावुक हो जाना या उस पर निर्भर करना, उपबोधक के लिए उचित है।

iii) पहली मुलाकात का मुख्य उद्देश्य सौहार्द स्थापित करना है।

15) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :

नकारात्मक सोच जो व्यक्ति को उपबोधक से सहायता प्राप्त करने से रोकता है, ... कहलाता है।

16) i) उपबोधन के संदर्भ में प्रतिरोध से क्या आशय है?

.....

.....

.....

.....

ii) प्रति-अन्यारोपण से आप क्या समझते हैं?

.....

.....

.....

.....

1.10 शिक्षा में निर्देशन और उपबोधन

निर्देशन सेवाएं पूर्ण शैक्षिक कार्यक्रम का अभिन्न अंग हैं।

काफी पहले ''निर्देशन सेवाओं को विद्यालय पद्धति में विस्तार कार्यकलाप माना जाता था।'' इसे विद्यालयों के लिए बिल्कुल अनावश्यक और अनुपयुक्त समझा जाता था। फिर भी शिक्षकों और जनप्रतिनिधियों द्वारा विस्तृत और उपयुक्त मूल्यांकनों द्वारा निर्देशन सेवाओं को स्वीकार कर लिया गया है। इसे बाहर से नहीं जोड़ा गया है बल्कि शैक्षिक प्रक्रिया के लिए प्रमुख और अनिवार्य माना गया है।

यह कहना कि निर्देशन सेवाएँ पूरे शैक्षिक प्रयास का मुख्य और अभिन्न अंग हैं, इसका तात्पर्य यह नहीं है कि ये सेवाएँ अध्यापन अथवा प्रशासन के समरूप हैं अथवा इनका स्थान ले सकती हैं या इनकी प्रतिस्थानी हैं। निर्देशन सेवाओं की अपनी स्वयं की पहचान है। तथापि निर्देशन तथा अध्यापन व प्रशासन के कुछ पक्षों के बीच तीव्र सीमांकन रेखाओं की अपेक्षा अंतःसंबंधों के क्षेत्र हैं। वास्तव में, एक अच्छा अध्यापक निर्देशन के अनेक कार्य करता है। अन्य बातों के साथ-साथ, वह न केवल उपलब्धि बल्कि समायोजन में विद्यार्थियों के अभिप्रेरणा और कठिनाइयों को समझने के लिए मूल्यवान सूचना और उपयोगी जानकारी भी प्रदान करता है। साथ ही, वह कक्षा का ऐसा वातावरण निर्मित करता है जो मानसिक स्वास्थ्य के लिए उपयोगी हो। वह विद्यार्थी और उसके माता-पिता के लिए शैक्षिक और व्यावसायिक योजनाएँ प्रदान करता है और अनेक अन्य कार्य करता है।

प्रशासन और निर्देशन, सेवाओं के मध्यम भी अंतःसंबंधों का एक क्षेत्र है। सामान्यतः निर्देशन सेवाएँ उपलब्ध कराना प्रशासन का दायित्व है और निर्देशन कार्यक्रम को कार्यान्वित करने के अधिकार निर्देशन उपबोधक को दिए जाने चाहिए।

निर्देशन सेवाएँ अध्यापकों और प्रशासकों की सहायता करती हैं। अध्यापक प्रत्यक्ष भागीदारी द्वारा और प्रशासक सेवाएँ उपलब्ध कराकर सहायता करते हैं।

शिक्षा और निर्देशन एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से संबंधित हैं। संक्षेप में, शिक्षा में निर्देशन सम्मिलित है। सभी तरह का निर्देशन शिक्षा है परंतु शिक्षा के कुछ पहलू निर्देशन नहीं हैं। दोनों का उद्देश्य एक जैसा हो सकता है– जैसे व्यक्ति का विकास, परंतु प्रयोग की जाने वाली विधियाँ भिन्न हैं। शिक्षा के क्षेत्र में इस समय माध्यमिक स्तर की व्यावसायिक शिक्षा पर बल दिया जा रहा है।

व्यावसायिक (वृत्तिमूलक) शिक्षा किसी विशिष्ट रोज़गार अथवा व्यवसाय के लिए व्यक्ति में विद्यमान ज्ञान, कौशलों और अभिवृत्तियों से संबंधित है। यह उस अनुभव से संबंधित है जो किसी व्यक्ति को सामाजिक रूप से लाभदायक काम-धंधे को सफलतापूर्वक करने के योग्य बनाता है। अधिकांश रोजगारों में– जिनमें अर्धकुशल व्यवसाय शामिल हैं सफलता प्राप्त करने के लिए अभीष्ट कौशलों और तकनीकी ज्ञान की आवश्यकता पड़ती है। वर्तमान संचार प्रौद्योगिकी युग में कुछ विशेष कौशलों के संबंध में बुनियादी पृष्ठभूमि और शिक्षा की आवश्यकता पड़ेगी।

लिपिकीय, तकनीकी और व्यावसायिक रोज़गार जैसे सेवा क्षेत्रों में रोज़गार के अवसर बढ़ते जा रहे हैं। इन सभी रोज़गारों के लिए व्यावसायिक, तकनीकी और संवृत्तिक (व्यावसायिक) शिक्षा की जरूरत पड़ती है। हमारी शिक्षा पद्धति में सार्वजनिक शिक्षा कार्यक्रम की पाठ्यचर्या और दिशा में अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करने की सर्वाधिक आवश्यकता है। इस

प्रकार के परिवर्तनों से ही उन सामाजिक-आर्थिक समस्याओं का एकमात्र समाधान हो सकेगा जिनका हम आजकल सामना कर रहे हैं।

1.11 सारांश

हमने निर्देशन के स्वरूप, प्रयोजन और कार्यक्षेत्र, आवश्यकता और सिद्धांतों पर चर्चा की और इस पर भी विवेचन किया है कि निर्देशन शिक्षा के साथ किस प्रकार जुड़ा है। हमने यह भी जाना कि सर्वोत्तम संभव चयन और समायोजन करने में व्यक्तियों को निर्देशन प्रदान किया जाता है। यह भी स्पष्ट है कि निर्देशन एक आजीवन चलने वाली प्रक्रिया है जो व्यक्तिगत मतभेदों को महत्त्व देता है और सभी के लिए है। विद्यालय जानेवाले बालकों की संख्या में वृद्धि, सामाजिक परिवर्तनों, जनसंख्या वृद्धि, बेरोज़गारी, पारिवारिक ढांचे में परिवर्तनों, कुसमायोजनों के कारण तथा रोजगार विकल्पों आदि के लिए निर्देशन की सर्वाधिक आवश्यकता पड़ती है।

निर्देशन का उद्देश्य, व्यक्ति की आवश्यकताओं और योग्यताओं को ध्यान में रखकर समाज में प्रभावकारी रूप से समायोजित करने के लिए व्यक्ति की सहायता करना है। हमने इस इकाई में निर्देशन के प्रमुख प्रकारों की चर्चा की है, जैसे शैक्षिक, व्यावसायिक, वैयक्तिक-सामाजिक निर्देशन आदि। निर्देशन शिक्षा का अभिन्न अंग है जो सर्वांगीण व्यक्तित्व विकसित करने में व्यक्ति की सहायता करता है।

अलग-अलग लेखकों ने अलग-अलग पहलुओं पर बल देते हुए निर्देशन को परिभाषित किया। तथापि अधिकांश इस बात पर सहमत है कि निर्देशन एक प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित निर्देशन कार्यकर्ता और सहायता के इच्छुक ज़रूरतमंद व्यक्ति के बीच संबंध शामिल है। निर्देशन, अनुदेश और सलाह प्रदान करना कुछ ऐसे क्षेत्र है जो निर्देशन से घनिष्ट रूप से संबद्ध हैं। हालाँकि ये क्षेत्र निर्देशन से घनिष्ठ रूप से संबंद्ध हैं और उनके कार्यों में कुछ समानताएँ होने के बावजूद ये निर्देशन से भिन्न हैं।

निर्देशन सिद्धांतों और मान्यताओं पर आधारित एक वैज्ञानिक तकनीक है। निर्देशन के अंतर्गत माना जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति अपने निर्णय लेने की योग्यता रखता है और उसे अपना मार्ग या पक्ष चुनने का पूरा अधिकार भी है। उपबोधक उपबोध्य को सलाह नहीं देता/देती और न ही उनकी समस्याओं को हल करता है, वह केवल यथोचित सोच और निर्णण लेने के लिए प्रोत्साहित करता है।

निर्देशन के वास्तविक लक्ष्य क्या है इस संबंध में उचित जानकारी के अभाव में अयर्थाथवादी अपेक्षाएँ बढ़ जाती है और हाथ केवल निराशा लगाती है। (1) सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य की उपलब्धि, (2) समस्या-समाधान, (3) निर्णयन, (4) व्यक्तिगत प्रभावोत्पादकता को बेहतर बनाना, (5) सोच परिवर्तन में मदद करना, और (6) व्यवहार-बदलाव/सुधार लाना निर्देशन के प्रमुख लक्ष्य हैं।

निर्देशन के मुख्य तीन उपागम हैं – (1) निदेशात्मक (2) अनिदेशात्मक (3) संकलनात्मक। उपागम का प्रयोग न भी करें, तो भी उपबोधन सामान्यतः चार अवस्थाओं से होकर गुजरता है, ये है प्रारंभिक अवस्था, मध्य अवस्था, अंतिम अवस्था और समाप्ति।

1.12 इकाई के अंत में अभ्यास कार्य

1) 'निर्देशन' शब्द की परिभाषा दीजिए और बताइए कि निर्देशन की कोई आवश्यकता है अथवा नहीं? कारण बतलाए।

2) अपने क्षेत्र (मोहल्ले) में किसी एक ऐसे विद्यालय का पता लगाइए जहाँ निर्देशन एकक हो। निम्नलिखित बिंदुओं पर एक रिपोर्ट तैयार कीजिए :

   क) विद्यार्थियों में व्यावसायिक जागरूकता।

   ख) विद्यालय/घर/समकक्ष समूह आदि के संबंध में समायोजन समस्याएँ।

3) निर्देशन शिक्षा से किस प्रकार जुड़ा है? स्पष्ट कीजिए।

4) किसी रोज़गार कार्यालय का दौरा कीजिए और कला/विज्ञान/वाणिज्य/ व्यवसाय से जुड़े विभिन्न रोज़गारों (वृत्तियों) के बारे में पता लगाइए और उन पर एक रिपोर्ट तैयार कीजिए।

5) निर्देशन के चार सिद्धांत कौन-कौन से हैं?

6) निर्देशन का प्रयोजन और कार्यक्षेत्र क्या है?

7) अपने विद्यालय में किसी ऐसे विद्यार्थी का पता लगाइए जिसे निर्देशन की आवश्यकता है। उसके लिए एक उपयुक्त उपबोधन उपागम चुनिए। विद्यार्थी की मदद के लिए आप जिन तकनीकों का प्रयोग करेंगे, उनकी जानकारी दीजिए। उस विशिष्ट आगम और तकनीकों को चुनने के कारण बताइए।

8) व्यावसायिक अर्थ में उपबोधन का अर्थ भिन्न है जो प्रचलित अर्थ से नितांत भिन्न है। चर्चा कीजिए।

इकाई 2 विद्यालय में निर्देशन

इकाई की रूपरेखा

2.1 प्रस्तावना

2.2 उद्देश्य

2.3 निर्देशन तथा पाठ्यचर्या

- 2.3.1 पाठ्यचर्या की अवधारणा
- 2.3.2 संगत व सार्थक पाठ्यचर्या के मानदंड
- 2.3.3 निर्देशन तथा पाठ्यचर्या का समाकलन
- 2.3.4 विद्यालयी पाठ्यचर्या द्वारा निर्देशन

2.4 निर्देशन तथा अधिगम

- 2.4.1 अधिगम प्रक्रिया की प्रकृति
- 2.4.2 अधिगम सामग्री तथा अध्यापक का महत्व
- 2.4.3 अध्येता का महत्व
- 2.4.4 कक्षा अधिगम तथा निर्देशन में निहित मनोवैज्ञानिक कारक

2.5 निर्देशन तथा अनुशासन

- 2.5.1 कक्षा अनुशासन तथा निर्देशन विधियाँ
- 2.5.2 व्यवहार तथा अनुचित व्यवहार (दुर्व्यवहार)
- 2.5.3 अनुशासित करने की नई विधियाँ

2.6 निर्देशन और अन्य पाठ्यचर्या क्षेत्र

2.7 निर्देशन और यथातथ्य (आभासी) जगत

2.8 सारांश

2.9 इकाई के अंत में अभ्यास कार्य

2.1 प्रस्तावना

कक्षा कक्ष में निर्देशन तथा श्रेष्ठ अध्यापन अभिन्न प्रक्रियाएँ हैं। अच्छे अध्यापक सदैव अधिकांश वे क्रियाएँ ही करते हैं जिन्हें निर्देशन की संज्ञा दी जाती है। वे पाठ्यचर्या, शिक्षण या अधिगम की विधियों तथा अनुशासन को बालक के विकास के साधनों के रूप में प्रयोग में लाते हैं।

इकाई 'निर्देशन तथा उपबोधन को समझना', के अध्ययन करने के पश्चात आप निर्देशन तथा उपबोधन की अवधारणाओं तथा इनके शैक्षिक एवं व्यावसायिक क्षेत्रों में निहितार्थ को समझ गए होंगे। आइए, इस इकाई में हम कक्षा में पढ़ाए गए विषयों की प्रासंगिकता के रूप में निर्देशन के उपयोगों को समझें और यह देखें कि इन विषयों को कैसे पढ़ाया जाए तथा कक्षा का प्रबंधन किस भांति किया जाए। हम यह भी चर्चा करेंगे कि पाठ्यचर्या के माध्यम से निर्देशन द्वारा बच्चों की आवश्यकताओं को कैसे पूरा किया जा सकता है। बच्चों की भावात्मक ज़रूरतें और विकास से निपटने के लिए उपबोधन कला, स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा का प्रयोग कैसे कर सकते हैं, अनुशासन को कैसे सुधारा जा सकता है और एक निर्देशन-मनस्क (guidance minded) अध्यापक अपने विद्यार्थियों की बेहतर ढंग से सीखने में कैसे सहायता कर सकता है।

2.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप इस योग्य हो जाएँगे कि :

- निर्देशन के लक्ष्यों तथा पाठ्यचर्या के बीच समानताओं तथा विभेदों को पहचान सकेंगे,
- विद्यालय में सहपाठ्यचारी क्रियाओं की आवश्यकताओं के महत्त्व को बता सकेंगे,
- अध्यापन में अधिगम के कुछ मूलभूत सिद्धांतों का उपयोग कर सकेंगे,
- कक्षा की स्थिति में अनुशासन स्थापित करने के लिए निर्देशन के महत्त्व को व्यक्त कर सकेंगे, और
- निर्देशन के महत्त्व को समझ सकेंगे।

2.3 निर्देशन तथा पाठ्यचर्या

इस बात पर बार-बार बल दिया गया है कि निर्देशन सेवाएँ विद्यालय का अभिन्न हिस्सा होती हैं (देखें इकाई 1, निर्देशन और उपबोध को समझना)। परन्तु दुर्भाग्य यह रहा है कि पाठ्यचर्यात्मक विषयों में निर्देशन कार्यक्रमों का उपयोग बहुत ही कम विद्यालय कर पाएं हैं।

परंपरागत रूप में, निर्देशन कार्य का महत्व व्यक्ति की समायोजन प्रक्रिया (adjustment process) से संबंधित रहा है। विद्यालयों के संदर्भ में इसका उद्देश्य विद्यमान पाठ्यचर्या से विद्यार्थियों को उनकी आवश्यकताओं तथा योग्यताओं के अनुसार उपयुक्त विषयों के चयन में कैसे सहायता करना है। अतः यह इकाई निर्देशन कर्मियों (guidance personnel) के ज्ञान तथा प्रशिक्षण के उपयोग की संभावनाओं का पता लगाने तथा उनके द्वारा किए जाने वाले प्रयासों के परिणामों को किसी अन्य उपयुक्त दिशा में (जैसे, स्वयं पाठ्यचर्या निर्माण तथा इसमें सुधार लाना) प्रयोग में लाने के लिए समर्पित हैं।

2.3.1 पाठ्यचर्या की अवधारणा

शैक्षिक दृष्टि से, ''पाठ्यचर्या विद्यार्थियों के समग्र अनुभवों का संकलन/निष्कर्ष/परिणाम है चाहे वे अनुभव औपचारिक हों अथवा अनौपचारिक, और चाहे वे कक्षा के अंदर प्राप्य हों तथा बाहर''।

निर्देशन की दृष्टि से पाठ्यक्रमों को विद्यालय द्वारा प्रदत्त 'सुनियोजित' अधिगम (शिक्षण) अनुभवों के रूप में देखा गया है। इस बात को निश्चित रूप से मान लेना चाहिए कि विद्यार्थी अपने समस्त अनुभवों से सीखते हैं, मात्र कक्षा के अंदर प्राप्त अनुभवों से ही नहीं। उदाहरण के लिए सह-पाठ्यचारी कार्यकलापों द्वारा प्रदत्त शिक्षण या अधिगम अनुभव नियमित कक्षा में दिए गए अनुभवों से भिन्न होते हैं।

व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति करना (Meeting individual needs) : विद्यालय की पाठ्यचर्या ऐसी हो जो विद्यार्थियों की आवश्यकताओं का निर्वाह अवश्य कर सके। एक प्रकार से, पाठ्यचर्या विद्यालयी क्रियाकलापों की सीमाओं को निश्चित करती है। यह एक महत्त्वपूर्ण योगदान है क्योंकि प्रत्येक समुदाय में वे सेवाएँ – जिनसे विद्यार्थी लाभान्वित हो सकता है इतनी विविध व अलग-अलग प्रकार की होती हैं कि इन सभी को विद्यालय द्वारा

किया जाना असंभव प्रतीत होता है। अतः विद्यालय मात्र उन कार्यकलापों को ही चुनें जिन्हें प्रदान करने में यह मुख्य दायित्व निभा सकने में सक्षम हों।

अतः पाठ्यचर्या विद्यार्थियों को निम्नलिखित बातों के लिए निश्चित अवसर प्रदान करने में सक्षम होनी चाहिए : (i) जीवन में अपना स्थान खोजना ताकि जीवन दर्शन स्पष्ट हो सके, (ii) समकक्ष (peer) के साथ संतोषजनक संबंध स्थापित करना, (iii) परिवार से स्वतंत्र होना (उन पर आश्रित न होना) तथा (iv) शारीरिक वृद्धि और परिवर्तनों से समायोजन करना।

2.3.2 संगत व सार्थक पाठ्यचर्या के मानदंड

विद्यार्थियों की उपरोक्त आवश्यकताओं के निर्वहन के लिए हमारे विद्यार्थियों के शैक्षणिक कार्यक्रम ऐसे हों कि वेः (1) युवकों की आवश्यकताओं के अनुकूल हों, (2) हमारी सामाजिक व्यवस्था की आवर्ती (बार-बार आने वाली) माँगों व जरूरतों को पूरा कर सकें, तथा (3) अधिगम प्रक्रिया के साथ सामंजस्य स्थापित करके (in harmony with) विकसित किए जाएँ।

1) **युवाओं की आवश्यकताएँ** : यह प्रथम मानदंड विद्यार्थियों की सामान्य (सामूहिक) आवश्यकताओं और विशिष्ट या व्यक्तिगत आवश्यकताओं से संबंधित है।

   क) सामान्य या सामूहिक आवश्यकताएँ : सभी विद्यार्थियों की कुछ सामूहिक या साझी मूलभूत आवश्यकताएँ होती हैं; जैसे, सभी नागरिक हैं; लगभग सभी विवाह करेंगे तथा परिवारों का पालन-पोषण करेंगे; सभी जीवनयापन के लिए कमाएंगे, सभी आपस में मिलते जुलते रहेंगे और अन्य व्यक्तियों के साथ सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास करेंगे, इत्यादि।

   ख) विशिष्ट आवश्यकताएँ : इन सामूहिक आवश्यकताओं के अतिरिक्त, कुछ व्यक्तिगत आवश्यकताएँ अथवा रुचियाँ होती हैं, जैसे : कुछ विद्यार्थी कालेज में प्रवेश लेकर अपने अध्ययन को जारी रखना चाहेंगे; कुछ विद्यार्थी किसी न किसी व्यावसायिक पाठ्यक्रम में प्रवेश लेना चाहेंगे, कुछ अपने पैतृक कारोबार को चलाएँगे, तथा कुछ ऐसे भी होंगे जो किसी व्यावसायिक (professional) पाठ्यचर्या में प्रवेश लेना चाहेंगे जैसे मेडिकल कालेज, इंजीनियरिंग या वास्तुकला। सामान्य आवश्यकताओं को तो आसानी से पहचाना जा सकता है और उनकी पूर्ति विभिन्न 'अध्ययन पाठ्यक्रमों' के नियोजन से की जा सकती है।

2) **अपनी सामाजिक व्यवस्था की माँगों की पूर्ति करनाः** यद्यपि बहुत सारी ऐसी आवश्यकताओं को पहचान पाना कठिन है तथापि कुछ आवश्यकताएँ बहुत ही सुस्पष्ट होती हैं। हमारा समाज यह अपेक्षा रखता है कि सभी व्यक्तियों के पास कार्यात्मक साक्षरता कौशल हो अर्थात सभी व्यक्ति अपने नाम लिखने और पढ़ने योग्य हो जाएँ। कुछ सामाजिक दबाव अधिक जटिल होते हैं, उदाहरणार्थ, चिकित्सकों से यह अपेक्षा होती हैं कि वे अपना अध्ययन स्वतंत्र रूप से जारी रखें ताकि वे चिकित्सा के क्षेत्र में होने वाले नवीनतम व आधुनिकतम शोधों से अवगत रहें।

3) **अधिगम प्रक्रिया तथा पाठ्यचर्या :** यदि हम निम्नलिखित तालिका का ध्यान से अध्ययन करें तो इस तीसरे मानदण्ड को बेहतर तरीके से समझा जा सकता हैः

एक अच्छा अधिगम अनुभव प्रदान करने के लिए आवश्यक विचारणीय बातें		इसे कैसे उपलब्ध किया जाए	निर्देशन कार्यक्रम का योगदान
1.	अनुदेशन (instruction) विद्यार्थियों की तत्परता के अनुरूप होना चाहिए।	पहले किए गए कार्य की समीक्षा	समूह-चर्चा तथा वृत्तिक वर्ताएं
2.	बच्चों की मानसिक योग्यता को ध्यान में रखा जाना चाहिए।	परीक्षण	मनोवैज्ञानिक परीक्षण तथा साक्षात्कार
3.	विद्यार्थियों को अभिप्रेरित (motivate) करना अनिवार्य है।	जरूरतों को पहचानना	व्यावसायिक सूचना प्रदान करना तथा अभिप्रेरणामूलक बातचीत
4.	जब विद्यार्थी उपयुक्त अनुक्रिया करें तो उसे प्रबलित अवश्य किया जाए।	पुरस्कार देकर	वृत्तिक मेले तथा वृत्तिक प्रदर्शनियाँ
5.	विद्यार्थियों के पास कुछ ऐसे साधन अवश्य हों जिनसे वे अपनी अनुक्रियाओं की उपयुक्तता का मूल्यांकन कर सकें।	प्रश्नावलियाँ तथा उपबोधन	स्वनिर्धारण तथा वृत्तिक पाठ्यक्रम

2.3.3 निर्देशन तथा पाठ्यचर्या का समाकलन

कक्षा निर्देशन केन्द्रों/ब्यूरो इत्यादि, प्रशासनिक कार्यक्रमों, सहपाठ्यचारी क्रियाओं, घर तथा समुदाय में प्राप्त अधिकगम-अनुभवों के प्रकाश में यह अनिवार्य हो जाता है कि निर्देशन पाठ्यचर्या का एक अभिन्न अंग होना चाहिए। आइए, अब आगे हम निर्देशन तथा पाठ्यचर्या के समाकलन के तर्काधार पर विचार करें।

1) **ध्येयों की समरूपता (समानताएँ) :** दोनों ही क्षेत्रों में प्रकार्यात्मक केन्द्र विद्यार्थी केन्द्रिक उपागम का रूप धारण कर चुकी है, और चूँकि विद्यालय में अधिकांश समय विद्यार्थी अध्यापक के साथ रहता है अतः दोनों क्षेत्रों (निर्देशन तथा पाठ्यचर्या) का एक महत्वपूर्ण ध्येय यह बन जाता है कि 'अध्यापक द्वारा इस प्रकार सहायता करना' कि यह विद्यार्थी की सीखने में, सामंजस्य स्थापित करने में तथा सक्षमता प्राप्त करने में सहायता कर सकें।

2) **कार्यों में समानता :** प्रकार्यों में कुछ महत्त्वपूर्ण समानताएँ निम्नलिखित हैं :

   क) **समग्र व्यक्ति की आवश्यकताएँ :** इस प्रकार्य का उद्देश्य है कि 'समग्र व्यक्ति' की आवश्यकताएँ (शारीरिक, संवेगात्मक, सामाजिक तथा मानसिक) पूर्ण हो सके। इसके लिए ऐसी क्रियात्मक स्थितियों में, जैसे खेल का मैदान, सहपाठ्यचारी क्रियाएँ, सभागार, बरामदों तथा कक्षाओं में विद्यार्थियों के सक्रिय व्यवहार का अवलोकन करते रहना आवश्यक तथा महत्त्वपूर्ण है। अध्यापक एवं परामर्शदाता को मात्र विद्यार्थी की पृष्ठभूमि के ज्ञान संबंधी आँकड़ों तथा उसके कक्षा के निष्पादन मात्रा से ही संतुष्ट नहीं रहना चाहिए।

   ख) **विद्यार्थियों की आवश्यकताओं तथा समस्याओं को पहचानना :** यदि परामर्शदाता, पाठ्यचर्या विशेषज्ञ तथा अध्यापक अपने विशिष्ट कौशलों का अपनी अंतर्दृष्टि तथा विशेषज्ञताओं का उपयोग करते हुए सब मिलकर कार्य करें

तो युवाओं की आवश्यकताओं की पहचान करने में अधिक सार्थक परिणाम प्राप्त हो सकते हैं।

अधिकांशतः निर्देशन स्टाफ परामर्श (उपबोधन) को विद्यार्थियों की समस्याओं की पहचान करने के लिए एक साधन के रूप में तो चुनते है, किन्तु अधिकांश में वे इस ज्ञान को, कि विद्यार्थियों की समस्याएँ क्या होती हैं, अपने तक सीमित रखते हैं। परामर्शदाताओं द्वारा व्यक्त विशिष्ट आम समस्याएँ निम्नलिखित हैं: योग्यतानुसार उपलब्धि प्राप्त न कर सकना, सामान्य रूप से विद्यालयी पाठ्यक्रम में असफलता, घर के अंदर के मधुर संबंधों में विघटन, सामाजिक कुसमायोजन आदि। दूसरी ओर अध्यापकों द्वारा व्यक्त की गयी विद्यार्थियों की समस्याएँ हैं : परिवार में परस्पर मधुर संबंध न होना या अनुपस्थित रहने की प्रवृत्ति (absentism) तथा दिशा निर्देश (orientation) का अभाव। क्या यह अपेक्षित नहीं है कि इन सभी समस्याओं या समस्या क्षेत्रों के निराकरण के लिए समस्त अध्यापकों, परामर्शदाता समूह तथा अभिभावक परस्पर सहयोग करें, इन समस्याओं पर चर्चा करें तथा इनके समाधान में सहायता करें? इन सभी समस्याओं के निर्देशन संबंधी निहितार्थ पाठ्यचर्या तथा घर तथा समुदाय के साथ काम करने में तथा विद्यालय में और सामान्य अच्छे समूह-मनोबल के लिए होते हैं।

ग) **सभी व्यक्तियों के साथ कार्य :** निर्देशन तथा पाठ्यचर्या स्टाफ के प्रकार्य अनुपूरक होते हैं और समान व्यक्तियों, जैसे विद्यार्थियों, अभिभावकों, अध्यापकों तथा समुदाय के साथ कार्य करते हैं। पाठ्यचर्या स्टाफ तथा अध्यापकों को परामर्शदाता द्वारा दी गई सहायता मूल्यवान होती है, उदाहरणार्थ, वह उन्हें उन सभी रिकोर्डों, अभिलेखों से अवगत करा सकती है। जो उनके उपयोग के लिए निर्देशन कार्यालय में उपलब्ध हैं। परामर्शदाता विद्यार्थियों तथा अध्यापकों के उन पाठ्यचर्या संबंधी तथा कार्यपरक अनुभवों को मालूम करने में सहायता कर सकती है जो समस्याओं के समाधान तथा आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अपेक्षित पृष्ठभूमि प्रदान करने में सहायक हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त, ऐसे अवसर भी मिलेंगे जब किसी सम्मेलन में निर्देशन परामर्शदाता तथा अध्यापक का अभिभावकों से परस्पर एक साथ मिलना काफी लाभदायक सिद्ध हो सकता है।

3) **विषयवस्तु तथा शैक्षिक संसाधन सामग्री में समानता :** व्यावहारिक रूप से निर्देशन कार्यक्रम की समस्त विषयवस्तु विद्यार्थियों को पाठ्यचर्या अनुभव प्रदान करने में सक्षम होती है। व्यावसायिक या वृत्तिक निर्देशन, घर तथा परिवार, स्वास्थ्य तथा शारीरिक विकास, दूसरों के साथ कार्य कर सकने की योग्यता आदि जैसे विषयों को पाठ्यचर्यात्मक अनुभवों में परिवर्तित किया जा सकता है।

इसके अतिरिक्त, प्रायः पुस्तकालय और निर्देशन कार्यालय में निर्देशन एकक (unit) का एक सुव्यवस्थित स्थान निर्धारित होता है जिसमें पुस्तकें या अन्य उपयोगी अध्ययन सामग्री उपलब्ध होती है तथा जिसका उपयोग कक्षा में पाठ्यचर्यात्मक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए लाभप्रद होता है।

4) **विद्यार्थियों के संग कार्य करने की समान कार्यविधि तथा तकनीकें :** निर्देशन तकनीकों (केस अध्ययन), साक्षात्कार, वृत्तांत अभिलेख (annedotal record), समाज-मितीय आँकड़ें (Sociometric data), समाज-नाटक (socio drama) और अन्य

सरल प्रक्षेपी तकनीकें (जैसे आत्मकथा चित्र प्रक्षेपण, कहानी-निर्माण इत्यादि) का अभ्यास आजकल बहुत सारी कक्षाओं में किया जाता है। अध्यापक सदैव से ही साक्षात्कार लेते रहे हैं तथा वे विद्यार्थियों को विभिन्न प्रकार की शैक्षिक तथा व्यावसायिक सूचना देते रहे हैं। तथापि ऐसा देखा गया है कि अध्यापक प्रायः इन तकनीकों का उपयोग उनकी पूर्ण संभावनाओं का पता लगाए बिना करते हैं। निर्देशन कार्मिक उनमें इस बात के, प्रति पूरी समझ पैदा कर सकते हैं कि इन विधियों का उपयोग कब और कैसे किया जाए तथा उनकी व्याख्या कैसे की जाय।

5) **उपागमों में सादृश्य (समानता) :** निर्देशन तथा पाठ्यचर्यात्मक दोनों क्षेत्रों में परीक्षणों अथवा परीक्षाओं के द्वारा उपचारी तथा निदानात्मक उपागमों का उपयोग किया जाता रहा है। परंतु विकासात्मक तथा उपचारी पक्षों पर पूर्ण ध्यान नहीं दिया गया है उदाहरणार्थ, जब कोई विद्यार्थी फेल हो जाता है तो बहुत कम अध्यापक इस बात का पता लगाने का प्रयत्न करते हैं कि उसकी असफलता के पीछे कौन से कारण रहे हैं, विशेषकर उस अवस्था में जब इसके कारण स्पष्ट रूप से दृश्य न हों। प्रायः एक-एक पहलू को लेकर निदान नहीं किया जाता। निरोधक (preventive) उपागम की पूर्ण संभाव्यता की भी दोनों क्षेत्रों द्वारा उपेक्षा की गई है। ऐसे कितने अध्यापक होंगे जो यह प्रयत्न करते हों कि विद्यार्थियों की समस्याएँ, जैसे– शैक्षिक असफलता, किसी पाठ्यचर्यात्मक कार्यकलाप में अचानक रुचि कम हो जाना इत्यादि उत्पन्न ही न हों।

2.3.4 विद्यालयी पाठ्यचर्या द्वारा निर्देशन

प्रत्येक विषय का अध्ययन निर्देशन हेतु कुछ विशिष्ट अवसर प्रदान करता है। जैसे, गणित के अध्ययन से सही और तर्कपूर्ण चिंतन (तार्किक सोच) के विकास के अवसर मिलने चाहिए। सामाजिक अध्ययन, इतिहास, भूगोल तथा नागरिक शास्त्र द्वारा विद्यार्थियों में वे क्षमताएँ आ जानी चाहिए जिनसे वे आस-पास की निरंतर बदलती दुनिया में अपने-आपको समायोजित कर सकें तथा दुनिया को दिखा दे कि भ्रष्ट करने वाली प्रवृत्तियों का मुकाबला वे किस भांति कर सकते हैं। भाषा का अध्ययन ऐसा होना चाहिए जो विद्यार्थियों के समस्त संप्रेषण कौशलों के विकास तथा उसे अपने-आप को तथा दूसरों को समझने में उसके विकास में स्पष्ट व निश्चित रूप से योगदान दे। शारीरिक शिक्षा मनोरंजन तथा स्वास्थ्य संबंधी क्षेत्रों में निर्देशन संबंधी उत्तर प्रकार के अवसर प्रदान करता है। गृह-अर्थशास्त्र अथवा गृह-विज्ञान के अंतर्गत स्वास्थ्य संबंधी तथा वर्तमान तथा भविष्य के पारिवारिक जीवन संबंधी निर्देशन सम्मिलित हो सकते हैं। इसी प्रकार व्यापार शिक्षा, कला तथा विभिन्न कार्यानुभवपरक विषयों में निहित वैयक्तिक तथा व्यावसायिक मूल्यों को देखा जा सकता है, बशर्ते अध्यापक निर्देशन मनस्क (प्रवण) (guidance minded) हों।

1) **साहित्य :** मूल्य विकास के अवसर साहित्य की कक्षाओं में सर्वाधिक सुस्पष्ट होते हैं। लघु कथाओं, नाटकों, उपन्यासों, निबंधों तथा कविताओं के द्वारा ऐसी स्थितियाँ प्रस्तुत की जा सकती हैं जिनके द्वारा व्यक्ति के प्रयोजन प्रकट हो सकते हैं समस्याओं का समाधान ढूंढा जा सकता है तथा निर्णय लिए जा सकते हैं। साहित्य का अध्यापन करते समय निर्देशन का एक महत्त्वपूर्ण भाग विभिन्न चरित्रों (पात्रों) का अध्ययन है – उनके किए व्यवहार; क्यों किये; उनके कृत्यों के परिणाम क्या हुए; कौन से द्वंद्व हैं जो आज हमारे वास्तविक जीवन में उत्पन्न हो सकते हैं? जीवन की कई वास्तविकताओं के लिए साहित्य की बहुत-सी स्थितियों का उपयोग आज के किशोरों की जटिलताओं पर प्रकाश डालने के लिए किया जा सकता है। इसके आधार पर सुदृढ़ मूल्यों (sound values) के विकास में उनकी सहायता की जा सकती है। निर्देशन-मनस्क अध्यापकों

का मानना है कि साहित्य के अध्यापन में सुदृढ़ मूल्यों का विकास उनका अत्यंत महत्त्वपूर्ण उद्देश्य होता है। साहित्य जीवित रहता है, क्योंकि यह अपने अनुशासन (विषय) तथा कला के माध्यम से जीवन को प्रतिबिंबित करता है। एक दसवीं कक्षा के लड़के ने निम्नलिखित विषय पर निबंध लिखा कि : ''मैं क्या सोचता हूँ कि मैं एक व्यक्ति के रूप में कैसा हूँ?'' दूसरे क्या सोचते हैं कि मैं एक व्यक्ति के रूप में कैसा हूँ? मैं क्या सोचता हूँ कि एक व्यक्ति रूप में मैं कैसा व्यक्ति बनना पसंद करूँगा? यह दर्शाता है कि स्वयं विद्यार्थियों तथा अध्यापकों के लिए इस प्रकार के आत्म विश्लेषी (अंतर्दशी) रिपोर्ट (प्रतिवेदन) कितनी आत्मस्वीकृतिपरक (revealing) हो सकती हैं।

''एक व्यक्ति रूप में जैसा मैं अपने आपको समझता हूँ'' मैं यह सोचना चाहता हूँ कि दो पैरों वाले जीव के रूप में मैं सबसे बड़ी चीज़ हूँ परंतु मुझे खेद इस बात का है कि मैं यह जानता हूँ कि ऐसा नहीं हूँ, मैं तो अन्य विद्यार्थियों की भांति एक विद्यार्थी हूँ जिसकी वही सामान्य-सी समस्याएँ हैं, कार्यकलाप है और लड़कियों के विषय में वही सर्वसामान्य से विचार हैं। हाँ मेरे अंदर विनोदशीलता बोध पर्याप्त रूप में देखा जा सकता है। मेरी एक विकट समस्या यह है कि मैं उच्च कोटि का सुस्त (आलसी) व्यक्ति हूँ परंतु जब मेरे माता-पिता का दबाव होता है तो मैं लगभग अपने समस्त कार्य (जो मुझे करने होते हैं) कर लेता हूँ। लड़के और लड़कियाँ दोनों प्रकार के मेरे काफी मित्र हैं, परंतु अधिकांश लड़के जिनके साथ में घूमता हूँ, मुझ से उम्र में बड़े हैं जिसके कारण मुझे यह अनुभव होता है कि मैं अपनी आयु की तुलना में अधिक परिपक्व हूँ।

''एक व्यक्ति के रूप में जैसा दूसरे मुझे समझते हैं'' मेरे विचार में अधिकांश व्यक्ति मेरे विषय में यह सोचते हैं कि मैं ठीक-ठाक हूँ। मैं दिखावा बहुत अधिक करता हूँ और कई बार पिछड़ जाता हूँ जिससे दूसरों के विचारों में मेरी प्रतिष्ठा गिर जाती है। न तो लोग मुझे एक नेता ही मानते हैं और न एक अनुयायी ही। वे समझते हैं कि मैं लगभग इन दोनों के बीच में आ सकता हूँ। मेरा अंदाजा है कि लोग मुझे एक समझदार लड़का समझते हैं क्योंकि बहुधा वे अपनी जीवन-गाथा तथा अपनी समस्याएँ मुझे बता देते हैं। मैं मित्र शीघ्र ही बना लेता हूँ परंतु मेरे कुछ लोग दुश्मन भी हैं। कुछ व्यक्ति ऐसा भी सोचते हैं कि मैं एक मूर्ख हूँ या एक ऐसा लड़का जिसे जब तक भली-भांति जाना नहीं जाता लोग उसे पसंद नहीं करते हैं।

''एक व्यक्ति के रूप में जैसा मैं बनना चाहूँगा'' मैं चाहता हूँ कि मैं वैसा ही बना रहूं जैसा वास्तव में मैं हूँ। मेरी यह इच्छा है कि मुझे कुछ कम स्वार्थी होना चाहिए था क्योंकि यह मेरी सबसे बड़ी कमी है। दूसरी बात केवल यह है कि मैं परिश्रमी नहीं हूँ। मैं सरल मार्ग को अपनाना चाहता हूँ। यदि मैं इस प्रवृत्ति को बदल पाता या बदल सकता हूँ तो मैं एक बेहतर व्यक्ति बन सकता हूँ। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि जो कुछ मैं हूँ उसमें मेरे माता-पिता का काफी हाथ है और उस सबके लिए जो उन्होंने मेरे लिए किया है मैं उनका कृतज्ञ हूँ। मैं यह आशा करता हूँ मैं ऐसा व्यक्ति बन जाऊँ जो वे मुझे बनना देखना चाहते हैं।

2) **सामाजिक अध्ययन :** जिस भांति से अधिकांश विद्यालयों में सामाजिक अध्ययन विषय को पढ़ाया जाता है ऐसा प्रतीत होता है कि उसका विद्यार्थियों द्वारा काफी विरोध किया गया है। इस समस्या से निपटने के लिए, अध्यापकों को चाहिए कि वे सर्वप्रथम विद्यार्थियों को पाठ्यक्रम के विषय में उनके नकारात्मक भावों को प्रकट या अभिव्यक्त होने दें। इससे उन्हें यह लगेगा कि अध्यापक उन्हें समझता है, वह उनके दृष्टिकोण की इज्ज़त करता है और इस बात के लिए कि इस पाठ्यक्रम को उनके लिए

किस प्रकार अधिक सार्थक और रुचिकर बनाया जाए, विद्यार्थियों के विचार चाहता है। उसके पश्चात् वह इस बात पर चर्चा कर सकता है कि इस विषय की आवश्यकता क्यों है और अध्यापक ऐसा क्यों सोचता है कि विद्यार्थियों के लिए यह विषय महत्त्वपूर्ण है।

सामाजिक अध्ययन में विद्यार्थी यह सीखता है कि वर्तमान का विकास भूतकाल से कैसे हुआ और किस भांति वर्तमान (तथा भूतकाल) भविष्य को प्रभावित करते हैं या कर सकते हैं। इससे युवाओं को यह बताने की आवश्यकता है कि भूतकाल में हुई ग़लतियों से भविष्य में कैसे बचा जा सकता है।

विज्ञान की भांति इससे विद्यार्थियों को यह सीखना चाहिए कि 'तथ्य' तथा 'मत' में अंतर किस प्रकार करना चाहिए तथा इसी प्रकार पक्षपात रहित रिर्पोटिंग को प्रचार (अधिप्रचार) (propaganda) से कैसे भिन्न माना जाए। दोनों विषयों (विज्ञान तथा सामाजिक अध्ययन) का उद्देश्य होना चाहिए कि वे वर्तमान की अनिश्चितताओं का मुकाबला करने में सहायता करें और साथ-साथ शाश्वत मूल्यों के प्रति वचनबद्धता दर्शाएँ।

3. **गणित :** यह मात्र संयोग रहा है कि विश्व के महान दार्शनिक, महान गणितज्ञ भी रहे हैं, जैसे अरस्तु। गणितीय समस्याओं के हल करने में निहित तर्क तथा अनुशासन से व्यक्ति सरलतापूर्वक विश्व के चमत्कारों के विषय में सोच सकता है जो क्रमबद्ध पूर्वानुमेय तथा तार्किक (logical) प्रतीत होते हैं।

अध्यापक मानव इतिहास में तर्क (logic) और तार्किकता (reasoning) के महत्त्व को दर्शा सकता है, यह बता सकता है कि गणित की भाषा किस भांति जाति तथा वर्ण से ऊपर है, किस भांति इसे कौतुक (fun) के रूप में लिया जा सकता है तथा किस भांति इसके द्वारा समस्याओं तथा पहेलियों से निपटा जा सकता है।

बीजगणित के अध्यापन द्वारा अध्यापक विद्यार्थियों को यह अनुभव कराने में सहायता कर सकता है कि गणित एक 'चिन्हों की भाषा' है जिसे शताब्दियों पहले व्यक्ति अपने अमूर्त तथा प्रायोगिक चिंतन को सुगम बनाने के लिए सीखा। विद्यार्थी इस बात में भी रुचि दर्शाएँगे कि आज बाह्य अंतरिक्ष पर विजय पाने के प्रयत्नों में गणित की भूमिका क्या रही है।

4) **सभी विषयों में निहित वैयक्तिक तथा सामाजिक मूल्य :** कोई भी विषय, चाहे वे कला, संगीत, व्यवसाय अध्ययन, शिक्षा या गृह विज्ञान जैसे शैक्षिक विषय ही क्यों न हो, प्रत्येक का अपना प्रयोजन व लक्ष्य होता है। इसका प्रयोजन व्यक्ति तथा मानव को एक श्रेष्ठ जीवन जीने के लिए सहायता होना चाहिए। विद्यार्थियों को चाहिए कि वे प्रत्येक विषयक को अपने सामाजिक एवं वैयक्तिक विकास से तथा मानव जाति के दीर्घकालीन लक्ष्यों से संबंधित करके देखें।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) एक संगत तथा सार्थक पाठ्यचर्या के तीन मानदंड लिखें।

.....

.....

.....

2) बताइए कि नीचे लिखे कथन सत्य हैं अथवा असत्य।

क) पाठ्यचर्या एक विषय-केंद्रित उपागम से एक विद्यार्थी-केंद्रित उपागम की ओर अग्रसर हुई है।

ख) निर्देशन एवं पाठ्यचर्या के समाकलन की कोई आवश्यकता नहीं है।

ग) विद्यार्थियों की सामान्य आवश्यकताओं को सरलता से पहचाना जा सकता है।

घ) प्रत्येक विद्यालयी विषय के शैक्षिक तथा व्यावसायिक निहितार्थ होते हैं।

3) नीचे दिए गए शब्दों का मेल दूसरे स्तंभ में दिए उनके अर्थों के साथ करें।

शब्द		**उनके अर्थ**
i) पाठ्यचर्या	क)	पुरस्कार
ii) प्रबलन	ख)	मूल्यांकन
iii) विशिष्ट आवश्यकताएँ	ग)	सुनियोजित अधिगम अनुभव
iv) निर्धारण	घ)	विशिष्ट/सामान्य आवश्यकताएँ

4) संक्षेप में व्याख्या कीजिए।

क) निर्देशन दृष्टिकोण से पाठ्यचर्या का अर्थ

.....

.....

.....

ख) 'समग्र व्यक्ति' की आवश्यकताएँ

.....

.....

.....

ग) साहित्य के अध्ययन के द्वारा निर्देशन

.....

.....

.....

.....

5) रिक्त स्थानों को भरें –

क) विद्यार्थी (बच्चे) अपने समस्त ..... से सीखते हैं और मात्र उनसे ही नहीं जो कक्षा में प्राप्त किए जाते हैं।

ख) पाठ्यचर्या का विकास ..... प्रक्रिया के सामंजस्य में करना चाहिए।

ग) गृह विज्ञान ..... तथा ..... में निर्देशन प्रदान कर सकता है।

2.4 निर्देशन तथा अधिगम

एक निर्देशन आधारित पाठ्यचर्या में अधिगम प्रक्रिया की प्रकृति, अध्येता, अधिगम, अवस्थिति, अध्यापक तथा निर्देशन परामर्शदाता (उपबोधक) महत्त्वपूर्ण कारक होते हैं। अध्यापक तथा उपबोधक (counsellors) को यह ज्ञान अवश्य होना चाहिए कि बच्चे और अन्य व्यक्ति किस प्रकार सीखते हैं।

हमारे शैक्षिक और मनोवैज्ञानिक इतिहास के प्रारंभ में अधिगम प्रक्रिया के संदर्भ में स्मृति स्मरणशक्ति (याददाश्त) को महत्त्वपूर्ण घटक माना जाता था। परंतु अब यह मान लिया गया है कि अधिगम अनुभव के आधार पर व्यवहार में परिवर्तन प्राप्त करने का विषय है न कि मुख्यतः स्मृति द्वारा ज्ञान अर्जन का।

हम कैसे सीखते हैं इस समस्या से संबंधित प्रयोगात्मक अन्वेषण लगभग 100 वर्ष से चलते आ रहे हैं। मनोविज्ञान के विभिन्न संप्रदायों ने प्रयोगों के आधार पर अधिगम सीखने के सिद्धांतों का निर्माण किया है जो इस प्रकार हैं : अनुक्रियाओं के अनुबंधन द्वारा अधिगम, प्रत्यन-त्रुटि अधिगम तथा अंतर्दृष्टि द्वारा अधिगम। नवीन अध्ययनों ने प्रत्यक्षीकरण द्वारा, चिंतन द्वारा, स्वयं करके सीखने को तथा सृजनात्मक अधिगम को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। वास्तविक जीवन स्थितियों में अधिगम सभी प्रमुख सिद्धांतों के कुछ पक्षों को प्रतिबिंबित करता प्रतीत होता है।

2.4.1 अधिगम प्रक्रिया की प्रकृति

अनिवार्य रूप से अधिगम लक्ष्य-निर्देशित होना चाहिए, विशेष रूप से इसलिए कि अध्येता निरंतर अपने व्यवहार में परिवर्तन दर्शाता रहता है। ये परिवर्तन किस प्रकार घटित होते हैं और इनकी दिशा किस ओर होती है; यह प्रश्न निर्देशन कार्यक्रम के लिए एक सीधी चुनौती है।

1) **अधिगम के लक्ष्य :** प्रभावी अधिगम एक संगठित (क्रमबद्ध) प्रक्रिया होती है, जो सरल से जटिल की ओर चलती है। इस प्रकार पहले से ही एक 'दिशा' विन्यास (direction set) विद्यमान रहता है। अतः कक्षा आरंभ करने से पूर्व अध्यापक यह निश्चित करता है कि उसे उस दिन क्या पढ़ाना है। कक्षा के उपरांत वह विद्यार्थियों को बताता है कि इस प्रकरण (विषय) से किस प्रकार के प्रश्न पूछे जा सकते हैं तथा उन पर वह विद्यार्थियों से चर्चा करता है।

2) **अधिगम एक एकीकृत प्रक्रिया है :** चूँकि निर्देशन में वृद्धि और विकास का लक्ष्य निहित होता है अतः निश्चित ही इसके अंतर्गत मन तथा शरीर संबंधी द्वैतवाद की समस्या पर भी विचार करना होगा। शोधों के आधार पर यह स्पष्ट हो चुका है कि जब भी बच्चा कोई अनुक्रिया करता है तो उसके व्यक्तित्व के ये दोनों पक्ष– बौद्धिक व शारीरिक कार्य करते हैं। उदाहरणार्थ, किसी गेंद के फेंकने में तार्किक चिंतन की आवश्यकता पड़ती है तथा साथ ही शारीरिक समन्वय की भी (हाथ और बाजुओं को एक दिशा विशेष में हिलाना)। इसी प्रकार अंकगणित के किसी पहाड़े को ठीक से याद करने के लिए रटंत स्मृति (rote memory) की आवश्यकता होती है (इसे बार-बार दोहराना तथा लिखने और बोलने के लिए विशेष योग्यता का प्रयोग करना)।

3) **अनुभव व अधिगम :** अनुभव गहन रूप से एक व्यक्तिगत मामला है जो हमारी आस्थाओं और अभिवृत्तियों को प्रभावित करता है। प्रत्येक विद्यार्थी कक्षा में अपने अनुभव

लेकर आता है। उन अनुभवों के आधार पर उसे आगे नए अनुभवों को प्राप्त करना होता है। यह इन अनुभवों का योग है जो अधिगम प्रारूपों का निर्माण करता है। अतः यदि एक अध्यापक बच्चों की यथा स्थिति (अर्थात् जैसे भी वे हैं) को स्वीकार कर उसी के अनुसार बच्चे के साथ चले तो यह सर्वोत्तम निर्देशन परंपरा का निवर्हन होगा।

4) **अधिगम के मनोवैज्ञानिक आधार :** यद्यपि यह बात अभी तक पूर्ण रूप से स्पष्ट नहीं हो पाई है कि अधिगम प्रक्रिया में मानव तंत्रिका तंत्र किस भांति कार्य करता है, तथापि इसके लिए पर्याप्त साक्ष्य प्रतीत होते हैं कि मानव मस्तिष्क ही अधिगम का स्थान है। वास्तव में बहुत-सी अधिगम अपंगताएँ– जैसे कि पठनवैकल्य (dyslexia), अपेक्षाकृत कम उपलब्धि (under achievement), खराब (निम्न) उपलब्धि (poor achievement), मंदग्राहिता (slow learning) इत्यादि मस्तिष्क के किसी प्रकार के विकासात्मक भिन्नता के कारण हो सकती है।

5) **अधिगम में संवेग :** तनावयुक्त अवधियों, सुख, प्रसन्नता अधिगम में बाधा उत्पन्न/प्रबलित करते हैं। अध्यापक अपने व्यक्तित्व से कक्षा में संवेगात्मक वातावरण का निर्माण करता है। प्रभावी अधिगम सुसंमजित अध्यापकों तथा विद्यार्थियों पर निर्भर करता है।

6) **अधिगम तथा आत्मधारणा (self concept) :** चूँकि अधिकांश रूप में व्यवहार उन लक्ष्यों की ओर निर्देशित होता है जो व्यक्ति को उसकी आवश्यकताओं की संतुष्टि के संदर्भ में महत्त्वपूर्ण लगते हों। व्यक्ति जिस भांति अपने लक्ष्यों की व्याख्या करता है तथा उनकी प्राप्ति के लिए जिन विधियों को स्वीकार करता है, वे अधिगम प्रक्रिया के लिए महत्त्वपूर्ण होते हैं। उदाहरणार्थ, सोलह वर्ष की आयु में विपुल अपने जीवन में एक अपनी ऑटोमोबाइल (कार, गाड़ी आदि) को प्राप्त करना सर्वाधिक महत्त्व की चीज मानता है। इस तरह की किसी गाड़ी को प्राप्त करने के लिए वह कुछ भी करने को तैयार है, चाहे उसे उसके निर्माण के लिए अलग-अलग भाग (पूर्जे) चुराने ही क्यों न पड़ें। अपनी आवश्यकताओं की व्याख्या तथा उनकी संतुष्टि कैसे की जाए यह बात उसके अधिकांश अधिगम को प्रभावित कर देगी। रॉजर्स के अनुसार, विद्यार्थी के आंतरिक निर्देश-आधार (internal frame of reference) या संदर्भ विन्यास अर्थात् उसकी आत्मधारणा को उसकी अधिगम प्रक्रिया में सहायता प्रदान करने के लिए समझना चाहिए, चाहे यह सामूहिक शिक्षण (अनुदेशन) का मामला हो अथवा व्यक्तिगत उपबोधन (counselling) का।

2.4.2 अधिगम सामग्री तथा अध्यापक का महत्व

अधिगम मात्र अध्येता के प्रयासों पर ही निर्भर नहीं करता अपितु जो कुछ वह सीखता है उसके संगठित प्रस्तुतीकरण पर भी निर्भर करता है। दूसरे शब्दों में, अधिगम प्रक्रिया में अध्यापक की एक सार्थक भूमिका होती है।

विगत में निर्देशन कार्यक्रमों में अध्यापक की भूमिका को नज़रअंदाज किया जाता रहा है। तथापि अब यह स्पष्ट हो गया है कि विद्यालय में मात्र निर्देशन-विशेषज्ञ ही निर्देशन कार्यक्रमों का संचालन नहीं कर सकते। यह अध्यापक ही है जो विषयवस्तु की व्यवस्था करता है, अधिगम पथ को निदेशित करता है और उन लक्ष्यों की व्याख्या करता है जो उसके लिए निर्धारित किए गए हैं।

1) **संगठित प्रविधियों की आवश्यकता :** यदि अपेक्षित अधिगम को सुनिश्चित करना है तो कक्षा प्रविधियों की 'क्रमबद्ध' व्यवस्था करना आवश्यक है। अतः कक्षा– जिसमें प्रारंभिक विद्यार्थी हैं, अध्यापक को उस प्रकार के अनुभवों का चयन करना होगा जो विद्यार्थी को शिक्षा देने के लिए अभिकल्पित तैयार किए गए हैं। उदाहरण के लिए, यह निश्चय करने के पश्चात् कि कौन-सा प्रकरण पढ़ाना है, अध्यापक पहले उस समस्त अध्याय (इकाई) को सारांश रूप में प्रस्तुत करेगा और तब उस पाठ की प्रस्तावना आरंभ करेगा।

2) **अधिगम तथा प्रभावी कार्य करने संबंधी आदत :** विद्यार्थी के कक्षा से बाहर जाने के पश्चात् क्या होता है? अर्थात् कक्षा से बाहर भी विद्यार्थी की अधिगम संबंधी वास्तविक आवश्यकताएँ रहती हैं, जिन्हें प्रभावी कार्य संबंधी आदतों की स्थापना कहा जा सकता है।

हमारा लक्ष्य एक सुसमायोजित व्यक्ति का निर्माण है। परंतु विद्यार्थियों को यह सिखाने की आवश्यकता भी है कि अधिगम मात्र एक खेल नहीं है। इसके लिए एकाग्र प्रयासों व परिश्रम के द्वारा विषयवस्तु में प्रवीणता, अभिरुचि तथा घर पर पढ़ने के एक निश्चित कार्यक्रम की आवश्यकता होती है। समस्या यह है कि अधिगम में रुचि तथा अनुशासन में संतुलन कैसे रखा जाए। इस प्रकरण पर हम आगे चर्चा करेंगे।

3) **कक्षा में अनुशासन के लिए सुझाव :** कक्षा में अनुशासन बनाए रखने की प्रभावी मूल्यांकन विधि स्वयं विद्यार्थियों द्वारा ही प्राप्त होती है।

वाल्टर महोदय ने कक्षा में अनुशासन बनाए रखने के लिए कुछ सुझाव दिए हैं जो निम्नलिखित हैं :

i) सारे दिन के कार्य को पहले से ही नियोजित कर लें।

ii) सुनिश्चित करें कि विद्यार्थी प्रदत्त कार्य (assignments) को जानते हैं।

iii) लिखित कार्य की एक समय सीमा निर्धारित करें।

iv) विद्यार्थियों के साथ अपने व्यवहार में निश्चित व दृढ़ रहें : 'मेरा आशय कार्य से है' यह कथन व्यवहार में दृढ़ता को दर्शाता है।

v) अपनी कक्षा में विद्यार्थियों से पहले आएं।

vi) अपनी कक्षा के प्रत्येक विद्यार्थी में अभिरुचि विकसित करें।

vii) सुनिश्चित करें कि विद्यार्थियों द्वारा प्रस्तुत लिखित कार्य को ग्रेड देने (जाँचने) के बाद उन्हें वापस कर दिया जाए।

viii) इस बात के लिए सुनिश्चित रहें कि आप कुछ विद्यार्थियों के साथ पक्षपात तो नहीं कर रहे। पक्षपात करने से कक्षा के विद्यार्थियों का मनोबल गिर जाता है।

ix) अपनी कक्षा को नियंत्रित करने की योजना बनाएँ। केवल अंतिम विकल्प के रूप में ही दोषी विद्यार्थियों को उप-प्रधानाचार्य अथवा प्रधानाचार्य के पास भेंजे।

x) बहुत तीखी टीका-टिप्पणी (कठोर) न करें। सुनिश्चित करें कि जो टिप्पणी आपने की है उसका आप बचाव (defend) कर सकते हैं।

2.4.3 अध्येता का महत्व

एक मूलभूत समस्या, जिसका सामना शिक्षक को करना होता है, वह उन विद्यार्थियों के निर्देशन में आती है जो किसी न किसी कारण से स्वीकार्य मापदंडों से भिन्न रूप में व्यवहार करते हैं। अतः अध्यापक को सदैव यह ध्यान में रखना चाहिए कि विद्यार्थियों की अनुक्रियाएँ अपने आप में प्रत्येक विद्यार्थी के लिए अपने ढंग की होती है – कभी की भी अनुक्रिया एक ही प्रकार की नहीं होती।

एक सफल अध्यापक को अपने कौशलों तथा अपनी समझ का उपयोग करते हुए एक ऐसी व्यापक प्रविधि अपनानी होगी जिसके अंतर्गत विद्यार्थियों की भिन्न-भिन्न आवश्यकताओं का समावेश हो जाए। एक विशेष आवश्यकता वाला विद्यार्थी अन्य कक्षा के विद्यार्थियों की तुलना में भिन्न प्रतीत हो जबकि उसकी मूल अभिवृत्तियाँ (रवैया) वही हो सकती हैं। दूसरी ओर, ऊपरी रूप से दो सामान्य दिखने वाले विद्यार्थियों में जीवन के प्रति दृष्टिकोण में अत्यधिक अंतर हो सकता है। जब अध्यापक यह अनुभव कर लेता है कि किसी अवस्था विशेष में विशिष्ट सहायता की आवश्यकता है तो ऐसे विद्यार्थियों को वह एक वृत्तिक उपबोधक (परामर्शदाता) (career counsellor) के पास भेज सकता है।

बच्चे प्रायः अपने बारे में, अपने घरों के बारे में, अपने मित्रों और अभिरुचियों के बारे में आपस में बातचीत करना पसंद करते हैं। इनमें से बहुत-से विद्यार्थी अध्यापक को अपने माता-पिता के समान मानते हैं जिन्हें वे अपने लिए, विश्वसनीय समझते हैं। बच्चों के साथ सामान्य बातचीत के दौरान भी अध्यापक बच्चों के विषय में या उनकी अभिवृत्तियों के विषय में काफी कुछ जान सकते हैं।

अध्यापकों तथा उपबोधकों (counsellor) के लिए निर्देश

1) **प्रत्येक विद्यार्थी से उच्चतम अपेक्षा रखें :** अधिकांश विद्यार्थी उससे कहीं अधिक कर सकते हैं जितनी अपेक्षा प्रौढ़ों (वयस्कों) को उनसे होती है। अध्यापक को विद्यार्थियों के लिए वह सब नहीं करना चाहिए जो वे (विद्यार्थी) अपने लिए स्वयं करने में सक्षम हैं। उदाहरण के लिए, यदि अध्यापक ने किसी अभ्यास प्रश्नावली के प्रश्नों को हल करने के लिए उदाहरण सहित सूत्र पढ़ा दिया है तो उसे उस प्रश्नावली को श्यामपट्ट पर हल नहीं करना चाहिए।

2) **प्रत्येक विद्यार्थी को प्रोत्साहित करें :** प्रोत्साहन से आशय पुरस्कार अथवा प्रशंसा से नहीं है। पुरस्कार और प्रशंसा की यह अति होगी यदि अध्यापक उन सभी अभ्यास कार्यों पर जिनमें सभी प्रश्न ठीक से हल किए हों, ''अच्छा'', ''बहुत अच्छा'' लिखता चला जाए। इस प्रकार की प्रशंसा करने से ''प्रशंसा'' शब्द मूल्यहीन हो जाएगा। दूसरी ओर यदि अध्यापक कुछ चुने हुए अभ्यास कार्यों पर ''अच्छा'' शब्द का प्रयोग करें तथा साथ अपनी टिप्पणी प्रस्तुत करे कि इसमें क्या ''अच्छाई'' निहित है (जैसे बहुत व्यवस्थित ढंग से कार्य किया गया है या बड़ा साफ सुथरा कार्य है), तो ऐसी प्रशंसा अधिक प्रोत्साहित करने वाली होगी।

3) **सुने अधिक :** बहुत से अध्यापक स्वयं बहुत अधिक बोलते रहते हैं। यही कारण है कि कुछ विद्यार्थी अध्यापक को सुनते ही नहीं अर्थात् अध्यापक – बधिर (उदासीन) (teacher deaf) हो जाते हैं। विद्यार्थी यह भली-भांति जानते हें कि अमुक अध्यापक कितना समय चीज़ों को समझाने व उनकी लम्बी-लम्बी व्याख्या में नष्ट करते हैं। कितना समय वे डांटने में नष्ट कर देते हैं। एक बच्चे ने कहा ''हमारी हिंदी की अध्यापिका हमें इतनी बार डांटती रहती हैं कि पढ़ाने के लिए उसके पास समय ही नहीं बचता''।

4) **इस बात को समझने का प्रयत्न कीजिए कि बच्चा अपने व्यवहार को किस रूप में लेता है या समझता है :** बच्चा अपने व्यवहार से क्या प्राप्त करने का प्रयत्न कर रहा है? वह (व्यवहार) उसे कितना परितोष या संतुष्टि प्रदान कर रहा है? कई बार कोई विद्यार्थी समूह में अपना स्थान बनाने के लिए मूर्खों जैसी टिप्पणी कर सकता है, अध्यापक की आज्ञा का उल्लंघन कर सकता है या बातें करना बंद नहीं करता। इस प्रकार का उसका व्यवहार ध्यान को आकर्षित करने, अपनी पहचान कराने, यह अनुभव कराने कि समूह में उसकी एक भूमिका है, चाहे वह नकारात्मक ही क्यों न हो अथवा उससे किसी को भी सहायता न मिलती हो, का एक तरीका है।

5) **निम्नलिखित तीन बातों का बोध प्राप्त करने का प्रयत्न करें :**

1) **बच्चे को समझना :** उसकी अभिक्षमता, उसके मूल्य, लक्ष्य, उसका व्यक्तित्व, पूर्व ज्ञान, सामान्य अनुभव तथा शारीरिक अवस्था।

2) **कार्य को समझना :** कितना रुचिकर है, कितना कठिन है और इसकी उपयोगिता कितनी है?

3) **अवस्थिति :** बच्चे की अपने सहपाठियों के साथ अंतःक्रिया (बातचीत) तथा उसका अध्यापक के साथ संबंध; समूह की अभिवृत्तियाँ और मनोबल, अभिप्रेरणा, चिंता तथा स्थिति में निहित दबाव, निकटस्थ कार्य परिवेश – प्रकाश व्यवस्था, वायु का आवागमन (ventilation) या वायु संचार, अन्यमनस्कता।

2.4.4 कक्षा अधिगम तथा निर्देशन में निहित मनोवैज्ञानिक कारक

विद्यार्थियों के विषय में जानना तथा उनकी इस प्रकार सहायता करना कि वे स्वयं सीख सकें, निर्देशन का आधार है। कुछ ऐसे सिद्धांत ढूंढें गए हैं जो वास्तविक कक्षा की स्थिति में अधिगम को सुगमता से प्रदान करने में सहायक सिद्ध हुए हैं।

1) **अभिप्रेरणा (Motivation) :** अधिगम उस अवस्था में प्रभावी रूप से घटित होता है और इसके स्थाई रहने की अधिक संभावना होती है जब अध्येता को यह अनुभूति करा दी जाए कि वह कार्यकलाप का एक घटक है। उदाहरण के लिए, एक व्यक्ति जो इंजीनियर बनना चाहता है, उस समस्त ज्ञान को प्राप्त करने का भरसक प्रयत्न करेगा जो उसकी आकांक्षा की पूर्ति से जुड़ा हो। अभिप्रेरणा से व्यक्ति स्वतः प्रोत्साहित रहता है, बशर्ते उस क्षेत्र विशेष में व्यक्ति कुछ अभिक्षमता रखता हो।

2) **परिपक्वता के स्तरानुसार समायोजन :** जब कोई व्यक्ति कोई नया कौशल सीख रहा हो, जैसे किसी बेसबाल को फेंकना अथवा किसी शास्त्रीय (क्लासिक) नृत्य का नया सोपान, तो उस कार्य के लिए उसका पर्याप्त रूप में परिपक्व होना अनिवार्य है। यह आवश्यक है कि विद्यार्थी को स्वयं अपनी योग्यताओं तथा सीमाओं का बोध हो। इस सिद्धांत में दो अवधारणाएँ निहित हैं : (1) अध्यापक को चाहिए कि वह विद्यार्थी पर उसकी क्षमता से अधिक बोझ न डाले (अति एकाग्रता) (over concentration), (2) अधिगम उस अवस्था में सर्वाधिक प्रभावी होगा जबकि विद्यार्थी द्वारा किए जाने वाले कार्यकलापों के संपादन में कार्य तथा विश्राम का सम्यक् वितरण हो (कार्य करने की अवधि बहुत लंबी न हो)।

अतिएकाग्रता तथा कार्य करने की लंबी अवधि दोनों ही अधिगम (सीखने की प्रक्रिया) को हानि पहुँचाती हैं।

3) **अभिरचना (pattern) अधिगम :** किसी उद्देश्य की अभिरचना जितनी अधिक स्पष्ट रूप से समझी जाएगी, अधिगम उतना ही अधिक स्थाई बन सकता है। जो विद्यार्थी एक दिन वकील बनने की आशा रखता है वह अपने सभी विषयों की सार्थकता को इसी नज़रिये से देखने का प्रयत्न करेगा। उदाहरणार्थ, वाद-विवाद तथा नागरिक शास्त्र जैसे विषयों में उसकी रुचि अन्य विद्यार्थियों की अपेक्षा अधिक होगी। इसी प्रकार भाषा में काल तथा विराम चिन्हों का कोई अर्थ नहीं होगा जब तक कि इनके उपयोग की सार्थकता दैनिक जीवन में बोली जाने वाली भाषा में भली-भांति समझ नहीं ली जाती।

4) **प्रगति मूल्यांकन** : विद्यार्थियों को विद्यालयी कार्यकलापों में सफलता (या उसके अभाव या असफलता) की चिंता बनी रहती है। अतः अधिगम उस अवस्था में अधिक प्रभावी होगा जबकि अध्येताओं की प्रगति का मूल्य-निर्धारण किया जाता रहे। एक अध्येता को यह जानने की आवश्यकता रहती है कि क्या उसे अपने कार्य को जारी रखना चाहिए या गति को विराम देकर कार्य को पुनरीक्षण किया जाए। मूल्यांकन निर्देशन का सकारात्मक रूप हो सकता है तथा ऐसा होना भी चाहिए। ऐसे बहुत कम विद्यार्थी होंगे जो अपनी सफलता अथवा असफलता के प्रति अनुक्रिया नहीं करते हैं।

5) **व्यापक समाकलित (संघटित) विकास :** शिक्षा के प्रत्येक पक्ष का संबंध अध्येता के विकास से होता है। विद्यालय कार्य में निपुणता या प्रवीणता प्राप्त कर लेने मात्र से भविष्य के नागरिकों का व्यक्तित्व परिपक्व नहीं बन सकता।

वे विद्यार्थी जो कौशल और योग्यताओं को प्राप्त कर पाते हैं उनमें आत्मविश्वास आ जाता है तथा वे सामाजिक दायित्वों का निवर्हन कर पाते हैं। उनमें दृढ़ता व निर्भयतापूर्ण ढंग से कठिनाइयों का सामना करने की क्षमता का विकास हो जाता है। यह मालूम होना चाहिए कि बच्चों के निर्माणात्मक वर्षों में उनके व्यक्तित्व का समाकलित विकास विद्यार्थियों को अधिक परिपक्व व्यक्तित्व में रूपांतरित करने में काफी सहायक होगा।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी : क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

6) निम्नलिखित कथनों को ''सत्य'' और ''असत्य'' दो श्रेणियों में वर्गीकृत कीजिए।

क) प्रभावी अधिगम एक क्रमबद्ध प्रक्रिया है जो जटिल से सरल की ओर चलती है।

ख) अधिगम अध्येता के प्रयासों के अतिरिक्त अधिगम सामग्री तथा अध्यापक पर निर्भर करता है।

ग) जब कोई विद्यार्थी किसी नए कौशल को सीखता है तो यह आवश्यक है कि वह उस कार्य को करने या सीखने के लिए पर्याप्त रूप में परिपक्व हो।

7) सबसे उपयुक्त उत्तर को चुनिए।

अधिगम में दोनों निहित हैं –

i) अभिप्रेरक तथा संवेग

ii) स्व तथा अन्य व्यक्ति

iii) मन तथा शरीर

8) कला अधिगम में सम्मिलित मनोवैज्ञानिक कारकों का वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2.5 निर्देशन तथा अनुशासन

यह बात सुस्पष्ट है कि कक्षा-अनुशासन के बिना अध्यापक अपने कार्य में सफल नहीं हो सकते हैं तथा विरोधाभास रूप में अनुशासन एक ऐसा मामला है जिसका अनुभव हमें उस समय अधिक होता है जब इसका अभाव हो, न कि जब यह विद्यमान हो। हमें विदित है कि बिना अनुशासन के अध्यापन एक थकान पैदा करने वाला, हताशपूर्ण, निराशाजनक तथा असंभव सा कार्य लगता है। परंतु वह पकड़ में न आने वाला (elusive) कौन-सा गुण है जिसे कुछ (भाग्यशाली) अध्यापक लगभग पहले से मान कर चलते हैं।

आइए, जरा देखें कि कुछ अध्यापक अनुशासन को किस भांति परिभाषित करते हैं : 1) यह आत्मनियंत्रण तथा क्रमबद्ध आचरण विकसित करने का प्रशिक्षण है; 2) यह सत्ता की स्वीकृति या उसकी अधीनता या नियंत्रण स्वीकार करना है; 3) यह एक ऐसा व्यवहार है जो सुधारात्मक है या दण्डात्मक है।

परंतु अनुशासन की उपर्युक्त परिभाषाओं में कुछ लुप्त है। जो लुप्त है वह है, अनुशासन का शैक्षिक तथा निर्देशन घटक। इस दृष्टि से कि अनुशासन कक्षा स्थिति में प्रभावी हो सके इसके लिए इसका शिक्षा तथा निर्देशन से जुड़ना अनिवार्य है।

अनुशासन स्वयं में कोई ध्येय या साध्य नहीं है, यह तो विद्यार्थियों को समझाने का साधन है कि जो वे सीखना चाहते हैं उसका उनके व्यवहार से संबंध होता है। अतः हम नहीं चाहेंगे कि हमारे विद्यार्थी सत्ता की अधीनता मात्र डर से स्वीकार करते रहें। हम चाहते हैं कि उनका व्यवहार नियमों और सिद्धांतों, आदर्शों तथा दूसरों के प्रति सद्भावना पर आधारित हो।

2.5.1 कक्षा अनुशासन तथा निर्देशन विधियाँ

प्रभावी अध्यापक यह जानते हैं कि प्रतिबंध लगाने की तुलना में कक्षा अनुशासन शिक्षा के लिए अधिक मूलभूत साधन होता है। यह लोकतांत्रिक या स्वेच्छाचारी हो सकता है। अनुशासन बनाए रखने का उत्तरदायित्व समस्त शिक्षकगण को लेना चाहिए।

विद्यार्थी के हित में सर्वोत्तम क्या हो सकता है, इस मामले में कक्षा अध्यापक विशेष रूप से चिन्तित होता है। इसका अर्थ है कि कक्षा अध्यापक को यह निश्चय करने में निर्णायक भूमिका निभानी पड़ेगी कि उसके विद्यार्थियों के लिए क्या अच्छा है और क्या बुरा। अच्छे अधिगम के अनुकूल वातावरण बनाए रखने के लिए उसे चाहिए कि विद्यालय के नियम लागू करे और उन विद्यार्थियों के कार्यकलापों को प्रतिबंधित करें जो उन्हें अनुशासन में नहीं रख सकते।

कार्य करने के लिए सबसे अच्छा वातावरण उस अवस्था में विद्यमान रहता है जब कक्षा अध्यापक अपने विद्यार्थियों को विद्यालय के नियम-अधिनियमों से अवगत कराता रहे, तथा यह स्पष्ट करता है कि इन नियमों का क्या औचित्य है, अर्थात् इन्हें क्यों बनाया गया है। इसके साथ ही यह समझने में उनकी सहायता करता है कि इन नियमों आदि को लागू करने में वे अपना वैयक्तिक दायित्व कैसे अनुभव करें।

अनुशासन संबंधी समस्याओं के निर्वाह में निर्देशन विधियाँ

अनुशासन संबंधी समस्याओं के निर्वाह में निर्देशन विधियों का प्रयोग काफी प्रभावी हो सकता है। संभवतः अनुशासन के क्षेत्र में निर्देशन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान **'बाल अध्ययन तकनीकों'** का प्रयोग है। वे सभी व्यक्ति, जो अनुशासन संबंधी समस्याओं से सरोकार रखते हैं, उन्हें बच्चे की आवश्यकताओं तथा रुचियों, उसकी घर की पृष्ठभूमि और उसके विद्यालय संबंधी निष्पादन के विभिन्न पक्षों से अवगत होना चाहिए। इन सबका ब्यौरा **संचयी अभिलेखों** से और **केस कांफ्रेंस'** से प्राप्त किया जा सकता है। उन सभी कारकों की जानकारी जिन्होंने बच्चे के व्यक्तित्व को एक रूप प्रदान किया है अर्थात्, जीवन के प्रति उसकी अभिवृत्तियों का निर्माण किया है, अध्यापक के कार्य को आसान और फलदायक बना सकता है।

अनुशासन संबंधी समस्याओं के निर्वाह के लिए निर्देशिका

चूँकि अध्यापक/उपबोधक को इस प्रकार के प्रश्नों का उत्तर देना होता है अतः वह स्वयं तथा बच्चे से पर्याप्त रूप में अवगत हो जाता है और बच्चे के अनापेक्षित और अस्वीकार्य (inacceptable) व्यवहार के कारणों का पता लगा सकता है।

1) पिछली बार जब बच्चे ने मेरी उपस्थिति में दुर्व्यवहार किया था तो उसने क्या किया था?

2) उस घटनाओं से जिसमें अनुशासन संबंधी समस्या उत्पन्न होती हैं, मेरा उस बालक के विषय में क्या विचार है?

3) पिछली बार जब बच्चे ने मेरी उपस्थिति में दुर्व्यवहार किया तो मैंने उसके साथ कैसे व्यवहार किया था?

4) क्या मेरे पास उसके सामान्य स्वास्थ्य, उसके भोजन तथा उसकी रहन-सहन संबंधी अवस्थाओं के बारे में कोई जानकारी है?

5) क्या मुझे किसी ऐसे कारण की जानकारी है जो उसे तंग कर रहा है?

6) उसके परिवार के सदस्य परस्पर एक-दूसरे के प्रति कैसा अनुभव करते हैं?

7) एक समूह के रूप में एक परिवार के जीवन में सबसे महत्त्वपूर्ण क्या हो सकती/सकता है?

8) बच्चा घर पर कैसे अनुशासित रहता है? घर में लगे प्रतिबंधों के विषय में वह कैसे अनुभव करता है तथा इन प्रतिबंधों को लागू करने की विधियों के विषय में उसके क्या विचार हैं?

9) क्या बच्चे को पता था कि मेरी उससे तथा उसके समकक्ष बच्चों से क्या अपेक्षाएं थीं?

10) अपने सहपाठियों के मध्य बच्चा अपने आपको कैसा 'आंकता' है? उसके मित्र कौन हैं?

11) मेरी कक्षा में कार्यात्मक (working) अवस्थाएँ कैसी हैं?

12) बच्चे के विद्यालयी कार्य का स्तर क्या है?

जीवन में बहुत पहले प्रारंभिक अवस्था में बच्चा सीख लेता है कि कुछ व्यवहार ऐसा होता है जिसे उसके माता-पिता भी सहन नहीं करते। उसके व्यवहार पर कुछ सीमाएँ लगी होती हैं? परंतु माता-पिता तथा अध्यापक कई बार यह भूल जाते हैं कि उन सीमाओं को कैसे लागू किया जाए। इस बात का बच्चे के जीवन पर प्रभाव पड़ता है। विशेषकर अध्यापकों को यह याद रखने की आवश्यकता है कि इससे पूर्व बच्चा उन सीमाओं को समझे, उसे इन सीमाओं को समझना चाहिए।

इन सीमाओं को सारी कक्षा के हित के लिए विद्यार्थी विशेष पर लागू करने में अध्यापक को यह जान लेना चाहिए कि मात्र बच्चे को दबाने से ही उस समस्या का समाधान नहीं हो जाता है जो अनापेक्षित व्यवहार से संबंधित है। वह बालक जिसे व्यवहार की दृष्टि से आज अध्यापक एक समस्या के रूप में देख रहा है उसे इस स्थिति तक पहुँचने में वास्तव में वर्षों लगे हैं। कई बार उसके वैयक्तिक इतिहास में उसके अनापेक्षित व्यवहार के लिए स्पष्ट कारण भी दिखाई देंगे। निम्नलिखित उदाहरण का अवलोकर करें :

शालिनी का उदाहरण

शालिनी की कक्षा अध्यापिका, श्रीमती जैन, शालिनी के विषय में इतनी चिंतित थी कि उसने शालिनी के बारे में समझने के लिए विद्यालय उपबोधक से सहायता मांगी। शालिनी कक्षा VII की छात्रा थी तथा उपस्थितियाँ कम होने के कारण उसके मामले की रिपोर्ट प्रधानाचार्य को की जानी थी। दोनों के द्वारा तथ्यों के ध्यान से किए सर्वेक्षण से पता चला कि शालिनी का अनुपस्थित रहना कक्षा VI के अंतिम सत्र में आरंभ हुआ जब वह अंकगणित के प्रश्नों को हल करने में कठिनाई का अनुभव करने लगी थी। देखा गया कि उसने अधिकांश छुट्टियाँ उन दिनों में ली जिन दिनों उसके अंकगणित की कक्षाएं होती थीं।

उपबोधन स्तरों की कुछ श्रृंखलाओं के पश्चात् उपबोधक ने अंकगणित में उसके लिए उपचारी कक्षाओं की योजना बनाई। मात्र 15 दिन की उपचारी कक्षाओं के पश्चात् ही, शालिनी के कार्य का स्तर सुधरता चला गया और उसने नियमित उपस्थितियों से संबंधित विद्यालय के अधिनियम को स्वीकार कर लिया, अर्थात् वह नियमित रूप से उपस्थित रहने लगी।

2.5.2 व्यवहार तथा अनुचित व्यवहार (दुर्व्यवहार)

चूँकि अध्यापक तथा निर्देशन कर्मियों का प्रशिक्षण तथा उनके दायित्व भिन्न-भिन्न होते हैं अतः वे बच्चे के व्यवहार को अलग-अलग नज़रिए से देखते हैं। अध्यापकों का सरोकार विद्यालय के नियमों तथा नैतिक मापदंडों के उल्लंघन से अधिक होता है। अध्यापकों का विश्वास है कि इस प्रकार नियमों का उल्लंघन विद्यार्थियों की वैयक्तिक समस्याओं से अधिक चिंताजनक होता है।

जबकि निर्देशन कर्मी तथा उपबोधक अध्यापकों की तुलना में बच्चे के आक्रामक व्यवहार को अधिक गंभीरता से लेते हैं। परंतु, दोनों ऐसे व्यवहारों से चिन्तित होते हैं, जैसे असामाजिकता, निर्दयता, चोरी करना तथा भय आदि।

बच्चे अनुचित व्यवहार क्यों करते हैं?

कक्षा के अंदर या कक्षा के बाहर बच्चे के अनुचित व्यवहार करने का कारण ऐसी स्थिति या ऐसा व्यक्ति होता है जो उसके नियंत्रण में नहीं होता/होती। निम्नलिखित बातें कक्षा में अनुचित व्यवहार का संभावित कारण बन सकती हैं :

1) **अनभिज्ञता :** नियमों की अनभिज्ञता अर्थात् उनकी जानकारी न होना, निश्चित रूप से वह कारण है जिससे बच्चा असामान्य व्यवहार करने लगता है। यदि विद्यार्थियों के सम्मुख नियमों की स्पष्ट रूप से संगठित नियमावली भी हो तो भी कई बार उसे यह पता नहीं चलता कि इनमें से कौन-से नियम लागू हो रहे हैं और कौन-से मात्र कागजों पर हैं। अतः उसके पास इस समस्या को हल करने का एक व्यावहारिक तरीका होता है। वह यह देखने के लिए *परीक्षण करने* लगता है, अध्यापक किस नियम को *ठीक समझते* हैं और *किस को नहीं*।

2) **परस्पर विरोधी नियम :** ऐसी अवस्था में जब कुछ व्यवहार जो घर पर (माता-पिता के साथ) प्रशंसनीय होते हैं परंतु विद्यालय में उन्हें अनुचित या अनैतिक माना जाता है, तो ऐसी अवस्था में विद्यार्थी एक द्वंद्व की स्थिति अनुभव करता है। उदाहरणार्थ, पड़ोस के बच्चे ने उसे मारा और उसने बदले में उस बच्चे को पीट डाला। जब वह बहते खून के साथ घर पहुँचा तो माता-पिता ने उसकी चोटों पर दवा लगा दी और कोई नकारात्मक शब्द नहीं कहा। विद्यार्थी ने वैसा ही व्यवहार विद्यालय में किया तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ कि अध्यापक ने उसे दंड दिया।

   स्पष्ट है कि बहुत से विद्यार्थी अनुशासन भंग करते हैं, मात्र इसलिए कि उनकी यह बात समझ में नहीं आती कि घर के नियमों तथा विद्यालय के नियमों में भेद कैसे किया जाए।

3) **कुंठा :** कक्षा में अनुशासन अनुपालन संबंधी समस्याओं से प्रायः यह लगता है कि जब विद्यार्थियों को असफलता का सामना करना पड़ता है तो उनकी कुंठा अत्यधिक बढ़ जाती है। कक्षा में कुंठा के कम से कम तीन स्रोत देखे गए हैं जिनसे कोई भी विद्यार्थी प्रभावित हो जाता है।

   क) अध्यापक

   ख) उसके सहपाठी

   ग) क्रियाकलाप

अहमद का उदाहरण

अहमद अपने विद्यालय का प्रतिभाशाली छात्र था। आरंभ से ही वह अपनी उत्कृष्ट शैक्षिक उपलब्धियों के कारण विशेष योग्यता प्रमाणपत्र (distinction) तथा छात्रवृत्ति लेता आ रहा था। अब वह नवीं कक्षा में था और कक्षा अध्यापक के लिए एक समस्या बन चुका था। उसके सहपाठियों की यह शिकायत थी कि वह खाली पीरियडों (कालांशों) में उन्हें पढ़ने नहीं देता, अपने साथ खेलने के लिए उन्हें मारता है और कमज़ोर विद्यार्थियों की खिल्ली उड़ाता है।

उसकी कक्षा अध्यापिका, श्रीमती अग्रवाल ने उसकी पूर्व कक्षा अध्यापिका (VIII की कक्षा अध्यापिका) से बातचीत करने से पहले कुछ दिन प्रतीक्षा की। इस अवधि में उसने देखा कि अहमद ने पहली साप्ताहिक परीक्षा में सभी विषयों में 80 प्रतिशत अंकों से अधिक अंक प्राप्त किए थे।

श्री सिंह (जो अहमद के पूर्व कक्षा अध्यापक थे) से तथा कुछ अन्य विद्यार्थियों से, जो अहमद के साथ प्राथमिक विद्यालय से पढ़ते आए थे, बातचीत करने के पश्चात्, श्रीमती अग्रवाल ने पाया कि यह समस्या उस समय आरंभ हुई जब वह कक्षा छह में पढ़ता

था। उस समय श्री सिंह उसके कक्षा अध्यापक पहली बार बने थे (तथा कक्षा VII और कक्षा VIII में भी कक्षा अध्यापक रहे)।

श्री सिंह को सभी विद्यार्थी पसंद करते थे तथा उनके सहयोगी भी उनका आदर करते थे। कक्षा में प्रथम स्थान प्राप्त करने के कारण अहमद श्री सिंह का चहेता विद्यार्थी बन गया।

एक बार अहमद ने अंग्रेज़ी विषय में 40 अंकों में से 39.5 अंक प्राप्त किए (इस विषय अंग्रेजी को श्री सिंह पढ़ाते थे)। अहमद ने श्री सिंह से अनुरोध किया कि उसके प्रगति अभिलेख में वह 39.5 को 40/40 लिख दें। अध्यापक ने जैसा अहमद ने अनुरोध किया, वह परिवर्तन उसके अंकों में कर दिया। यही घटना अगली परीक्षाओं में दोहरा दी गई, परंतु अब की बार श्री सिंह ने यह 1/2 अंक स्वयं ही बढ़ा दिए और उसके अंकों को 40/40 कर दिया। ऐसी ही घटनाएँ दो अन्य विषयों में हुई जो अन्य दो अध्यापकों द्वारा पढ़ाए गए थे। प्रगति कार्ड पर हस्ताक्षर करते समय श्री सिंह ने, जहाँ भी अहमद के अंक कुल अंकों से मात्र 1/2 या एक अंक कम थे, बढ़ा कर पूरे अंक कर दिए।

श्री सिंह का यह व्यवहार अन्य कक्षा के कार्यकलापों पर भी लागू हो गया। यदि किसी विद्यार्थी ने इस पक्षपात पूर्ण व्यवहार की शिकायत भी की तो श्री सिंह ने इस पर कोई ध्यान नहीं दिया। इसके पश्चात् अहमद ने इस उदारता त्रुटि (leniency) का शोषण करना आरंभ कर दिया और चूँकि उसके संबंध श्री सिंह से अच्छे थे अतः उसने अन्य बच्चों को सताना आरंभ कर दिया। जब यह व्यवहार नवीं कक्षा तक चलता चला गया तो यह ध्यान में आया क्योंकि श्रीमती अग्रवाल इस प्रकार अंकों के बढ़ाए जाने के पक्ष में नहीं थी। इससे अहमद में कुंठा के भाव जागने लगे और फलतः वह अधिकाधिक उग्र (आक्रामक) होता चला गया।

4) **विस्थापन :** अनुपयुक्त मनोवेग (sentiments) या भावनाएँ (feeling) प्रायः विद्यालय के व्यक्तियों या वस्तुओं पर विस्थापित हो जाती हैं। उदाहरण के लिए, ''मैरी'' (एक छात्रा) यह स्पष्ट रूप से जानती थी कि वह मिस रूबी की कक्षा अर्थात् अपनी भौतिकी की कक्षा में प्रसन्न नहीं रहती थी। वह अध्यापक द्वारा पूछे गए किसी प्रश्न का उत्तर नहीं दे पाती। मिस रूबी ने कक्षा में कभी भी मैरी की आवाज नहीं सुनी और प्रैक्टीकल की कक्षा में भी ऐसा ही होता था। वह अध्यापक से पूछने की बजाय अपने सहपाठियों से किसी प्रयोग का स्पष्टीकरण ले लेती थी। मिस रूबी ने कभी इसे असामान्य रूप में नहीं लिया। परंतु एक दिन जब वह बरामदे से गुजर रही थी, जहाँ मैरी का कमरा था तो वह यह देखकर आश्चर्यचकित हो गई कि मैरी कक्षा में जोर-जोर से कविता वाचन कर रही थी।

अगले दिन रूबी जानबूझ कर उस बरामदे में से कई बार गुजरी और यह जान कर और भी चकित रह गई कि मैरी सभी विषयों की कक्षा में सक्रिय रूप से भाग ले रही थी, सिवाय भौतिकी कक्षा के।

मैरी के माता-पिता से बातचीत करने के पश्चात् यह मालूम हुआ कि मैरी की सौतेली बहन का नाम भी रूबी था जिसके साथ उसकी कभी नहीं बनी। यही था मिस मैरी के असामान्य व्यवहार का कारण।

2.5.3 अनुशासित करने की नई विधियाँ

जब कोई अध्यापक/उपबोधक किसी विसामान्य (deviant) विद्यार्थी को अनुशासन में ढालना आवश्यक समझता है तो अन्य विद्यार्थियों जो इसके प्रत्यक्षदर्शी होते हैं पर भी इस विवाद का प्रभाव पड़ता है। इसे 'रिपल' या 'तरंग' प्रभाव कहते हैं। निम्नलिखित कारक तरंग प्रभाव को प्रभावित करते हैं :

1) **स्पष्टता :** 'स्पष्ट नियंत्रण' तकनीक वह होती है जिसमें विसामान्य बालक, विसामान्यता तथा अधिमान्य वैकल्पिक व्यवहार (preferred alternative behaviour) विशिष्ट रूप से दर्शाए गए हों। एक अध्यापक जो कक्षा में पीछे बैठे बच्चों में कुछ गड़बड़ देखता है और चिल्लाता है 'ऐ बच्चों बातें बंद करो' जब एक ऐसी नियंत्रण तकनीक का प्रयोग कर रहा है जिसमें कोई स्पष्टता नहीं होती है। जब सभी विद्यार्थियों को एक साथ टोका जाता है तो ऐसी अवस्था में विसामान्य बालक (deviant) भी निश्चित नहीं होते कि यह फटकार उनके लिए है या किसी अन्य के लिए।

   वही अध्यापक शोर करने वाले समूह के पास पीछे जाकर कह सकता था। ''अमरजीत, राजेश तथा जॉन, बातें बंद करो तथा और इन बीजगणित के प्रश्नों को पूरा करो।' इस आदेश की स्पष्टता उच्च है और श्रोता विद्यार्थियों पर भी वो लाभकारी प्रभाव डाल सकता है :

   क) वे इसके पश्चात् कम विसामान्य व्यवहार दर्शाएंगे।

   ख) उनके अधिगम संबंधी व्यवहार में विघ्न पड़ने की कम संभावना होगी जैसा कि अस्पष्ट तकनीक में होने की संभावना है।

2. **दृढ़ता :** 'मेरा सरोकार कार्य से है' इस प्रकार का आशय या गुण एक दृढ़ नियंत्रण तकनीक में निहित होता है। इसका संपादन अध्यापक की आवाज के लहजे से, हाव-भाव से या इशारों से हो सकता है। यह परिपालन विधि (follow through) से भी संभव है जिसका अर्थ है यह देखना कि अनुशासन संबंधी आदेश पूरे किए जाते हैं। पुनीत अपने पैन को बार-बार डेस्क पर मार कर खेल रहा था। इसके इस कार्य पर सभी सहपाठियों का ध्यान था और फलस्वरूप अध्यापक श्यामपट्ट पर क्या कर रहा है, इस बात की ओर किसी का ध्यान नहीं रहा। अध्यापिका ने एकदम लिखना छोड़ एक सख़्त आवाज़ में आदेश दिया 'पुनीत इस पैन को अपने बस्ते में रखो और इधर ध्यान दो'।

   अपना समस्त अवधान पुनीत पर केंद्रित करते हुए अध्यापक पुनीत को देखती रही कि वह अपने बैग की जेब को खोलता है, पैन को अंदर रखता है, इसे पुनः बंद करता है। जब पुनीत यह सब कार्य करने के पश्चात् अध्यापिका की ओर अभिमुख हुआ तभी अध्यापिका ने अपना कार्य पुनः आरंभ किया।

3) **संकेन्द्रण :** संकेन्द्रण नियंत्रण की दो तकनीकें हैं– i) अनुमोदन-संकेंद्रित तकनीक (Approval focuussed) तथा ii) कार्य-संकेन्द्रित तकनीक (taks- focussed)। अनुमोदन-संकेन्द्रित तकनीक अपने प्रभाव के लिए अध्यापक और विसामान्य बालक के बीच संबंध पर निर्भर करती है जबकि कार्य संकेन्द्रित तकनीक में अध्यापक की अपेक्षाओं तथा कार्य के बीच 'संयोजन' स्थापित किए जाते हैं।

अध्यापक द्वारा संकेन्द्रण-नियंत्रण तकनीकों के उपयोग के उदाहरण :

1) **अनुमोदन-संकेन्द्रित :** मुझे बड़ी निराशा हुई, जब मैंने आपको बातें करने से मना किया परंतु आप फिर भी चुप नहीं हुए। मेरा विचार था कि इन सब कार्यों की तुलना में आप मेरा आदर अधिक करते हो।

2) **कार्य-संकेन्द्रित :** "आपको चाहिए कि जब मैं पढ़ाऊं तो आप चुप रहें और सुनें, अन्यथा आप बाद में मेरे प्रश्नों का उत्तर नहीं दे पाएंगे। मैं इस पाठ को दुबारा नहीं पढ़ाऊँगा।"

साक्ष्य दर्शाते हैं कि अनुमोदन-संकेंद्रित तकनीकों की तुलना में कार्य-संकेंद्रित तकनीकें अपेक्षाकृत ज्यादा वांछित रिपट तरंग प्रभाव डालती हैं।

3) **संकेत अवरोध (Signal interference) :** बिना शब्दों का प्रयोग किए अध्यापक अपने तेवरों से या और कुछ संकेतों द्वारा अनुशासनभंजक विद्यार्थी को यह स्पष्ट कर देता है कि वह उसके विषय में जानता है कि वह क्या अनुचित व्यवहार कर रहा/रही है। उदाहरण के लिए, एक कुपित या क्रुद्ध मुद्रा का प्रयोग करना, उसकी सीट के निकट जाकर खड़े हो जाना इत्यादि।

4) **स्थानिक (भौतिक) सान्निध्य (समीपता) :** एक कक्षा का संचालन करते समय, समीपता का सिद्धांत भी काफी लाभकारी होता है। जैसे दोषियों को अध्यापक की कुर्सी के पास बिठाकर अध्यापक उनकी शरारतों पर नियंत्रण रख सकता है।

5) **अभिप्रेरणात्मक पुनरावेशन (Motivational recharging) :** कई बार अध्येता कक्षा में मात्र इसलिए अनुचित व्यवहार (शरारत) करते हैं क्योंकि नियमित कार्यक्रम से ऊब जाते हैं। ऐसी अवस्था में शिक्षण विधियों में कुछ परिवर्तन करना उपयुक्त होगा। उदाहरण के लिए, अध्यापक कक्षा के आरंभ में या उस के अंत में कुछ छोटे-छोटे खेल खिला सकता है ताकि विद्यार्थियों की अभिप्रेरणा को पुनःआवेशित किया जा सके। ये खेल हो सकते हैं : प्रश्नावली, भूमिका, अभिनय इत्यादि।

6) **हास-परिहासजन्य विश्रांति (comic relief) :** उस अवस्था में जबकि वे किसी समय कार्य से ऊब जाते हैं तो विद्यार्थियों को नियंत्रण में रखने की यह एक और विधि है। अध्यापक कुछ हंसी-मजाक की टिप्पणी कर सकते हैं और विद्यार्थियों को भी वैसी टिप्पणी करने के लिए उत्साहित कर सकते हैं।

7) **कार्योत्तर जाँच सत्र (Post-mortem Session) :** यदि कोई अध्यापक किसी बच्चे को अनुचित या अभद्र व्यवहार करते देखें तो वह तत्काल उस बच्चे को कुछ न कहें, मात्र सामान्य रूप से इतना कहें 'अपने व्यवहार को ठीक करें'। परंतु कक्षा समाप्ति पर वह अध्यापक उस विद्यार्थी को कक्षा से बाहर ले जाएँ तथा कक्षा में किए गए अनुचित व्यवहार के विषय में बच्चे से बातचीत करें। उस व्यवहार की पूर्ण विवेचना करें ताकि बच्चा यह समझ सके कि उसका व्यवहार वस्तुतः अनुचित था तथा ऐसा उसे नहीं करना चाहिए।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

9) संक्षिप्त रूप में व्याख्या कीजिए।

क) परस्पर विरोधी नियम

.....

.....

.....

ख) विस्थापन

.....

.....

.....

.....

ग) दृढ़ता

.....

.....

.....

.....

10) निम्नलिखित में से अनुशासन की सर्वोत्तम परिभाषा कौन-सी है?

क) आत्म-नियंत्रण तथा क्रमबद्ध आचरण विकसित करने के लिए दिया गया प्रशिक्षण।

ख) सत्ता को स्वीकार करना अर्थात् उसकी अधीनता में रहना।

ग) दिए गए नियमाधिनियम के प्रति अथवा एक बाह्य सत्ता के प्रति आंतरिक अनुशासन की भावना।

11) निम्नलिखित कथनों को सत्य और असत्य दो वर्गों में वर्गीकृत कीजिए :

क) अनुशासन के बिना अध्यापन तथा अनुशासन के साथ अध्यापन एक जैसी चीज़ है।

ख) बच्चों के लिए महत्त्वपूर्ण है कि वे अपने व्यवहार पर लगाए प्रतिबंधों के पीछे निहित तर्क को समझे।

ग) बच्चा जब भी अभद्र व्यवहार करें, उसे सदैव दंडित किया जाए।

घ) एक कार्य-संकेन्द्रित नियंत्रण तकनीक का तरंग प्रभाव एक अनुमोदन-संकेन्द्रित तकनीक विधि से अधिक होता है।

ङ) किसी बच्चे के अभद्र या अनुचित व्यवहार के संदर्भ में बच्चे की समस्या पर कक्षा से बाहर चर्चा करना अच्छा होता है न कि समस्त कक्षा के सम्मुख उसके व्यवहार के लिए उसे फटकारना।

2.6 निर्देशन और अन्य पाठ्यचर्या क्षेत्र

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (framework), 2005 में विद्यालय की पाठ्यचर्या में कला, स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा को शामिल करने के महत्त्व पर बल दिया गया है। अधिकांश विद्यालय इन्हें पाठ्यचर्या का हिस्सा नहीं मानते। इसी कारण इस ओर ज्यादा ध्यान नहीं देते। प्रायः माना जाता है कि ये फुर्सत के समय किए जाने वाली मनोरंजक गतिविधियां हैं। और कभी-कभी विद्यालयों में सांस्कृतिक/खेल दिवस के रूप में आयोजित की जाती है। निर्देशन कार्यकर्ताओं और अध्यापकों को कला, स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा को पाठ्यचर्या के ही क्षेत्र मानना चाहिए क्योंकि इनमें बच्चों के समग्र विकास हेतु योगदान का सामर्थ्य है।

कला शिक्षा

दृश्य और निष्पादन कक्षाओं (performing arts) को विद्यालय की पाठ्यचर्या का अभिन्न हिस्सा क्यों होना चाहिए?

''दूसरों के संबंध में स्वयं की खोज में, स्वयं की समझ का विकास और आलोचनात्मक सहानुभूति के लिए रंगमंच न केवल मनुष्यों में ही, बल्कि प्राकृतिक, भौतिक और सामाजिक विश्व में सर्वश्रेष्ठ माध्यम है (एनसीएफ 2005, पृष्ठ 54)।''

''बच्चों को किसी विषय-वस्तु को समझाने व स्पष्ट करने के लिए अध्यापकों द्वारा कई बार नाटकीकरण तकनीक का इस्तेमाल किया जाता है। लेकिन रंगमंच कला विधा का प्रयोग सीमित रूप में ही किया जा सकता है। ये अधिक सार्थक अनुभव भूमिका निर्वाह, रंगमंच अभ्यासों, में शरीर एवं स्वर की गति एवं नियंत्रण सामूहिक एवं सहज प्रदर्शन द्वारा संभव हो सकते हैं (एनसीएफ 2005)।''

स्वयं अपने हाथों से काम करना, सामग्री व तकनीकों का प्रयोग करना प्रक्रिया को समझने में, संसाधन संपन्न होने में, पहल करने, समस्या का समाधान करने में सहायता करते हैं। ये अनुभव बच्चों के लिए मूल्यवान होते हैं, और किसी अन्य अनुभव के पर्याय नहीं हो सकते। यह क्षेत्र समावेशी शिक्षा के लिए भी सार्थक व अनुरूप है'' (एनसीएफ 2005)।

कला के किसी रूप (संगीत, नृत्य, थियेटर कला (शिल्प) स्वयं के संज्ञानात्मक और सामाजिक दोनों के विकास में योगदान देते हैं। हालांकि, विद्यालयों में कला शिक्षा को कोई महत्त्व नहीं दिया जाता। विद्यालयों में विषय आधारित पाठ्यचर्या का अनुसरण करते हुए बच्चों के संज्ञानात्मक विकास पर ज्यादा बल दिया जाता है। विद्यालय द्वारा दी जाने वाली उपलब्धि परीक्षाओं में अच्छा निष्पादन न करने वाले बच्चों को पढ़ाई में कमज़ोर (नालायक) माना जाता है। उपलब्धि-परीक्षाओं में खराब निष्पादन से बच्चे का अपनी योग्यताओं के बारे में आत्मविश्वास धीरे-धीरे कम होने लगता है। विद्यालय की विषय-आधारित पाठ्यचर्या में बच्चों के भिन्न-भिन्न तरीकों से स्वयं को अभिव्यक्त करने के लिए प्रोत्साहित नहीं किया जाता। उपलब्धि परीक्षण विद्यालय की एकमात्र अपेक्षित अभिव्यक्ति है जिसमें कुछ बच्चों का निष्पादन खराब हो जाता है। कला विधाओं का प्रयोग करके निर्देशन कार्यकर्ता और अध्यापक ऐसे बच्चे को दर्शा सकते हैं कि वह भिन्न-भिन्न तरीके से खोज और ज्ञान को अभिव्यक्त कर सकते हैं। इस प्रकार, वे उनकी संज्ञानात्मक योग्यताओं में विश्वास का समावेश करा सकते हैं।

भूमिका निर्वाह स्वयं की और दूसरों के साथ इसके संबंध का अन्वेषण करने का एक सशक्त साधन है। कुछ बच्चों को स्वयं के साथ और दूसरों के साथ सामाजिक और संवेगात्मक

समायोजना में सहायता की ज़रूरत हो सकती है। भूमिका निर्वाह के माध्यम से, निर्देशन कार्यकर्ता और अध्यापक ऐसे बच्चों की मदद कर सकते हैं, ताकि वे स्वयं की और स्वयं दूसरों के बीच संबंध की छानबीन की अभिव्यक्ति कर सकें। इस तरह, बच्चों को उनके सामाजिक-संवेगात्मक समायोजन व्यवहार में आने वाली बाधाओं का पता लगाने और खुशहाल जीवन के लिए उन्हें परिवर्तित करना सीखने योग्य बना सकते हैं।

स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा

यह पाठ्यचर्या का एक अन्य महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है जो बच्चों के सर्वांगीण शारीरिक कुशलक्षेत्र को प्रभावित करता है। अल्पपोषण और संचरणीय रोग कई बच्चों को स्वास्थ्य खतरे वाले बच्चों की श्रेणी में ले आते हैं। ''स्वास्थ्य बच्चे के समग्र विकास का सूचक होता है और यह नामांकन, विद्यालय में उपस्थित और पढ़ाई पूरी करने को प्रभावित करता है।'' (एनसीएफ 2005, पृ. 56)। बच्चों के शारीरिक, मानसिक, भावात्मक और मानसिक विकास के लिए निर्देशन कार्यकर्ता और अध्यापकों द्वारा उन्हें स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा प्रदान करना ज़रूरी है। अन्य सरोकार किशोरों के प्रजनन और यौन संबंधी स्वास्थ्य से संबद्ध रखते हैं। अतः निर्देशन कार्यकर्ता और अध्यापकों के किशारों की प्रजनन और यौन स्वास्थ्य संबंधी ज़रूरत पर ध्यान दिए जाने की ज़रूरत है। उचित निर्देशन के अभाव में किशोरों के शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य तथा उनके भावी जीवन के लिए खतरनाक सिद्ध हो सकता है।

2.7 निर्देशन और यथातथ्य (आभासी) जगत

सोशल मीडिया हमारे आज के जीवन पर बहुत ज्यादा हावी है। बच्चे अपना अधिकांश समय इंटरनेट पर ब्राउजिंग में व्यतीत करते हैं और फेसबुक, इंस्टाग्राम या ऐसे अन्य सोशल मीडिया पर सक्रिय रहते हैं।

उपबोधन और वर्चुअल मीडिया

एक ही स्थान पर शारीरिक रूप से उपस्थित न रहते हुए भी आभासी जगत में एक-दूसरे के साथ अंतःक्रिया/बातचीत कर पाना उन्नत सूचना-संचार प्रौद्योगिकी (ICT) के कारण ही संभव हो पाया है। माउस को क्लिक करके हम विश्वभर की सूचना प्राप्त कर सकते हैं। इसी तरह, माउस को क्लिक करके विश्वभर में सूचना प्रसारित भी की जा सकती है।

सोशल मीडिया

करोड़ों लोग फेसबुक, स्नैप चैट, ट्विटर, वाट्सएप, यू-ट्यूब आदि जैसे सोशल मीडिया प्लेटफार्म पर एक-दूसरे के साथ अंतर्क्रिया करते हैं। पाठ्यपुस्तकों/टिप्पणियों/फोटो, श्रव्य और दृश्य रूप में प्रयोग-जनित वर्ण्य-विषय को तैयार करने व उससे दूसरों तक पहुँचाने/सूचित करने की सामर्थ्य रखने वाला सोशल मीडिया आज एक अत्यंत लोकप्रिय माध्यम है। सोशल मीडिया निःशुल्क मीडिया है जो किसी भी एजेंसी द्वारा सीधे नियंत्रित नहीं है। कई बच्चे इन सोशल मीडिया वेबसाइड का प्रयोग करते हैं और आभासी (वर्चुअल) समुदायों के साथऑन-लाइन जुड़कर अपना समय व्यतीत करते हैं। सोशल मीडिया पर लोग असंशोधित व असंमाजित विषय-वस्तु सृजित, शेयर (सांझा) और प्राप्त करते हैं। अतः निर्देशन कार्यकर्ताओं, अध्यापकों और अभिभावकों को सावधान व सतर्क रहने और शेयर और प्राप्त/निर्मित की जाने वाली विषय-वस्तु के बारे में उनका मार्गदर्शन करना चाहिए। सोशल मीडिया प्लेटफार्मों द्वारा प्राप्त होने वाली सूचना या जानकारी की विश्वसनीयता के बारे में पता लगाने में निर्देशन कार्यकर्ताओं और अध्यापकों को बच्चों की मदद करनी चाहिए।

साइबर धमकियाँ

इलेक्ट्रॉनिक संचार का प्रयोग करके किसी को डराना-धमकाना या तंग करना साइबर धमकियाँ (bullying) कहलाता है। साइबर जगत में ये बहुत आम बात है और कई बच्चे इसका शिकार भी हो जाते हैं। साइबर बुलिंग के शिकार को प्रायः इसके गंभीर परिणामों का सामना करना पड़ता है क्योंकि धमकाने के लिए प्रयुक्त की गई विषय-वस्तु (सामग्री) को आगे और लोगों के साथ भी शेयर किया जा सकता है और काफी समय तक उपलब्ध रहता है तथा यह कई अन्य तक पहुँचती रहती है। शिकार व्यक्तियों को इस दीर्घकालीन साइबर बूलिंग से निपट पाना कठिन हो जाता है। इससे उसका संतुष्टि स्तर निम्न हो जाता है, जिसके कारण वह भावात्मक व संवेगात्मक रूप में अस्थिर हो जाता है या अवसाद ग्रस्त हो जाता है और साइबर बूलिंग के शिकार व्यक्ति द्वारा अपनी जीवन-लीला को समाप्त कर लेना इसका चरम रूप है। अतः बच्चों को आभासी समुदाय सदस्यों के संभावित ऑनलाइन व्यवहार की जानकारी और उससे कैसे निपटा जाए, इनकी जानकारी दी जानी चाहिए। निर्देशन कार्यकर्ताओं, अध्यापकों को बच्चों में सहायता मांगने और पहली बार में ही साइबर बुलिंग से निपटने हेतु उनमें आत्मविश्वास जागृत करना चाहिए।

साइबर आचार-संहिता (आचार नीति)

बच्चों में नैतिक ऑनलाइन व्यवहार के बारे में जागरुकता पैदा करना एक अन्य महत्त्वपूर्ण क्षेत्र है। निदेशन कार्यकर्त्ताओं और अध्यापकों को इस ओर ध्यान देना चाहिए। बच्चों के ऑनलाइन व्यवहार पर नज़र रखनी चाहिए क्योंकि सोशल मीडिया निःशुल्क और अनियंत्रित है। प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी रूप में स्वयं को अभिव्यक्त करने की आज़ादी है। इस बेलगाम आज़ादी के कारण बच्चे गैर-जिम्मेदाराना व्यवहार दर्शा सकते हैं और समाज की कानूनी और नैतिक व्यवस्था के साथ टकरा सकते हैं। अतः बच्चों को ऐसे अनैतिक और अस्वीकार्य ऑनलाइन व्यवहार के बारे में बताया जाना चाहिए और उन्हें इन व्यवहारों में लिप्त होने से रोकना चाहिए। उदाहरण के लिए, निम्नलिखित ऑनलाइन व्यवहार अनैतिक और अस्वीकृत है :

- साइबर बुलिंग– जिसका अभिप्राय है, किसी भी इलैक्ट्रॉनिक रूप में ऐसी किसी भी विषय-वस्तु (सामग्री), को सृजित, पोस्ट या शेयर करना जिसका आशय दूसरे लोगों को चोट और हानि पहुँचाना हो।
- इंटरनेट के अनाधिकृत संसाधनों तक पहुँच।
- दूसरे लोगों की कम्प्यूटर फाइलों में जासूसी करना।
- दूसरे लोगों की कम्प्यूटर फाइलों को नष्ट करना या क्षति पहुँचाना।
- अन्य लोगों की निजता का सम्मान न करना।
- इलैक्ट्रॉनिक उपकरण के माध्यम से दूसरे लोगों की बौद्विक संपदा की चोरी करना।
- दूसरे लोगों के व्यक्तिगत आंकड़ों को हड़पना/अपनाना और जाली (झूठी) पहचान सृजित करना।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि साइबर प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया का प्रयोग करने से जुड़े सामाजिक, कानूनी और नैतिक मुद्दों के प्रति सजग व सावधान रहना चाहिए। हमें अपने बच्चों को साइबर प्रौद्योगिकी के प्रयोक्ता के रूप में ईमानदारी, न्यायपूर्ण और जिम्मेदारी से कार्य करना सिखाना चाहिए।

2.8 सारांश

निर्देशन कार्यक्रम का विद्यालय के लिए योगदान इन रूपों में होता है– क) पाठ्यक्रम निर्माण में सहायक होना; ख) कक्षा में श्रेष्ठ अधिगम-अनुभव प्रदान करना; तथा ग) कक्षा अनुशासन संबंधी समस्याओं से निपटने के लिए विभिन्न तरीकों का सुझाव देना।

पाठ्यचर्या पर उन सभी सुनियोजित अधिगम अनुभवों के रूप में चिंतन किया गया है जो विद्यालय अपने विद्यार्थियों को प्रदान कर सकता है। इससे बच्चों की सामान्य तथा विशिष्ट दोनों प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति होनी चाहिए तथा सामाजिक व्यवस्था की आवश्यकताएँ तथा अपेक्षाएं भी पूरी हो जानी चाहिए। एक उपयुक्त पाठ्यचर्या में उन सभी बातों को भी ध्यान में रखना चाहिए जो अधिगम प्रक्रिया के विषय में ज्ञात हैं। विद्यालयी विषयों के माध्यम से निर्देशन की समीक्षा की गई जिसमें मूल्य विकास पर विशेष बल दिया गया।

अधिगम को अनुभवों के माध्यम से व्यवहार में लाए गए परिवर्तन के रूप में समझा गया। अधिगम प्रक्रिया में व्यक्तित्व के बौद्धिक एवं शारीरिक दोनों पक्षों की आवश्यकता पड़ती है। अधिगम को सुकर बनाने के लिए कुछ मनोवैज्ञानिक कारकों, जैसे– अभिप्रेरणा, आवश्यकताएँ इत्यादि को भी ध्यान में रखा जाना चाहिए।

किसी भी व्यक्ति को, जो कक्षा में पढ़ाने के आशय से जाता है चाहे वह कक्षा अध्यापक हो, विषय अध्यापक हो, उपबोधक हो अथवा कोई अन्य आमंत्रित व्यक्ति को, यह भली-भांति विदित होता है कि यदि कक्षा अनुशासित हो तो अध्यापन सरल हो जाएगा। अनुशासनहीनता उस समय उत्पन्न होती है जब या तो व्यक्ति नियमों से अनभिज्ञ हो या नियम परस्पर विरोधी हों, बच्चे कुंठित रहते हों या फिर भाव विस्थापन (feeling displacement) घटित हो गया हो। इन अवस्थाओं को मैरी का उदाहरण देकर स्पष्ट किया गया है। स्पष्टता, दृढ़ता तथा संकेन्द्रण इत्यादि उन कुछ तकनीकों के उदाहरण हैं जिनके द्वारा कक्षा में अनुशासन कायम रखा जा सकता है अथवा स्थापित किया जा सकता है।

हमने यह भी चर्चा की है कि किस प्रकार कला, स्वास्थ्य और शारीरिक शिक्षा का प्रयोग करके निर्देशन कार्यकर्ता बच्चों की भावात्मक जरूरतों और विकास से निपट सकते हैं। चर्चा का अन्य महत्त्वपूर्ण मुद्दा था– विद्यालय के बच्चों द्वारा नए युग के मीडिया का प्रयोग किया जाना। बच्चों को इन नवीन मीडिया प्रौद्योगिकियों से जो खतरे या नुकसान हो सकते हैं, उनसे निपटने में निर्देशन कार्यकर्ताओं और अध्यापकों द्वारा बच्चों की सहायता करने का महत्त्व।

2.9 इकाई के अंत में अभ्यास कार्य

1) किसी कक्षा का दौरा करें और किसी कक्षा की आवश्यकताओं की पहचान करें, जो एक संगत के सार्थक पाठ्यचर्या का प्रथम मानदंड है। विद्यालय के कार्यकलापों का अवलोकन करें और मालूम करें कि पाठ्यचर्या किन-किन आवश्यकताओं की पूर्ति कर रही है तथा कौन-सी आवश्यकताएँ पूर्ण नहीं हो रही। एक रिपोर्ट तैयार कीजिए।

2) किसी एक कक्षा का अवलोकन करें तथा मालूम करें कि किस प्रकार के अनुशासन में अध्यापक का व्यक्तित्व एक महत्त्वपूर्ण घटक है।

3) किसी एक ऐसे विद्यार्थी का अवलोकन करें जो अनुशासन संबंधी समस्याएँ उत्पन्न कर रहा है। इस विद्यार्थी के उदाहरण की सहायता से या इस संदर्भ में उन सभी प्रश्नों के उत्तर तैयार कीजिए जो ऊपर उप-इकाई ''अनुशासन'' के अंतर्गत अनुशासन संबंधी समस्याओं के परिचालन के लिए दी गई निर्देशिका में पूछे गए हैं।

4) निर्देशन और पाठ्यचर्या को समाकलिक (संघटित) करने की आवश्यकता हमें क्यों पड़ती है?

ignou THE PEOPLE'S UNIVERSITY

इकाई 3 निर्देशन कार्यक्रम में कार्मिक

इकाई की रूपरेखा

3.1 प्रस्तावना

3.2 उद्देश्य

3.3 निर्देशन कार्यक्रम और निर्देशन कार्मिकों की आवश्यकता

- 3.3.1 निर्देशन कार्यक्रम की आवश्यकता
- 3.3.2 निर्देशन कार्मिकों की आवश्यकता

3.4 निर्देशन कार्मिकों के रूप में उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक

3.5 निर्देशन कार्मिकों की भूमिका

- 3.5.1 उपबोधक/परामर्शदाता
- 3.5.2 वृत्तिक उपबोधक
- 3.5.3 अध्यापक
- 3.5.4 उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक की तुलनात्मक भूमिकाएँ

3.6 विद्यालयों में आवश्यकता आधारित न्यूनतम निर्देशन कार्यक्रम और कार्मिकों की भूमिका

3.7 सारांश

3.8 इकाई के अंत में अभ्यास कार्य

3.1 प्रस्तावना

आप इस तथ्य से परिचित हैं कि मानव संसाधन विकास हमारे सभी मानवीय कार्यकलापों का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उद्देश्य है और इसी तरह यह शिक्षा के लिए भी महत्वपूर्ण है। शिक्षा एक सशक्त क्षेत्र (potential area) है जो मानव संसाधन विकास में सहायता करता है। पढ़ना, लिखना और अंकगणित (हिसाब-किताब) ही शिक्षा का एकमात्र उद्देश्य नहीं हैं बल्कि यह तभी पूरा होता है जब किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व का सर्वतोमुखी विकास ही जाता है। आप जानते ही हैं कि मार्गदर्शन प्रत्येक व्यक्ति के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। निर्देशन शैक्षिक प्रक्रिया में सहायक भूमिका निभाता है। वास्तव में निर्देशन शिक्षा का अभिन्न अंग है। मार्गदर्शन प्रत्येक व्यक्ति को निर्देशित करता है व उसमें उसकी पूर्णतम क्षमता विकसित करने के लिए सहायता करता हैं। निर्देशन कार्यक्रम में उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक/वृत्तिक अध्यापक और अध्यापक को शिक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने में विशिष्ट भूमिकाएँ निभानी पड़ती हैं।

विद्यालयों में व्यवस्थित निर्देशन कार्यक्रम के लिए एक पूर्णकालिक उपबोधक और अन्य साज-सज्जा की आवश्यकता होती है। परन्तु पूर्णकालिक उपबोधक के अभाव में, जैसा कि वर्तमान में हमारे विद्यालयों में होता है, वृत्तिक, उपबोधक और अध्यापक की भूमिका और भी महत्त्वपूर्ण हो जाती है। यद्यपि वृत्तिम उपबोधक जो कि निर्देशन में प्रशिक्षित होता है फिर भी विद्यालयों में निर्देशन कार्यकलाप आयोजित करने में उसकी अपनी सीमाएँ होती हैं। निर्देशन और उपबोधन में प्रशिक्षित न होने के कारण अध्यापक की भूमिका भी बहुत सीमित हो जाती है।

पूर्णकालिक निर्देशन कार्मिकों के अभाव में विद्यालयों में आवश्यकता-आधारित न्यनूतम निर्देशन कार्यकलाप आयोजित किए जा सकते हैं। तथापि पूर्णकालिक उपबोधक होने के

बावजूद भी वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक की भूमिका स्वाभाविक रूप से सहायक होती है। अभिभावक और स्वैच्छिक संगठन भी निर्देशन कार्यकलाप आयोजित करने की दिशा में अपनी भूमिकाएँ निभाते हैं। अतः निर्देशन एक सहकारी कार्य कहा जाता है।

3.2 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आपः

- विद्यालयों में निर्देशन और निर्देशन कार्मिकों की आवश्यकता को समझ सकेंगे;
- निर्देशन कार्यक्रम की दृष्टि से उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक शब्दों की संकल्पना को समझ सकेंगे;
- निर्देशन कार्यक्रम में उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक की भूमिका को स्पष्ट कर सकेंगे;
- विभिन्न निर्देशन कार्मिकों द्वारा दिए जाने वाले विभिन्न कार्यकलापों की रूपरेखा प्रस्तुत कर सकेंगे;
- विद्यालयों में आवश्यकता-आधारित न्यूनतम मार्गदर्शन कार्यक्रमों की योजना बना सकेंगे एवं उन्हें संचालित कर सकेंगे; तथा
- उपबोधकों, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक की भूमिका की तुलना कर सकेंगे।

3.3 निर्देशन कार्यक्रम और निर्देशन कार्मिकों की आवश्यकता

3.3.1 निर्देशन कार्यक्रम की आवश्यकता

निर्देशन एक ऐसा कार्य है, जो शैक्षिक कार्यक्रम के साथ तो नहीं जोड़ा जा सकता है तथापि यह इस कार्यक्रम का एक अपरिहार्य अंग है। आज विश्व जटिल हो गया है। एक पीढ़ी के बाद जीवन का पूरा ढांचा मूल रूप से बदल जाता है। ये परिवर्तन निर्देशन सेवाओं को शिक्षा का अमूल्य और अपरिहार्य अंग बनाते हैं। निर्देशन को विशेष मनोवैज्ञानिक अथवा सामाजिक सेवा नहीं समझा जाना चाहिए जो सतही दृष्टि में शिक्षा से जुड़ा है। कुछ लोगों का विचार है कि निर्देशन व्यावसायिक प्रशिक्षण के बिना संभव नहीं है। कोई भी व्यक्ति बालक की कुछ अधिक जटिल निजी-सामाजिक समस्याओं को सुलझाने में उसकी सहायता करने के लिए व्यावसायिक सेवा की आवश्यकता को नकार नहीं सकता। तथापि कोई भी मार्गदर्शनोन्मुख अध्यापकों की भूमिका का भी अनुमान लगा सकता है। अध्यापक शैक्षणिक, व्यावसायिक परिपक्वता, निजी और सामाजिक विकास जैसे क्षेत्रों में बालकों की वृद्धि और विकास को बढ़ाने में अपनी भूमिका निभाते हैं। विस्तृत जानकारी के लिए देखें ई.एस. 363 की इकाई 6 'निर्देशन कार्यक्रम'।

3.3.2 निर्देशन कार्मिकों की आवश्यकता

निर्देशन का आधार अच्छे मानवीय संबंधों में निहित है। विद्यालय का एक विद्यार्थी लगातार अपने सहपाठियों, विद्यालय के स्टाफ सदस्यों, अपने परिवार के सदस्यों और समुदाय के साथ अंतःक्रिया करता रहता है। इन सभी व्यक्तियों का विद्यार्थी के जीवन पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। अधिकांश मानव समय-समय पर जीवन भर कठिन निर्णयों को लेने में दूसरे लोगों की सलाह, परामर्श और सहायता पर निर्भर रहते हैं। विद्यालयी विद्यार्थी को भी अपने व्यक्तित्व के सभी पहलुओं के संबंध में अपने निर्माणात्मक वर्षों (formative years) में निर्देशन

की आवश्यकता पड़ती है। वह हमारी संस्कृति के अनुसार (शारीरिक रूप से), बौद्धिक रूप से और भावात्मक रूप से विकास करता है ताकि वह समाज का एक सुसमायोजित सदस्य बन सके। इसलिए निर्देशन में पर्याप्त और सुप्रशिक्षित कार्मिकों की आवश्यकता का एक स्पष्ट कारण मूल रूप से वयस्कों पर बालकों का निर्भर होना है। विद्यालयों में निर्देशन कार्मिकों को रखने का अन्य कारण सामाजिक, वृत्तिक, व्यावसायिक और शैक्षिक जीवन के लगभग सभी पहलुओं में अत्यधिक जटिलता की वृद्धि और विकास के होने से उत्पन्न होता है। आजकल हमारे विद्यालय पढ़ना, लिखना और हिसाब-किताब सिखाने तक ही सीमित नहीं हैं। घर भी निजी और सामाजिक समस्याओं जैसी कुछ बातों का ध्यान रखता है। परन्तु समय बदल गया है और बालकों तथा युवाओं का निर्देशन करने के लिए प्रशिक्षित कार्मिकों की अधिक से अधिक आवश्यकता है। चूँकि समाज अधिकाधिक जटिल होता जा रहा है, इसलिए समाज से जुड़ी जानकारी देने की आवश्यकता बढ़ती जा रही है। अतः विद्यार्थी बालक के जीवनयापन संतोषप्रद रूप से करने के लिए, अपनी क्षमताओं और सीमाओं को जानने हेतु प्रशिक्षित कार्मिकों से सहायता प्राप्त करना अत्यंत आवश्यक है। निर्देशन की आवश्यकता को पूरा करने के लिए विद्यालय में सुशिक्षित निर्देशन कार्यकर्ता पर्याप्त संख्या में उपलब्ध होने चाहिए। पहले निर्देशन की आवश्यकता मूलरूप से व्यावसायिक नियोजन तक सीमित थी। अब इसका व्यापक अर्थ में प्रयोग हो रहा है।

व्यक्ति विशेष की समग्रतावादी अवधारणा के कारण निर्देशन कार्य के लिए अधिक कार्मिकों की आवश्यकता होती है। निर्देशन कार्य केवल विद्यालय का कार्य नहीं है बल्कि यह तो विद्यालय, घर, समुदाय और देश में रह रहे लोगों का संयुक्त कार्य है। निर्देशन कार्य के लिए समर्पित कार्मिक व्यक्ति के विकास करने और उसकी अपनी समस्याओं को सुलझाने तथा संतोषपूर्वक रहने में एवं उसको तथा समाज को लाभ पहुँचाने में उसकी सहायता करते हैं।

हम व्यापक अर्थ में यह कह सकते हैं कि कोई भी व्यक्ति जो विद्यालयी विद्यार्थियों के चहुँमुखी विकास में पर्याप्त सहायता करे, वह निर्देशन का कार्मिक होता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत, उपयुक्त शब्द पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) निर्देशन शिक्षा का अतिरिक्त दायित्व है। (सही / गलत)

ii) निर्देशन शिक्षा का अपरिहार्य अंग है। (सही / गलत)

iii) निर्देशन विद्यार्थियों की संवृद्धि और विकास में सहायता करता है। (सही / गलत)

iv) अच्छे मानव संबंध निर्देशन की पहली शर्त है। (सही / गलत)

v) कोई भी व्यक्ति विद्यालयों में मार्गदर्शन आरंभ कर सकता है। (सही / गलत)

vi) सभी अध्यापक निर्देशन कार्यकर्ता नहीं होते। (सही / गलत)

vii) निर्देशन कार्यक्रमों में प्रशिक्षित कार्मिकों की आवश्यकता नहीं पड़ती। (सही / गलत)

viii) उपबोधक ही एकमात्र व्यक्ति होता है जो निर्देशन कार्य कर सकता है। (सही / गलत)

ix) बालक की शिक्षा और उसके वृत्तिक नियोजन (career planning) में निर्देशन कार्यकर्ताओं का मत ही अंतिम निर्णय होता है। (सही / गलत)

x) प्रधानाचार्य / मुख्य अध्यापक निर्देशन कार्मिक नहीं होता। (सही / गलत)

3.4 निर्देशन कार्मिकों के रूप में उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक

आप सभी स्तरों पर विद्यालयों में निर्देशन कार्यकलापों की आवश्यकता के बारे में और इन कार्यकलापों को कार्यान्वित करने के लिए निर्देशन कार्मिकों की जरूरत के बारे में पहले ही पढ़ चुके हैं। निर्देशन कार्मिकों में उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक, अध्यापक, प्रधानाचार्य / मुख्य अध्यापक, सामाजिक कार्यकर्ता, मनोविज्ञानी (psychologist), मनोचिकित्सक (psychiatrist), चिकित्सक आदि शामिल हैं। इसके अतिरिक्त, अभिभावक और समुदाय भी बालकों को मार्गदर्शन प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यहाँ पर पूर्णकालिक निर्देशन कार्मिकों और अंशकालिक अथवा अनियत निर्देशन कार्मिकों को वर्गीकृत किया जाना चाहिए। सबसे पहले उपबोधक आता है। उपबोधक वह व्यक्ति होता है जो पूर्णकालिक निर्देशन कार्यकर्ता होता है। उपबोधक पर्याप्त रूप से प्रशिक्षित और व्यावसायिक रूप से योग्य व्यक्ति होता है जो परीक्षण कर सके तथा बालकों को परामर्श और सूचना प्रदान कर सके। उपबोधक विद्यालय में सूचना केन्द्र और निर्देशन निदान केन्द्र (Guidance clinic) की देखरेख करता है। यद्यपि उपबोधक पूर्णकालिक निर्देशन प्रदाता होता है, फिर भी उसे सभी अध्यापकों, कर्मचारियों और शिक्षा विभाग आदि के सहयोग की आवश्यकता होती है क्योंकि निर्देशन कार्य एक सहयोगात्मक प्रयास है।

वृत्तिक उपबोधक मूलरूप से विद्यालय का एक अध्यापक होता है जो अपने प्रशिक्षण और अभिमुखीकरण के कारण मार्गदर्शन कार्य से जुड़ा होता है। उसे मार्गदर्शनोन्मुखी अध्यापक भी कहा जा सकता है। वृत्तिक उपबोधक वह व्यक्ति है जो शैक्षिक और व्यावसायिक सूचना को एकत्र करने और प्रसारित करने की कला में प्रशिक्षित होता है।

इसके अतिरिक्त उसे अद्यतन और विश्वसनीय सूचना के साथ विद्यालय में सूचना केंद्र की देखरेख करनी चाहिए। वृत्तिक उपबोधक पूरी तरह से प्रशिक्षित नहीं होता किंतु निर्देशन के संबंध में उसको कुछ ज्ञान होता है जो विद्यालयों में न्यूनतम निर्देशन कार्यकलाप आयोजित करने में उसकी सहायता करता है। निर्देशन कार्यकलापों के आयोजन में, विद्यालय के अध्यापक की तुलना में वृत्ति उपबोधक अधिक उपयुक्त कार्मिक होता है।

निर्देशन प्रदाता व्यक्ति के रूप में अध्यापक को निर्देशन कार्य करने का कम अवसर मिलता है। परन्तु मूलरूप से अध्यापक ही मार्गदर्शन कार्यकर्ता होता है क्योंकि वहीं विद्यार्थी के साथ सारे दिन रहता है। अध्यापकों को निर्देशन की दिशा में प्रशिक्षण और अभिमुखीकरण हमारे आज के संदर्भ में बहुत कम प्राप्त है। वस्तुतः किसी भी निर्देशन कार्यक्रम की सफलता विद्यालयों में सभी अध्यापकों के सहयोग पर निर्भर करती है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

2) निम्नलिखित की संक्षेप में परिभाषा दीजिए।

i) उपबोधक

.....

.....

.....

.....

.....

ii) वृत्तिक उपबोधक / वृत्तिक अध्यापक (अध्यापिका)

.....

.....

.....

.....

.....

.....

iii) अध्यापक / अध्यापिका

.....

.....

.....

.....

.....

.....

3) निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत, उपयुक्त शब्द पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) परामर्श देने में उपबोधक की आवश्यकता नहीं पड़ती। (सही / गलत)

ii) वृत्तिक उपबोधक परामर्श के मामलों को ले सकता है। (सही / गलत)

iii) यदि उपबोधक उपलब्ध हो तो फिर वृत्तिक उपबोधकों अथवा अध्यापकों की आवश्यकता नहीं होती। (सही / गलत)

iv) वृत्तिक उपबोधक परीक्षण सेवा भी कर सकता है। (सही / गलत)

v) वृत्तिक उपबोधक विद्यालय में पूर्णकालिक निर्देशन देने वाला व्यक्ति होता है। (सही / गलत)

3.5 निर्देशन कार्मिकों की भूमिका

अब आप तीनों महत्त्वपूर्ण निर्देशन कार्मिकों में से प्रत्येक की भूमिका के बारे में विस्तार से जानने की स्थिति में आ गए हैं। इसलिए अब हम एक-एक करके अर्थात् उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक के बारे में आगामी उपभागों में चर्चा करेंगे।

3.5.1 उपबोधक / परामर्शदाता

मूल रूप से परामर्शदाता एक प्रशिक्षित विशेषज्ञ होता है और उससे विद्यालय में निर्देशन कार्य निष्पादित करने की आशा की जाती है। एक उपबोधक के रूप में कार्य करने पर एक निर्देशन कार्यकर्ता के दायित्वों में अनेक विशिष्ट क्षेत्र आते हैं। इन क्षेत्रों को व्यापक रूप से प्रत्येक क्षेत्र के आधीन विशिष्ट सेवाओं और कौशलों के साथ (क) नैदानिक (diagnostic), (ख) चिकित्सापरक अथवा उपचारात्मक (therapeutic), (ग) मूल्यांकनपरक और अनुसंधानपरक वर्ग में श्रेणीबद्ध किया जा सकता है।

विद्यार्थियों की आवश्यकताओं का सर्वेक्षण करके, उपलब्ध भौतिक और अन्य संसाधनों को एकत्र करके तथा प्रशासनिक अधिकारियों का सहयोग सुनिश्चित करके, उपबोधक विद्यालय निर्देशन कार्यक्रम को सावधानीपूर्वक विकसित करने के बाद उसे सही ढंग से कार्य रूप में परिणत करता है।

एक उपबोधक के विशिष्ट कार्यों को निम्नलिखित शीर्षकों के आधार पर रेखांकित (वर्गीकृत) किया जा सकता है :

1) विद्यार्थियों का अभिमुखीकरण
2) विद्यार्थी आकलन
3) शैक्षिक और व्यावसायिक सूचना सेवा
4) परामर्श साक्षात्कार का आयोजन
5) नौकरी (placement) में लगाना
6) अनुसंधान तथा मूल्यांकन

उपबोधक को निम्नलिखित बातों की भी विशेष रूप से जानकारी रखनी चाहिए :

1) विद्यार्थी आकलन कार्यविधियाँ और विद्यार्थी व्यवहार समझने हेतु व्यवहार को पीछे कार्यवृति करना;
2) शैक्षिक और व्यावसायिक सूचना जिसमें युवाओं के लिए महाविद्यालयी और अ-महाविद्यालयी अवसर (सुविधाएँ) शामिल हैं;
3) परामर्श विधियाँ और कार्यविधियाँ;
4) विचारार्थ भेजने (referral) की आवश्यकता की पहचान करने की निर्देश कार्यविधियाँ और कौशल;
5) समूह निर्देशन कार्यविधियाँ; और
6) विद्यार्थी की आवश्यकाताओं और उसके हेतु अवसरों के क्षेत्र में, स्थानीय अनुसंधान अध्ययनों को आयोजित करने में प्रविधियाँ और कार्यप्रणालियाँ।

उपबोधक वह व्यक्ति होता है जिसका चयन उपबोधन के प्रदत्त दायित्वों का निर्वहन करने में उसकी रुचि, प्रशिक्षण, अनुभव और उसकी क्षमता के आधार पर होता है। उपबोधक की जरूरत भविष्य के लिए विद्यार्थियों की सहायता करने, उनकी समस्याओं को सुलझाने, स्वस्थ मनोवृत्तियों को विकसित करने और अन्य शब्दों में कहा जाए तो उन्हें जीवन के लिए तैयार करने के लिए पड़ती है।

उपबोधक को अध्यापकों का अध्यापक होना चाहिए। वह विद्यालय के निर्देशन कार्यक्रम के संचालन के लिए उत्तरदायी होता है। उसे योजना बनाने और कक्षा में अच्छी मार्गदर्शन व्यवस्थाओं (practices) को विकसित करने में अध्यापकों की सहायता करनी चाहिए।

उपबोधक के पास उच्च क्षमता (competency) होनी चाहिए तथा व्यापक और विभिन्न प्रकार के अनुभव होने चाहिए। उसे बालकों की पूरी जानकारी होनी चाहिए। उसके लिए शिक्षण अनुभव अनिवार्य है। व्यावसायिक अथवा विद्यालयेत्तर (non-school) कार्य का पूर्व अनुभव अत्याधिक वांछनीय होता है। परामर्श और मार्गदर्शन के क्षेत्र में पर्याप्त प्रशिक्षण की आवश्यकता पड़ती है। उपबोधक व्यक्तिगत रूप से मिलने के लिए उपलब्ध होना चाहिए, उसे मित्रवत् होना चाहिए, वह लोगों द्वारा पसंद किये जाने वाला तथा समझदार और संतुलित व्यक्ति होना चाहिए।

उपबोधक की समुदाय में जिम्मेदारी होती है। उसे नागरिक समूहों के साथ बातचीत करनी चाहिए तथा निर्देशन कार्यक्रम के उद्देश्य, उसकी समस्याएँ और उसकी विशेषताएँ स्पष्ट करनी चाहिए।

उपबोधक वृत्तिक विकास कार्यक्रम के संसाधक (facilitator) के रूप में कार्य करता है। परंतु कार्यक्रम का प्रभावी संचालन तथा निष्पादन विभिन्न प्रकार के समूह के साथ तालमेल करने पर निर्भर करता है जैसे अन्य स्टाफ सदस्य, अभिभावक, प्रशासनिक एवं समुदाय प्रतिनिधि। उपबोधक को अनेक वृत्तिक विकास सामग्री की अध्ययन, जानकारी रखनी पड़ती है तथा वृत्तिक विकास से जुड़े कौशकों और ज्ञान को सुधारने के लिए, व्यावसायिक अनुभवों में भाग लेना पड़ता है।

उपबोधक,

- व्यापक वृत्तिक विकास कार्यक्रम तैयार करने के लिए प्रयास आरंभ करने हेतु नेतृत्व प्रदान करता है।
- अध्यापकों/अध्यापिकाओं, विद्यार्थियों, अभिभावकों, समुदाय, विषय विशेषज्ञों आदि को कार्यक्रम में शामिल करता है।
- कक्षा में प्रयोग के लिए विद्यार्थियों के अधिगम अनुभवों और क्षमताओं (competencies) की योजना बनाता है।
- स्वयंसेवकों, विशेष आवश्यकता वाले स्टाफ, विद्यालय की स्वास्थ्य नर्सों, अर्ध-व्यावसायिकों (para-professionals) और अन्य विद्यार्थियों को शामिल करता है।
- वृत्तिक विकल्पों का पता लगाने में विद्यार्थियों की सहायता करता है और व्यक्तिगत तथा समूह वृत्ति विकास कार्यकलापों के माध्यम से वृत्तियों (व्यवसायों) के लिए मार्ग प्रशस्त करता है/योजना बनाता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

4) रिक्त स्थानों में उचित शब्द भरिए :

i) उपबोधक के उत्तरदायित्व के विशिष्ट क्षेत्रों को निदानशास्त्र ..... मूल्यांकन तथा अनुसंधान में वर्गीकृत किया जा सकता है।

ii) उपबोधक विद्यालयों में ..... मार्गदर्शन कार्यकर्ता होता है।

iii) ..... कार्यक्रम का विकास उपबोधकों के कार्यों में से एक है।

iv) उपबोधक ..... का अध्यापक होता है।

3.5.2 वृत्तिक उपबोधक

मार्गदर्शन कार्यक्रम में उपबोधक के बाद वृत्तिक उपबोधक आता है। आजकल इस शब्द ने वृत्तिक अध्यापक का स्थान ले लिया है। विद्यालय का नियमित अध्यापक जो सूचना सेवा (शैक्षिक और वृत्तिक) उपलब्ध कराता है उसे वृत्तिक उपबोधक/अध्यापक कहा जाता है। यह व्यक्ति प्रशिक्षित स्नातक अध्यापक होता है जिसे इस कार्य के लिए तैयार रहने का विशेष प्रशिक्षण मिला होता है।

वृत्तिक उपबोधक के उत्तरदायित्व उपबोधक की तुलना में कार्यक्षेत्र के अनुसार सीमित होते हैं परंतु वे अनिवार्य सेवा का अंग होते हैं। वृत्तिक उपबोधक की प्रमुख जिम्मेदारियाँ शैक्षिक और व्यावसायिक सूचना सेवा तथा तत्संबंधी कार्य से जुड़ी हुई हैं। उसे उपबोधक की अनुपस्थिति में विद्यालय में ये सभी कार्य करने होते हैं जैसा कि हमारे अनेक विद्यालयों में होता है।

सेवारत अध्यापकों के औपचारिक प्रशिक्षण में सूचना सेवाएँ भी शामिल हैं जो वृत्तिक उपबोधक के रूप में कार्य करने के लिए किसी व्यक्ति के लिए जरूरी है। इस प्रकार का प्रशिक्षण राज्य के शैक्षिक और व्यावसायिक निर्देशन ब्यूरो द्वारा दिया जाता है और इस प्रकार के पाठ्यक्रमों की अवधि 2 से 4 सप्ताह तक होती है।

एक पाठ्यक्रम में निर्देशन कार्यक्रम की आवश्यकता और कार्यक्षेत्र के लिए अभिमुखीकरण शामिल है। प्रशिक्षण के माध्यम से सूचना सेवा आयोजित करने और प्रदान करने पर बल दिया जाता है। विद्यार्थी आकलन की गैर-परीक्षण तकनीकों के प्रयोग और संचयी अभिलेख पत्र के रखरखाव की दिशा में अभिमुखीकरण प्रदान किया जाता है। परंतु वृत्तिक परामर्शदाता परीक्षण और परामर्श में प्रशिक्षित नहीं होता। उससे आशा की जाती है कि उसे अपने समुदाय के संसाधनों के बारे में जानकारी हो जिसमें वे अभिकरण भी शामिल हैं जिनसे परामर्श किया जा सके।

वृत्तिक उपबोधक से निम्नलिखित कार्य करने की अपेक्षा की जाती है :

1) निर्देशन समिति का निर्माण

2) विद्यालय में सूचना केंद्र की स्थापना

3) नए प्रवेशार्थियों के लिए अभिमुखीकरण वार्ता

4) समाचार एलबम और बुलेटिन बनाना

5) संचयी अभिलेख पत्रों की देखभाल

6) आवश्यकता पड़ने पर विद्यार्थियों के साथ व्यक्तिगत सत्रों का आयोजन

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

5) निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत, उपयुक्त शब्द पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) वृत्तिक उपबोधक और वृत्तिक अध्यापक समान नहीं है। (सही / गलत)

ii) विद्यालय में कोई भी अध्यापक अभिमुखीकरण के बाद वृत्तिक परामर्शदाता हो सकता है। (सही / गलत)

iii) वृत्तिक उपबोधक को औपचारिक प्रशिक्षण की कोई आवश्यकता नहीं होती। (सही / गलत)

iv) वृत्तिक उपबोधक परीक्षण कार्य कर सकता है क्योंकि वह निर्देशन कार्मिक होता है। (सही / गलत)

v) वृत्तिक उपबोधक का दायित्व विद्यार्थियों को केवल वृत्तिक सूचना प्रदान करना है। (सही / गलत)

4.5.3 अध्यापक

ऐसे किसी भी कार्यक्रम में जिसमें विद्यार्थी भी शामिल हों। अध्यापक का समर्थन और सहभागिता आवश्यक होती है। विद्यालय निर्देशन कार्यक्रम भी इसका कोई अपवाद नहीं है। विद्यालय निर्देशन कार्यक्रम में अध्यापक की भूमिका निम्नलिखित है :

1) विद्यार्थी और विद्यालय निर्देशन कार्यक्रम के बीच प्रथम संपर्क।

2) विद्यार्थियों की आवश्यकताओं और समस्याओं की पहचान।

3) शैक्षिक और वृत्तिक नियोजन के लिए विद्यालय में वृत्तिक सूचना केंद्र की स्थापना और रखरखाव।

4) कक्षा में विद्यार्थियों के लिए समरसतापूर्ण और स्वस्थ पर्यावरण सृजित करना।

5) विद्यालय निर्देशन कार्यक्रम के लिए प्रेरणाप्रद वातावरण का संवर्धन और सृजन करना।

6) विद्यालय निर्देशन कार्यक्रम के लिए विद्यार्थियों, अभिभावकों और सभी अन्य संबंधित व्यक्तियों में सकारात्मक अभिवृत्ति पैदा करना।

अध्यापक मुख्य परिवर्तनकारक (master molder) होता है। निर्देशन कार्यक्रम का कर्ताधर्ता स्वयं अध्यापक ही होता है। मार्गदर्शन, अध्यापन और अधिगम प्रक्रिया (teaching and learning process) का अभिन्न अंग है। बालक के अभिभावकों को छोड़कर, कक्षा अध्यापक के सिवा ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं है जिसका बालक के व्यक्तित्व के विकास पर अधिक प्रभाव पड़ता हो।

निर्देशन प्रेमी अध्यापक, विद्यालय का ही वह व्यक्ति होता है जो बालक के बारे में सर्वाधिक जानता है। वह बालक को कक्षा में और कक्षा के बाहर अलग-अलग परिस्थितियों में देखता है। वह उसकी हताशापूर्ण, ऊबाऊ और उद्दीपक परिस्थितियों को देखता है। बालक की आवश्यकताओं संबंधी गहन अंतर्दृष्टि विकसित करने के परिणामस्वरूप अध्यापक, विद्यालय निर्देशन व्यक्तियों के बीच एक मुख्य व्यक्ति बन जाता है।

विद्यार्थी निर्देशन कार्य को पूरा करने के लिए अध्यापक अनेक तकनीकों का प्रयोग करता है। वह विद्यार्थी और उसके पर्यावरण संबंधी अवसरों की जानकारी प्राप्त करता है। अध्यापक परीक्षण करके, प्रेक्षण करके, विस्तृत रिकार्ड रखकर और विद्यार्थियों, अभिभावकों और अन्य व्यक्तियों के साथ बातचीत करके गहरी जानकारी प्राप्त करता है। विद्यार्थी के जीवन के कई तथ्य अध्यापक के समक्ष स्पष्ट किए जाते हैं। विद्यार्थी को जानना निर्देशन के लिए अनिवार्य आधार है। चूँकि अध्यापक विद्यार्थी की अधिक कठिन समस्याओं से अवगत हो जाता है, इसलिए वह उसका निर्देशन करने में सफल हो सकता है अथवा ऐसे मामलों में विशेषज्ञों के पास भेज सकता है।

निर्देशन कार्यकर्ता के रूप में अध्यापक

अध्यापकों को सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण निर्देशन कार्यकर्ता समझा जाता है। विद्यार्थियों के साथ अन्य स्टाफ के सदस्यों की अपेक्षा उसका संबंध और साहचर्य एक अलग किस्म का होता है। तथापि अधिकांश अध्यापक सोचते हैं कि वे इस जिम्मेदारी को निभाने के लिए पूरी तरह से योग्य नहीं हैं। आवश्यकता की यह अनुभूति सेवारत प्रशिक्षण के माध्यम से निर्देशन सूचना और उसकी तकनीक को सर्वसुलभ बनाकर सर्वोत्तम ढंग से पूरी की जा सकती है। यदि अध्यापकों को निर्देशन कार्यक्रम में पूरी भूमिका निभानी है तो उनकी अनिश्चितता की भावनाओं को दूर करना जरूरी है।

अच्छे निर्देशन का दायित्व अध्यापन भार के अतिरिक्त भार न होकर उसी का एक अभिन्न अंग है। इसे अतिरिक्त दायित्व/भार नहीं बनाया जाना चाहिए।

अध्यापक को निर्देशन कर्मी के नाते अपनी कक्षा में व्यक्तिगत समस्या की पहचान करने के योग्य होना चाहिए और साथ ही इन समस्याओं को समझबूझ के साथ निपटाने के योग्य होना चाहिए। विद्यार्थी की सहायता करने में अध्यापक अन्य विषयों के अध्यापकों से सहयोग ले सकता है। अध्यापक को परीक्षा परिणाम, उपलब्धि अभिक्षमता (aptitute), अभिरुचियों और स्वभाव (temperament) का अध्ययन करना चाहिए। अध्यापक को विद्यार्थी की शिक्षा की योजना और उसके व्यावसायिक लक्ष्यों को जानना चाहिए। अध्यापक को विद्यार्थी की रुचियों और अरुचियों, समस्याओं और कुंठाओं की जानकारी रखनी चाहिए। अध्यापक कुसमायोजनों को रोक सकता है। विभिन्न विषय पढ़ाने वाले अध्यापकों तथा शारीरिक शिक्षा, योग आदि पाठ्यक्रमों के अध्यापकों के पास विद्यार्थियों के साथ निकट संपर्क स्थापित करने के अवसर होते हैं। अध्यापक अपने विद्यार्थियों का निर्देशन करने में दो प्रमुख कार्य करता है; कक्षा परामर्श और व्यावसायिक निर्देशन।

कक्षा उपबोधक के रूप में अध्यापक को प्रत्येक विद्यार्थी में व्यक्तिगत, सामाजिक और शैक्षिक गुणों को विकसित करने का पूरा प्रयास करना चाहिए। एक व्यावसायिक निर्देशक के रूप में अध्यापक के पास उनकी व्यावसायिक योजनाओं के साथ विद्यार्थियों की सहायता करने के अवसर हैं।

अध्यापकों का सहयोग : अध्यापक निम्नलिखित तीन आधारों पर विशेषज्ञों के साथ सहयोग करते हैं :

1) उन विशेष विद्यार्थियों की पहचान करना जिन्हें विशेषज्ञ की सहायता की आवश्यकता पड़ती है।

2) उल्लिखित विद्यार्थियों के बारे में सूचनाएँ देना।

3) किसी व्यक्ति अथवा समूह के लिए विशेषज्ञ की सिफारिशों को कार्यान्वित करने के लिए सहायता करना।

पढ़ाते समय निर्देशन के लिए अध्यापकों के अवसरों को संक्षेप में नीचे दिया जा रहा है। इनमें सात प्रकार के कार्य हैं :

1) निजी संबंधों का प्रयोग करना

2) आत्मसम्मान और क्षमता सृजित करना

3) अनुदेश का वैयक्तिकरण करना

4) दैनिक अधिगम का मार्गदर्शन करना

5) विद्यार्थियों के साथ शैक्षिक लक्ष्यों पर चर्चा करना

6) सामान्य समस्याओं पर विवेचन करना

7) विद्यार्थियों की आवश्यकताओं की ओर निरंतर ध्यान देना।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

6) निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत, उपयुक्त शब्द पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) अध्यापक मूलरूप से निर्देशन कार्यकर्ता होता है। (सही / गलत)

ii) विद्यालय में निर्देशन कार्य करने के लिए अध्यापकों को प्रशिक्षण की आवश्यकता नहीं होती। (सही / गलत)

iii) निर्देशन कार्यक्रमों में अध्यापक की भूमिका सहयोगात्मक होती है। (सही / गलत)

iv) अध्यापक अपने विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास को प्रभावित नहीं करता। (सही / गलत)

v) अध्यापकों में यह भावना होती है कि वे विद्यालयों में निर्देशन कार्यकलाप कराने के लिए पूरी तरह से योग्य नहीं होते हैं। (सही / गलत)

vi) अध्यापक को निर्देशन कार्यक्रम में अन्य अध्यापकों के सहयोग की कोई आवश्यकता नहीं होती। (सही / गलत)

3.5.4 उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक की तुलनात्मक भूमिकाएँ

आइए, अब हम निर्देशन कार्यक्रम में प्रत्येक मार्गदर्शन कार्मिक जैसे उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक की भूमिका की चर्चा करें। यद्यपि इन तीनों कार्मिकों का उद्देश्य विद्यालयों में मार्गदर्शन कार्यकलाप आयोजित करके विद्यार्थियों की सहायता करना है, फिर भी इनमें से प्रत्येक कार्मिक की विशेष भूमिका होती है। यह भूमिकाएँ विरोधी नहीं है परंतु

एक-दूसरे की पूरक हैं। इनमें से प्रत्येक की विशिष्ट भूमिका उनकी पृष्ठभूमि और उनके अपने विद्यालयों के बुनियादी ढांचे और उनके अपने स्कूल में उपलब्ध सुविधाओं, समय व्यवस्था, बजट आदि पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए, यदि किसी विशेष संस्था में कोई पूर्णकालिक उपबोधक है तो यह निश्चित है कि उस विद्यालय में सही अर्थों में मार्गदर्शन होगा। ऐसी स्थिति में, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक की भूमिका सहयोगात्मक हो जाती है। परंतु यदि कोई पूर्णकालिक निर्देशन उपबोधक नहीं है तो वृत्तिक उपबोधकों और अध्यापकों की भूमिका विद्यालयों में न्यूनतम आवश्यकता आधारित कार्यक्रम आयोजित करने में अधिक व्यावहारिक हो जाती है। इस समय हमारे अनेक विद्यालयों में यही स्थिति है। अतः प्रत्येक कार्मिक अर्थात् उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक की भूमिका की तुलना उनकी व्यावसायिक पृष्ठभूमि, निर्देशन कार्यक्रम के प्रकार, उपलब्ध संसाधनों आदि के अनुसार निम्नलिखित रूप से की जा सकती है :

माध्यमिक विद्यालय स्तर

	उपबोधक	**उपबोधक / अध्यापक**
1.	कक्षा सत्र, ''भविष्य के लिए वृत्तियों (व्यवसाय)'' के कार्यक्रम आयोजित करता है	उपबोधक के साथ कार्यकलापों की योजना तैयार करता है
2.	''रहने और काम करने के लिए कौशल'' सत्र आयोजित करता है	रहने और काम करने के लिए अनुशासन के महत्त्व को दर्शाने वाले कार्यकलापों की योजना तैयार करता है
3.	अभिरुचि तालिका बनाता है	उपबोधक की सहायता करता है
4.	कार्मिक आवश्यकताओं और अपेक्षाओं पर ''समूह सत्र आयोजित करता'' है	ऐसे कार्यकलाप आयोजित करता है जो विद्यार्थियों को निजी आवश्यकताओं और अपेक्षाओं का मूल्यांकन करने के लिए चुनौती देते हैं
5.	''उद्यमवृत्ति'' पर कक्षा सत्र आयोजित करता है	कक्षा सत्र और कार्यकलापों की योजना तैयार करता है
6.	''वृत्तिक लक्ष्य पर आयोजित उच्च विद्यालयी पाठ्यचर्या की योजना बनाने पर कक्षा सत्र आयोजित करता है	विभिन्न वृत्तियों के साथ पाठ्यक्रम को जोड़ता, ऐसे कार्यकलापों की योजना बनाता है जो विद्यार्थियों को उनके वृत्तिक लक्ष्यों की संभावनाओं को जानने के अवसर प्रदान करते हों
7.	''रोज़गार के लिए तैयारी'' पर समूह एवं व्यक्तिगत सत्र की योजना बनाता है	भावात्मक और भौतिक विकास पर विवेचना करता है और बताता है कि वे रोज़गार के अवसरों को किस प्रकार प्रभावित करते हैं
8.	भूमिका निर्वाह सत्र (role playing sessions) और अन्य कार्यकलापों की योजना बनाता है	उपबोधक के साथ कार्यकलापों की योजना बनाता है
9.	वृत्तिक समूह और व्यवसाय पर कक्षा सत्र आयोजित करता है	उपबोधक के साथ समायोजन करता है

10. विभिन्न वृत्तिक अवसरों (प्रशिक्षुता– apprenticeship कॉलेज, प्रारंभिक विद्यालय, तकनीकी, कार्यरत आदि) को दर्शाने वाले कार्यकलापों की योजना बनाता है	सत्रीय कार्यों (लिखित और अलिखित) के साथ कार्यकलापों में सहयोग करता है, मीडिया विशेषज्ञ सूचना और सामग्री प्रदान करता है
11. कक्षा सत्र आयोजित करता है कि व्यवसाय/उद्योग समुदाय में जीवन को किस प्रकार प्रभावित करते हैं, इस पर विवेचना करता है	उपबोधक के साथ समन्वय करता है
12. वृत्तिक सूचना के लिए उपलब्ध संसाधनों की जाँच करता है/का पता लगाता है	उपबोधक के साथ समन्वय करता है
13. ''नियोक्ता नियुक्ति किये गये लोगों से क्या आशा करता है'' विषय पर व्यक्तिगत परामर्श और कक्षा सत्र आयोजित करता है	उपबोधक के साथ समन्वय करता है
14. वित्तीय सहायता पर कक्षा सत्र आयोजित करता है	उपबोधक के साथ समन्वय करता है
15. कार्यस्थल पर विद्यार्थी प्रायोगिक सत्रीय कार्यों की व्यवस्था करता है	दिए गए कार्य अनुभव पर आधारित मौखिक और लिखित सत्रीय कार्यों की योजना बनाता है
16. ''कार्य आचार संहिता'' (work ethic) पर समूह एवं पृथक (व्यक्तिगत) सत्र आयोजित करता है	उपबोधक के साथ समन्वय करता है
17. विद्यार्थियों को वृत्तिक सूचना संसाधन उपलब्ध कराता है और उनकी सहायता करता है	सूचना का प्रयोग करते हुए कार्यकलाप आयोजित करता है
18. ''तनाव और दुश्चिंता के लक्षण और उनका किस प्रकार सामना किया जाय'' विषय पर कक्षा सत्र आयोजित करता है	उपबोधक के साथ समन्वय करता है
19. रोज़गार ढूँढने के कौशलों से जुड़े समूह कार्यकलापों का समन्वय करता है और उनका अनुवेक्षण करता है	उन कार्यकलापों की योजना बनाता है जिनमें रोज़गार ढूँढने के कौशल शामिल होते हों
20. ''व्यक्तिवृत्त (सारवृत्तों), आवेदन और साक्षात्कार'' पर कक्षा सत्र आयोजित करता है	व्यक्तिवृत्त लिखने, आवेदनपत्र लिखने तथा साक्षात्कार में भाग लेने के कौशलों को विकसित करने के लिए उपबोधक से समन्वय करता है
21. ''अर्थव्यवस्था और रोज़गार'' पर समूह सत्र आयोजित करता है	उपबोधक के साथ समन्वय करता है
22. ''समाज की आवश्यकताएँ किस प्रकार व्यवसाय और उद्योग को प्रभावित करती है'' इस विषय पर कक्षा सत्र आयोजित करता है	उपबोधक के साथ समन्वय करता है
23. वृत्तियों से जुड़ी जीवन-शैलियों पर विवेचना करके व्यक्तिगत और समूह सत्र आयोजित करता है	उपबोधक के साथ समन्वय करता है

24. ''वृत्तिक निर्णयों'' पर व्यक्तिगत एवं समूह विवेचना सत्र आयोजित करता है	''निर्णय-निर्धारण कौशल'' विकसित करने से संबंधित कार्यकलाप सत्र आयोजित करता है
25. ''आपका स्वास्थ्य और आपका कैरिअर'' विषय पर विद्यार्थियों के लिए व्यक्तिगत सत्र आयोजित करता है	उपबोधक के साथ समन्वय करता है
26. रोज़गार मेला आयोजित करने के लिए कक्षा सत्र आयोजित करता है	उपबोधक के साथ समन्वय करता है
27. ''वृत्तियों और जीवन पर्यंत सीखते रहने पर व्यक्तिगत एवं समूह सत्र आयोजित करता है	उपबोधक के साथ समन्वय करता है

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

7) निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत, उपयुक्त शब्द पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) निर्देशन कार्यक्रम आयोजित करने में उपबोधकों को वृत्तिक उपबोधक ओर अध्यापक की आवश्यकता पड़ती है। (सही / गलत)

ii) उपबोधक, वृत्तिक परामर्शदाता और अध्यापकों की भूमिकाएँ समान होती हैं। (सही / गलत)

iii) उपबोधक विद्यालयों में उपबोधन (मामलों) को लेने के लिए पूरी तरह से साधनों से लैस नहीं होता है। (सही / गलत)

iv) किसी विद्यालय में वृत्तिक सूचना केंद्र की देखभाल केवल उपबोधक द्वारा की जानी चाहिए। (सही / गलत)

v) अध्यापक अपना शिक्षण विषय वृत्तियों से जोड़ सकता है। (सही / गलत)

3.6 विद्यालयों में आवश्यकता आधारित न्यूनतम निर्देशन कार्यक्रम और कार्मिकों की भूमिका

विद्यालयों में व्यवस्थित निर्देशन कार्यक्रम के लिए एक पूर्णकालिक उपबोधक, बुनियादी ढाँचे, विभिन्न सामग्रियों (परीक्षण, परीक्षणेत्तर, सूचना आदि) और पर्याप्त बजट की आवश्यकता पड़ती है। इनके अभाव में, आवश्यकता आधारित न्यूनतम निर्देशन कार्यक्रमों को विद्यालयों में आयोजित किया जा सकता है। वृत्तिक उपबोधक / अध्यापक निर्देशन के बारे में अपने सेवारत प्रशिक्षण के आधार पर इन कार्यक्रमों को आरंभ कर सकता है। वास्तव में, समूह निर्देशन कार्यकलाप इस प्रयास में बिल्कुल ठीक बैठते हैं। निम्नलिखित चरण विद्यालयों में न्यूनतम निर्देशन कार्यकलापों के आयोजन में शामिल हैं :

1) निर्देशन समिति का निर्माण

2) कार्य के वार्षिक कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करना

3) निर्देशन समिति की बैठक

4) नए प्रवेशार्थियों का अभिमुखीकरण

5) विभिन्न प्रकार के समूह-निर्देशन-कार्यकलाप जैसे :

   i) कक्षा वार्ता

   ii) वृत्तिक वार्ता

   iii) वृत्तिक सम्मेलन

   iv) वृत्तिक विज़िट

   v) वृत्तिक मेला

   vi) वृत्तिक केंद्र और उसकी देखभाल

निर्देशन समिति का निर्माण

निर्देशन समिति बनाते समय, समिति की संरचना निम्नलिखित होनी चाहिए :

i)	प्रधान अध्यापक / प्रधानाचार्य	–	अध्यक्ष
ii)	उपबोधक / वृत्तिक उपबोधक / अध्यापक	–	सचिव
iii)	विभिन्न विषयों के सभी अध्यापक	–	सदस्य
iv)	ग्राम पंचायत / नगरपालिका का अध्यक्ष	–	सदस्य
v)	स्थानीय / माध्यमिक विद्यालय का प्रधान अध्यापक	–	सदस्य
vi)	स्कूल प्रबंधन समिति के प्रतिनिधि	–	सदस्य
vii)	अभिभावक, अध्यापक, संघ के प्रतिनिधि	–	सदस्य
viii)	स्थानीय चिकित्सक	–	सदस्य
ix)	कृषि विभाग का प्रतिनिधि	–	सदस्य
x)	उद्योग और वाणिज्य विभाग का प्रतिनिधि (विस्तार कार्यकर्ता)	–	सदस्य
xi)	पुलिस विभाग का प्रतिनिधि	–	सदस्य
xii)	स्वैच्छिक अभिकरणों जैसे – रोटरी, लायन, जेयसी, क्लब आदि के प्रतिनिधि	–	सदस्य

इस निर्देशन समिति की बैठक कार्यसूची पर कार्रवाई करने के लिए उसके स्वरूप और विचार-विमर्श के आधार पर एक या दो महीने में एक बार होनी चाहिए। यह समिति नीति-निर्धारण के साथ-साथ प्रगति समीक्षा निकाय के रूप में भी होती है।

वृत्तिक उपबोधक अथवा अध्यापक को निर्देशन समिति की सहायता से निर्देशन कार्य का वार्षिक कार्यक्रम विकसित करना होगा तथा समिति से उसका अनुमोदन करता होगा। वार्षिक कार्य योजना आवश्यकता आधारित योजना होना चाहिए और इससे संबंधितों के नियमित कार्य में बाधा नहीं पहुँचनी चाहिए।

नए प्रवेशार्थियों का अभिमुखीकरण

नए प्रवेशार्थियों के लिए अभिमुखीकरण कार्यकलाप किए जाने की आवश्यकता है ताकि वे नए पर्यावरण में भली-भांति समायोजित हो जाएँ और विषय सामग्री को स्वतंत्रतापूर्वक सीख सकें। यह कार्य समूह में और व्यक्तिगत कार्यकलापों के माध्यम से किया जा सकता है। जैसे सभाएँ आयोजित करना, कक्षा वार्ताएँ आयोजित करना, विद्यालय विनिमयों और कार्यक्रमों पर चर्चा कराना तथा समायोजन में व्यक्तिगत सहायता उपलब्ध कराना।

कार्मिकों के संदर्भ में समुदाय संसाधन

स्थानीय समुदाय के सदस्य स्वयं एक संसाधन होते हैं। विभिन्न संस्थाएँ जो कि मानव संसाधन विकास कार्यों से जुड़ी हैं जैसे वाई.एम.सी.ए., वाई.डब्ल्यू.सी.ए., स्काउट और गाइड, लॉयन्स, जेयसी, रोटरी आदि विभिन्न प्रकार की सेवा समुदाय में करती हैं। अभिभावकों का बालक के निर्देशन में सबसे पहला और महत्त्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। वे पृथक रूप से और संगठित समूहों जैसे अभिभावक शिक्षक संघ और पारिवारिक जीवन शिक्षा में सांध्य कक्षाओं के माध्यम से मार्गदर्शन करते हैं।

विभिन्न संगठनों अथवा विभागों जैसे स्वास्थ्य कार्यालय, मनोचिकित्सीय निदान केंद्रों (psychiatric clinics), कल्याण अभिकरणों (welfare agencies), पुलिस विभागों, अग्निशमन विभागों, औद्योगिक और व्यावसायिक संगठनों और लगभग सभी सामुदायिक संस्थाओं में तकनीकी और व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित कार्मिक समय-समय पर विद्यालयों में मार्गदर्शन कार्मिकों की भूमिका निभा सकते हैं।

विद्यार्थियों पर प्रभाव डालने वाले सभी लोगों को ऐच्छिक एवं गैर-अधिकारी निर्देशन कार्मिक माना जा सकता है। कार्यक्रम को निर्देशित करने का दायित्व वृत्तिक उपबोधक/अध्यापक का होता है तथा अन्य व्यक्ति केवल अनुपूरक संसाधन (supplmentary resources) होते हैं।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

8) निम्नलिखित कथन सही हैं अथवा गलत, उपयुक्त शब्द पर (√) का चिह्न लगाकर बताइए।

i) उपबोधक को विद्यालयों में केवल न्यूनतम निर्देशन कार्यकलाप करने चाहिए। (सही/गलत)

ii) वृत्तिक उपबोधक अथवा अध्यापक विद्यालयों में केवल समूह निर्देशन के कार्यकलाप आयोजित कर सकता है। (सही/गलत)

iii) विद्यालयों में निर्देशन समिति की कोई आवश्यकता नहीं होती। (सही/गलत)

iv) निर्देशन समिति में केवल प्रशिक्षित कार्मिक होने चाहिए। (सही/गलत)

v) निर्देशन समिति की बैठक वर्ष में एक बार होनी चाहिए। (सही/गलत)

vi) निर्देशन कार्यकलापों के वार्षिक कार्यक्रम की रूपरेखा केवल प्रधानाचार्य/प्रधान अध्यापक द्वारा बनाई जाएगी। (सही/गलत)

vii) नए प्रवेशार्थियों के लिए अभिमुखीकरण की बिल्कुल भी आवश्यक नहीं होती। (सही/गलत)

viii) समूह निर्देशन कार्यकलाप न्यूनतम निर्देशन कार्यक्रम के अंतर्गत आयोजित किए जा सकते हैं। (सही/गलत)

ix) न्यूनतम निर्देशन कार्यक्रम केवल विद्यालय में उपलब्ध बजट पर निर्भर होता है। (सही/गलत)

x) न्यूनतम निर्देशन कार्यक्रमों में स्कूल के सभी लोगों की सहायता की आवश्यकता होती है। (सही/गलत)

3.7 सारांश

इस इकाई में हमने निर्देशन कार्यक्रम की संक्षेप में विवेचना की है। हमने विभिन्न कार्मिकों जैसे उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापकों की आवश्यकता और उनकी भूमिका का भी विवेचन किया है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक कार्मिक की तुलनात्मक एवं सहयोगात्मक भूमिकाओं पर भी प्रकाश डाला गया है। साथ ही, विद्यालयों में आवश्यकता आधारित न्यूनतम निर्देशन कार्यक्रम और कार्यक्रम को आयोजित करने में कार्मिकों की भूमिका से भी आपको परिचित कराया गया है। इसके अतिरिक्त हमने एक निर्देशन समिति गठित करने की आवश्यकता, उसे किस प्रकार गठित करें और उसके क्या-क्या कार्य हो पर भी चर्चा की है। चर्चा का एक अन्य विषय स्कूल निर्देशन कार्यक्रम में स्थानीय संसाधनों के प्रयोग का महत्त्व भी रहा है।

3.8 इकाई के अंत में अभ्यास कार्य

1) निर्देशन कार्यक्रमों में निर्देशन की आवश्यकता और कार्मिकों की विवेचना कीजिए।

2) निर्देशन कार्यक्रम की प्रक्रिया में उपबोधकों, वृत्तिक उपबोधकों और अध्यापकों की भूमिका का विवेचन और निरूपण प्रस्तुत कीजिए।

3) उपबोधक, वृत्तिक उपबोधक और अध्यापक की भूमिकाओं की तुलना कीजिए।

4) एक विद्यालय का दौरा कीजिए जहाँ पूर्णकालिक उपबोधक कार्य करता है और निर्देशन कार्यक्रम के स्तर का पता लगाइए। इस संबंध में एक संक्षिप्त रिपोर्ट लिखिए।

5) दसवीं कक्षा के विद्यार्थियों के लिए अपने विद्यालय में आवश्यकता आधारित न्यूनतम निर्देशन कार्यक्रम का आयोजन कीजिए।

इकाई 4 विद्यालयों में उपबोधन

इकाई की रूपरेखा

4.1 प्रस्तावना

4.2 उद्देश्य

4.3 व्यक्तिगत उपबोधन

4.4 समूह उपबोधन

- 4.4.1 समूह उपबोधन का अर्थ
- 4.4.2 समूह उपबोधन की पूर्वधारणाएँ
- 4.4.3 समूहों का संरचनीकरण
- 4.4.4 समूह उपबोधन की प्रक्रिया
- 4.4.5 समूह उपबोधन के लाभ और सीमाएँ

4.5 समकक्ष उपबोधन

4.6 बहु-संस्कृति उपबोधन

4.7 संकटकालीन उपबोधन

4.8 उपबोधन से जुड़े विशिष्ट क्षेत्र

- 4.8.1 पारिवारिक उपबोधन
- 4.8.2 वृत्तिक उपबोधन
- 4.8.3 मादक द्रव्य व्यसनिकों व मद्य व्यसनिकों का उपबोधन

4.9 उपबोधन का मूल्यांकन

4.10 सारांश

4.11 इकाई के अंत में अभ्यास कार्य

4.12 संदर्भ साहित्य एवं सुझावात्मक अध्ययन

4.13 अपनी प्रगति की जाँच के उत्तर

4.1 प्रस्तावना

इकाई 1 में हमने मार्गदर्शन और उपबोधन की संकल्पनाओं का परिचय दिया है। इकाई 1 पढ़ने के बाद आप मानेंगे कि उपबोधन स्कूल की मार्गदर्शन सेवाओं का एक महत्त्वपूर्ण पहलू है। उपबोधन के प्रमुख तरीकों व उपबोधन प्रक्रिया के विभिन्न चरणों जिन पर इकाई 1 में चर्चा की गई, को पढ़कर आपको इस बात की सामान्य समझ प्राप्त हुई होगी कि उपबोधन का क्या अर्थ है। इस इकाई में हम विभिन्न प्रकार की उपबोधन सेवाओं पर जोकि हम स्कूलों में उपलब्ध करा सकते हैं, चर्चा करेंगे। इकाई 1 में दी गई उपबोधन की परिभाषा पढ़ते समय संभवतः आपने अनुभव किया होगा कि अधिकतर उपबोधन एक सहायक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित की गई है जिसमें दो व्यक्ति सम्मिलित होते हैं– उपबोधक और उपबोध्य। इस प्रकार का उपबोधन व्यक्तिगत उपबोधन कहलाता है जिस पर इस इकाई में चर्चा की गई है। यद्यपि उपबोधन, एक सेवा के रूप में, पिछले कुछ वर्षों में बहुत विकसित हुआ है तथा व्यावसायियों ने समूह उपबोधन को, कुछ परिस्थितियों में, एक महत्त्वपूर्ण विकल्प के रूप में देखा है। स्कूलों में बहुत-सी स्थितियों में समूह उपबोधन की आवश्यकता होती है। हमने यहाँ पर समकक्ष उपबोधन की चर्चा की है क्योंकि यह स्कूल के विन्यास

में बहुत उपयोगी है। स्कूल में विद्यार्थी अध्यापक व स्टाफ ही होते हैं जोकि अलग-अलग सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश से आते हैं इसलिए यह समझने की आवश्यकता है कि बहु-संस्कृति उपबोधन का क्या अर्थ है। संकटकालीन स्थितियों में उपबोधन उपलब्ध कराना व अन्य विशिष्ट क्षेत्रों के लिए उपबोधन पर भी इस इकाई में चर्चा की गई है।

4.2 उद्देश्य

इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित के योग्य हो सकेंगे :

- वैयक्तिक और समूह उपबोधन की संकल्पनाओं को समझाने और उनमें अंतर बताने के;
- उपयुक्त स्थितियों में व्यक्तिगत व समूह उपबोधन उपलब्ध कराने के;
- समकक्ष उपबोधन की संकल्पना स्पष्ट करने के;
- स्कूल में समकक्ष उपबोधन कार्यक्रम विकसित करने के;
- बहु-संस्कृति उपबोधन की संकल्पना पर चर्चा करने व स्कूलों में कार्य-संचालन में इसके महत्त्व को बता पाने के;
- एक उपबोधक के रूप में बहु-संस्कृति योग्यताएं विकसित करने के;
- संकटकालीन उपबोधन की संकल्पना स्पष्ट कर पाने के;
- अपने विद्यार्थी के जीवन में संकटकालीन स्थिति पहचानने और उपयुक्त उपबोधन उपलब्ध कराने के;
- उपबोधन के विभिन्न क्षेत्रों में अंतर कर पाने के;
- एक प्रभावी उपबोधक की विशेषताएं बता पाने के;
- उन मामलों की पहचान कर पाने के जिन्हें उपबोधन के माध्यम से सहायता की आवश्यकता है; तथा
- किसी दिए गए मामले में उपयुक्त तरीकों और तकनीकों का चयन कर पाने के।

4.3 व्यक्तिगत उपबोधन

स्कूल निर्देशन कार्यक्रम में उपबोधन सबसे महत्त्वपूर्ण कार्यकलाप है। व्यक्तिगत उपबोधन एक वैयक्तीकरण की प्रक्रिया है जिसमें उपबोधक और उपबोध्य केवल एक-दूसरे के लिए या आमने-सामने के संबंध के आधार पर कार्य करके उपबोध्य की विभिन्न आवश्यकताओं का अन्वेषण करने पर ध्यान देते हैं। उपबोधन प्रक्रिया का उद्देश्य उपबोध्य द्वारा अपनी भावनाओं की छानबीन करने में, अपने विश्वासों को जानने और अपने आप को समझने में सहायता करना है। जिससे कि वह संभावनाओं की जाँच कर सके और सकारात्मक परिणामों के लिए बदलने की शुरुआत करे। लोग एक उपबोधक के पास विभिन्न कारणों से जा सकते हैं। लोगों को निम्नलिखित विषयों पर सहायता की आवश्यकता हो सकती है–

- दुश्चिंता/व्यग्रता, हताशा
- क्रोध का प्रबंधन
- आपसी संबंधों से संबंधित मामले
- मदिरा व नशीली दवाओं की लत

लोग अपने पारस्परिक कौशलों को बेहतर बनाने, वृत्तिक संभावनाओं आदि के विषय में उपबोधन के लिए सहायता लेते हैं।

उपबोधक अपने व्यावसायिक ज्ञान और कौशल का प्रयोग करके उपबोध्य की संभावनाओं को बढ़ाने और सकारात्मक परिवर्तन लाने का पूरा प्रयत्न करता है व्यक्तिगत उपबोधन में उपबोध्य की तत्कालीन समस्या और निकट भविष्य की चिंताओं पर ध्यान दिया जाता है। व्यक्तिगत उपबोधन में संबंधों की विशेषता आपसी विश्वास और सम्मान होती है जिसका अर्थ यह है कि उपबोध्य अपनी चिन्ताओं को बताने और उनपर विचार करने में सुरक्षित अनुभव करता है। जब उपबोध्य को लगता है कि उपबोधक उसको समझ रहा व वास्तविक रूप में उसके हित की चिन्ता कर रहा है और उसी के पक्ष में है तो इस बात की अधिक संभावना होती है कि उपबोध्य उपबोधन प्रक्रिया से लाभान्वित होगा बजाय इसके जबकि इस प्रकार के अनुभव न हो रहे हों (टरॉक्स एंड कारखुफ़्फ 1967)।

ड्राईडेन (1984) ने उपबोध्य के लिए व्यक्तिगत उपबोधन के बहुत-से लाभ बताए हैं–

- व्यक्तिगत उपबोधन पूर्ण गोपनीयता उपलब्ध कराता है। वे लोग जो औरों के सामने अपनी बातें नहीं प्रकट करना चाहते वे व्यक्तिगत उपबोधन को वरीयता देंगे।
- व्यक्तिगत उपबोधन उपबोध्य और उपबोधक के बीच नज़दीकी संबंध स्थापित करने का अवसर देता है। समूह उपबोधन स्थितियाँ प्रारंभ में कुछ लोगों को डराने वाली लग सकती हैं।
- व्यक्तिगत उपबोधन उपबोध्य की सीखने की गति से मिलान करके किया जा सकता है।
- व्यक्तिगत उपबोधन उपचारी चिकित्सीय होता है, जबकि उपबोध्य की प्रमुख समस्या औरों के साथ उनके संबंधों की जगह उनके अपने साथ अपने संबंध संबंधित करती है।
- व्यक्तिगत उपबोधन ऐसे उपबोध्यों के लिए उपयोगी होता है जो अपने आप व औरों के बीच अंतर मानते हैं। उदाहरण के लिए, वे लोग जिन्होंने संबंध छोड़ने का निर्णय ले लिया है और उसके कारण होने वाली व्यक्तिगत समस्याओं का सामना करने को तैयार है।
- व्यक्तिगत उपबोधन उन लोगों के लिए भी उपयोगी है जो अन्वेषण करना चाहते हैं वे दूसरों से अपने आपको अलग करें या नहीं। उदाहरण के लिए, वे जो अपने संबंधों में खुश नहीं हैं किंतु यह निर्णय नहीं कर पा रहे हैं कि वे अपने संबंधों को सुधारे या छोड़ दें।
- व्यक्तिगत उपबोधन उपबोध्यों को भी अपने पारस्परिक क्रियाओं के तरीके बदलने का अवसर प्रदान करता है। इसमें वे इस भय से मुक्त रहते हैं कि इस प्रकार के अन्तर अन्य उपस्थित उपबोध्यों पर अल्टा असर न डालें।
- व्यक्तिगत उपबोधन ऐसे उपबोध्यों के लिए भी लाभदायक होता है जिनको अपने उपचार के समय और उपबोध्यों के साथ साझा करने में बहुत कठिनाई होती है।

ड्राइडैन (1984) ने व्यक्तिगत उपबोधन में सम्मिलित कुछ मुद्दों पर भी प्रकाश डाला है तथा इसके कुछ नुकसान भी बताए हैं :

- व्यक्तिगत उपबोधन में उपबोध्य उपबोधक पर बहुत अधिक निर्भर हो सकता है जिससे उसकी स्वस्थ्य होने की प्रक्रिया में बाधा पड़ सकती है। समूह उपबोधन में अत्यधिक

निर्भरता की संभावना कम होती है क्योंकि उपबोधक को कई अन्य उपबोध्यों के साथ भी संबंध स्थापित करना होता है।

- अधिक निकटता/पारस्परिक क्रिया कुछ उपबोध्यों को भयभीत कर सकती है।
- व्यक्तिगत उपबोधन स्थितियाँ कुछ उपबोध्यों को अपने आपको बदलने के लिए पर्याप्त चुनौतियाँ उपलब्ध नहीं करा पाती।
- वे उपबोध्य जो शर्मीले होते हैं, अधिक आयु के होते हैं तथा जोखिम उठाने से डरते हैं वे समूह उपबोधन से अधिक लाभान्वित हो सकते हैं।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

1) व्यक्तिगत उपबोधन की परिभाषा बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

2) व्यक्तिगत उपबोधन के क्या-क्या लाभ है?

.....

.....

.....

.....

.....

3) व्यक्तिगत उपबोधन में क्या-क्या समस्याएँ आती हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

4.4 समूह उपबोधन

जैसा कि परिभाषाओं के अध्ययन से आप पहले ही समझ चुके हैं कि सामान्यतः उपबोधन व्यक्तिगत मामले के आधार पर एक व्यक्ति द्वारा एक समय पर केवल एक व्यक्ति के लिए ही किया जा सकता है। लेकिन, विभिन्न कारणों से, इस अवधारणा में बदलाव आया है। फिलहाल, समूह उपबोधन अवधारणा को बड़े स्तर पर स्वीकारा गया है। इसका मुख्य कारण है कि यह कम खर्चीली है क्योंकि धन के रूप में संसाधनों और प्रशिक्षित कर्मिकों की सदैव

कमी रहती है। इसलिए यदि एक ही समय में व्यक्तियों के पूरे समूह को उपबोधन प्रदान किया जा सके तो यह अत्यंत लाभदायक सिद्ध होगा। समूह उपबोधन के कुछ अन्य फायदे भी हैं। समूह में बैठने से उपबोध्य की निजी पहचान छिप जाती है और वह इसी वजह से अधिक स्वाभाविक रूप से अनुक्रिया करता है। इसके अतिरिक्त समूह अंतःक्रिया कुछ विशेष अभिवृत्तियों, धारणाओं, भावनाओं, आवश्यकताओं आदि में बदलाव लाने में भी सहायक होती है। ऐसे व्यक्तियों के लिए समूह उपबोधन बहुत अधिक लाभदायक होता है जो अन्तर्वैयक्तिक अंतःक्रियाओं में शर्मीले या आक्रामक हैं, समूहों में उत्तेजित या असुविधा अनुभव करते हैं या सामाजिक अपेक्षाओं के प्रति अनिच्छुक हैं। समाज में कुछ विशेष वर्ग जैसे नशा करने वाले, उत्पीड़ित वर्ग या ऐसे कुछ अन्य वर्ग, समूह उपबोधन से अधिक फायदा उठा सकते हैं।

4.4.1 समूह उपबोधन का अर्थ

समूह उपबोधन, व्यक्तिगत उपबोधन का विस्तार है। इसके अंतर्गत व्यक्तियों का समूह, वृत्तिक उपबोधक के साथ मिलजुल कर सीखता है कि वैयक्तिक और अंतर्वैयक्तिक समस्याओं को किस प्रकार दूर किया जा सकता है। इसका मूल उद्देश्य ऐसे व्यक्तिगत पर्यावरण का निर्माण है जो आत्मानुभूति विकसित करने में प्रत्येक उपबोध्य की सहायता कर सके। यह ऐसी प्रक्रिया है जिसके अंतर्गत सदस्यों के बीच मुक्त संप्रेषण को प्रेरित करना और उसका रखरखाव करना शामिल है जिससे कि एक-दूसरे के दृष्टिकोण को समझा और उसका मूल्यांकन किया जा सके। यह ऐसा साधन है जिससे सामाजिक क्षेत्र में हँसते-खेलते समस्याओं का समाधान किया जाता है। समूह उपबोधन विशेष और नियंत्रित सामूहिक अंतःक्रिया के माध्यम से हर उपबोध्य के व्यक्तित्व और व्यवहार में तीव्र सुधार लाने में सहायक है।

समूह उपबोधन में व्यक्ति अपनी समस्याओं की मिल-जुलकर खोजबीन करते हैं और उनका विश्लेषण भी करते हैं जिससे समस्याओं को वे बेहतर तरीके से समझ सके, समस्याओं का सामना करना सीख सकें और उपलब्ध विकल्पों में से सही विकल्प का चयन कर सकें और अंतिम निर्णय भी ले सकें। समूह उपबोधन उपबोध्यों को एक-दूसरे के निकट लाने में सहायता प्रदान करता है और उन्हें संवेगात्मक सहयोग प्रदान करता है ताकि वे अपने-आप को और अन्य व्यक्तियों को समझ और स्वीकार सकें। जैसे-जैसे समूह संबंध सुदृढ़ बनते हैं, समान निर्देशन के अंतर्गत सामूहिक उद्देश्यों की प्राप्ति पर आधारित भावना विकसित होती चली जाती है।

समूह उपबोधन में व्यक्तिगत उपबोधन के तीनों आयामों अर्थात् उपचारात्मक, निवारक और विकासात्मक का समावेश होता है। विद्यालयों में सामान्यतौर पर निवारक और विकासात्मक पहलुओं पर जोर दिया जाता है क्योंकि विद्यालयों से अभिप्राय ऐसे संस्थानों से होता है जो मुख्य रूप से ऐसे विद्यार्थियों को शिक्षण व निर्देशन प्रदान करते हैं जिनमें से अधिकांश विद्यार्थी सामान्य होते हैं। इसलिए विद्यालयों में समूह उपबोधन मुख्य रूप से समस्याओं से बचने पर जोर देता है ताकि बाद में ये सौहार्दपूर्ण विकास में बाधा न खड़ी करें या विद्यार्थियों को अक्षम न बनाए।

4.4.2 समूह उपबोधन की पूर्वधारणाएँ

समूह उपबोधन में कुछ विशेष पूर्वधारणाओं पर आधारित है। पहली पूर्वधारणा है कि व्यक्तियों में समूह के सदस्यों के बीच एक-दूसरे पर विश्वास करने और दूसरों के विश्वास को प्राप्त करने की आवश्यक योग्यता और क्षमता होती है। उनमें समूह के अन्य सदस्यों के प्रति सरोकार होना चाहिए। इससे समूह संबंध सुदृढ़ बनते हैं और प्रत्येक सदस्य के लिए

सहयोग और सुरक्षा का वातावरण विकसित होता है जिसमें वे मिल-जुलकर व्यक्तिगत समस्याओं का अनुभव करते हैं और उनके निवारण पर विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।

दूसरी पूर्वधारणा यह है कि प्रत्येक व्यक्ति में स्वाभाविक क्षमता होती है कि वह आत्म-परिवर्तन का उत्तरदायित्व ले सके। दूसरी ओर यदि व्यक्ति अनुभव करता है कि उसका जीवन अन्य व्यक्तियों के नियंत्रण में है तो उसके पास सिवाय विध्वंसकारी व्यवहार को अपनाने के और कोई विकल्प नहीं रह जाता।

तीसरी पूर्वधारणा है कि समूह सदस्य, समूह प्रक्रिया के उद्देश्यों और क्रियाविधियों से यह सीख कर समझ सकते हैं कि मुख्य उद्देश्य सदस्यों में सुधार लाना है न कि उन्हीं के अनुरूप चलना।

4.4.3 समूहों का संरचनीकरण

1) सदस्यों का चयन और उनका प्रेरण

समूह उपबोधन के लिए सदस्यों के चयन और उनके प्रेरण के लिए सर्वाधिक प्रयोग में लाया जाने वाला तरीका है। संबद्ध समूह में भेजने से पहले उपबोध्य से व्यक्तिगत रूप में बातचीत की जाए। ऐसी पहली मुलाकात (साक्षात्कार) से उपबोधक को उपबोध्य की पहचान करने का अवसर मिलता है जिससे शुरू से ही आदर स्वीकरण, आश्वासन की अनुभूति हो सके। साथ ही साथ उपबोधक उपबोध्य के कार्य की प्रकृति और इसके लाभों इससे की जा सकने वाली अपेक्षाओं और गोपनीयता से संबंधित नियमों आदि की संक्षिप्त जानकारी देकर यह निर्णय लेने में भी सहायता करता है कि वह उपबोधन समूह में प्रवेश चाहता है या नहीं। इस साक्षात्कार से उपबोधक को यह निर्णय लेने में सहायता मिलती है कि व्यक्ति को समूह उपबोधन से लाभ होगा या नहीं तथा वह यह भी निर्णय ले पायेगा कि व्यक्ति को उस समूह का सदस्य बनने से लाभ होगा या नुकसान।

2) समूह का आकार

समूह उपबोधन प्राप्त करने वाले समूह का आकार अपेक्षाकृत छोटा होना चाहिए। यद्यपि किसी विशेष संख्या का सुझाव देना कठिन होगा, फिर भी लगभग छह से दस सदस्यों को ही किसी एक समूह में शामिल किया जा सकता है। बड़े समूहों को नियंत्रित करना कठिन होता है। लेकिन समूह बहुत छोटे भी नहीं होने चाहिए क्योंकि इससे संसाधन भी अति सीमित हो जाएंगे और भाग लेने के दबाव से तनाव भी बढ़ जाएगा। इसके अतिरिक्त छोटे समूह में एक या अधिक सदस्यों के अनुपस्थित होने से पूरा समूह निष्क्रिय हो जाता है।

3) समूह संघटन

उपबोधन के लिए समूहों का संघटन सदैव वाद-विवादों से घिरा रहता है। समस्या, शिक्षा, बुद्धि, आयु, लिंग या ऐसे ही अन्य पहलुओं के आधार पर समूह सजातीय या विषमजातीय हो, इस पर भी अलग-अलग राय कायम है। निम्नलिखित प्रकार से एक समूह का संघटन किया जा सकता है। ''विभिन्न प्रकार की शिकायतों और लक्षणों से संबद्ध व्यक्तियों को विषमजातीय समूह में शामिल करके समान विचारधारा और समान उद्देश्यों से जुड़े उपबोध्यों को एक समूह में रखना चाहिए क्योंकि एकरूपता से कार्य सुचारू ढंग से हो पाता है और सत्र के दौरान समूह संबंध भी अधिक सुदृढ़ बनते हैं।'' समान आयु के उपबोध्यों से बने समूह भी सभी सदस्यों के लिए उचित हैं।

कभी-कभी महिला और पुरुषों के समूह में संतुलित रूप से सम्मिलित होने से महिलाओं और पुरुषों के अपने विचारों के आदान-प्रदान के अवसर बढ़ जाते हैं। चाहे मत कितने भी भिन्न हों, फिर भी सभी का मानना है कि अत्यधिक विषमता अवांछनीय हैं। इसी प्रकार से अत्यधिक क्रुद्ध और आक्रामक व्यक्ति को भी समूह में शामिल करना उपयुक्त नहीं माना जाता क्योंकि स्वीकृति और संकट से मुक्त वातावरण के निर्माण में जो कि समूह उपबोधन के लिए आवश्यक होता है, वह सदैव बाधक सिद्ध होता है। इसी प्रकार से पुराने रोगी या केवल अपनी ही बात पर अड़े रहने वाले उपबोध्य को भी समूह उपबोधन में शामिल नहीं किया जाना चाहिए, जब तक कि उसकी समस्या व्यक्तिगत उपबोधन के माध्यम से न सुलझाई जा सके। ध्यान रखना चाहिए कि समूह सदैव संतुलित रहे। क्रुद्ध उपबोध्य शांत सदस्यों के लिए मनोवैज्ञानिक संकट उत्पन्न कर सकते हैं।

4) **सभा का समय और अवधि**

बैठक का आयोजन प्रायः कितनी बार किया जाना चाहिए, इस पहलू पर विभिन्न अनुशंसाएँ की गई हैं। समूह में शामिल सदस्यों की संख्या और उनकी बैठकों जिनमें समूह उपबोधन होता है के आधार पर बैठक का आयोजन और अवधि का निर्धारण किया जाता है। अधिकांशतः सप्ताह में एक या दो बार बैठक के आयोजन की अनुशंसा की गई है। सामुदायिक एजेंसी, कॉलेज या निजी कार्यालय में दो घंटे के साप्ताहिक सत्र के विकल्प की अनुशंसा की जाती है। परंतु स्कूल विद्यार्थियों के लिए सप्ताह में दो बार थोड़े-थोड़े सयम के सत्र अधिक उपयुक्त होंगे, क्योंकि छोटे बच्चे जल्दी थक जाते हैं या यह कहें कि उनकी अवधान विस्तृति छोटी होती है इसके अतिरिक्त न आने पर उनकी कम कक्षाएँ छूटेंगी। स्कूलों में आमतौर पर 11 से 15 सप्ताह का समय उपबोधन के लिए निर्धारित किया जाता है। यह अधिक सुविधाजनक है और साथ ही साथ समूह के उद्देश्यों की प्राप्ति में यह पर्याप्त समय को सुनिश्चित भी करता है।

5) **भौतिक विन्यास**

संवेगात्मक वातावरण और उपबोधक की विशेषताओं की तुलना में उपबोधन कक्ष का भौतिक विन्यास कम महत्त्वपूर्ण माना गया है। एक सक्षम उपबोधक और समूह अनुपयुक्त भौतिक विन्यास के अंतर्गत भी भली-भाँति समूह उपबोधन प्राप्त कर सकते हैं वरन् अच्छे भौतिक विन्यास और अनुपयुक्त उपबोधक के। हाँ ध्यान दें कि उपबोधन सत्र के दौरान किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न न हो और न ही उपबोधन से जुड़ी गोपनीयता भंग हो। कक्ष बड़ा होने की बजाए छोटा होना चाहिए और बैठने की व्यवस्था भी नम्य और विविध होनी चाहिए। औपचारिक और स्थायी व्यवस्था की तुलना में गोलाकार होने और सदस्यों की मनपसंद सीट की उपलब्धता होने को अधिक वरीयता दी जानी चाहिए।

4.4.4 समूह उपबोधन की प्रक्रिया

समूह उपबोधन प्रक्रिया को विभिन्न अवस्थाओं में विभाजित किया जा सकता है। ये अवस्थाएँ हैं :

- **प्रारंभिक अन्वेषण अवस्था**

  प्रारंभिक सत्रों में समूह सदस्य प्रायः एक-दूसरे से अपरिचित होते हैं। वे ऐसी स्थिति में शायद एक-दूसरे से बातचीत करना पसंद न करें और यदि करें भी तो केवल ऊपर-ऊपर के सामान्य मुद्दों पर चर्चा करें। वे प्रारंभ में शर्मीले और सहमे से नज़र आते हैं।

वे अन्य सदस्यों की तुलना में केवल अपने-आप पर ही ध्यान केंद्रित करना पसंद करते हैं। ऐसी अवस्था में उपबोधक अपनी भूमिका की व्याख्या के साथ-साथ समूह सदस्यों की भूमिकाओं का भी वर्णन करता है। इसके लिए उसे अनुकूल (सुकर) स्थितियों का निर्माण करना पड़ता है ताकि वह दूसरों का विश्वास जीत सके और सच्ची भावना, स्नेह और सदस्यों के बारे में बिना कोई गूढ़ राय कायम किए उन्हें ध्यान से सुनकर वह अपना कार्य पूरा कर सके। उपबोधन के मध्य सदस्यों को अपने विचारों और भावनाओं को खुलकर अभिव्यक्त करने के लिए अभिप्रेरित किया जाता है। उपबोधक सदस्यों के बीच निर्दशन और स्वयं उसी प्रकार व्यवहार करके सुसाध्यपूर्ण, संप्रेषी अभिवृत्ति और कौशलों का निर्माण करता है। जब उपबोध्य पाते हैं कि उपबोधक उनके सही और गलत विचारों को सकारात्मक ढंग से स्वीकार करता है तो वे भी उसकी बातों को तत्परता से और यथोचित ढंग से स्वीकार करते हैं।

- **संक्रांति अवस्था**

जैसे-जैसे समूह प्रारंभिक अन्वेषण अवस्था से अगली अवस्था की ओर अग्रसर होता है, समूह सदस्यों का ध्यान गूढ़ रूप से इस ओर आकर्षित किया जाता है कि यदि वे प्रगति चाहते हैं तो पहले अपने-आपको खुलकर समझें कि वे क्या हैं, उनके गुण और दोष कौन से हैं और इसी प्रकार से दूसरे भी उनके स्वभाव पर अपने विचार व्यक्त करें जिससे तत्परता से वे एक-दूसरे से विचारों का आदान-प्रदान कर सकें। यद्यपि इस अवस्था तक आते-आते सभी सदस्यों में एक-दूसरे के प्रति विश्वास जागृत हो जाता है। लेकिन फिर भी यह भावना अभी पक्की नहीं बन पाई है और वे उत्सुक, उभयभवी और रक्षात्मक रूप से कार्य करते हैं, क्योंकि वे अनुभव करते हैं कि ज्यों-ज्यों वे अधिक गहन रूप से अपने आपको खोजेंगे, उनके समक्ष कष्टकर संवेदनाएँ और भावनाएँ प्रकट होती चली जाएंगी। इस अवस्था पर कुछ को भय रहता है कि यदि वे अपनी भावनाओं को खुलकर व्यक्त करेंगे तो बाकी सदस्य इन्हें अस्वीकृत कर देंगे। इसी प्रकार से कुछ सोचते हैं कि ऐसी अभिव्यक्ति के दौरान उपबोधक या अन्य सदस्य उसका उपहार कर सकते हैं। यह ऐसी अवस्था है कि सदस्यों के बीच या उपबोधक से शक्ति प्राप्त करने, नियंत्रण या आधिपत्य जमाने के लिए, किए जाने वाले संघर्ष से द्वंद्व या विद्रोह की भावना भी जागृत हो सकती है। समूह सदस्य खुलकर एक-दूसरे की भर्त्सना करने में प्रवृत्त हो सकते हैं। वे कई बार उपबोधक के नेतृत्व को शक की निगाह से देखते हैं।

ये सभी व्यवहार कष्टकारी भावनाओं की खोज में अवरोध प्रदर्शित करते हैं। अवरोध/प्रतिरोध ऐसा संकेत है जो बताता है कि सदस्य समस्याओं के निपटान की ओर अग्रसर हो रहे हैं। प्रतिरोध दर्शाने के विविध तरीके हैं, जैसे– कुछ सत्रों में भाग न लेना, अन्यों की उपेक्षा करना, या बिना भावनाओं की अभिव्यक्ति के बोलते रहना। प्रतिरोध उत्पन्न होने की स्थिति में उपबोधकों को सदैव सदस्यों को प्रेरित करना चाहिए कि द्वंद्वों का समाधान करें तथा अधिक प्रामाणिकता से आत्म-अन्वेषण के लिए आगे बढ़ें।

- **कार्यकारी चरण**

इस अवस्था में सदस्य एक-दूसरे के काफी निकट आ जाते हैं और दूसरों की समस्याओं के प्रति अधिक जागरूक हो जाते हैं। चूँकि इस अवस्था तक विश्वास बढ़ जाता है, अब वे भावनाओं और विचारों के व्यक्त करने में अधिक जोखिम उठाने से भी नहीं कतराते। इसलिए वे एक-दूसरे को रचनात्मक प्रतिपुष्टि देते हैं। अब वे एक-दूसरे

को अधिक सहयोग और सहायता प्रदान करना चाहते हैं। अब एक-दूसरे पर उनका विश्वास गहरा हो जाता है। लेकिन इस समूह घनिष्ठता या अधिक मेलजोल से झूठी संबद्धता उत्पन्न हो जाती है जिसके अंतर्गत सदस्य एक-दूसरे को बचाने और नकारात्मक भावनाओं को दबाने की चेष्टा करते हैं।

इस अवस्था में उपबोधकों को चाहिए कि वे समूह सदस्यों को उनके व्यवहारों की वास्तविकता से अवगत करवाएं और उनसे आग्रह करें कि समूह में रहकर सदस्यों ने जो कुछ भी प्राप्त किया है, वे उन विचारों को परिवर्तित करने के लिए एक-दूसरे को चुनौती दें। जैसे, यदि कोई सदस्य यह कहता है कि उसे अपने विचारों को प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करना चाहिए परंतु वस्तुतः समूह में या समूह से बाहर निष्क्रियता का निदर्शन करता है, समूह ऐसे सदस्य को आग्रही बनने के लिए जोर दे सकता है।

धीरे-धीरे समूह उत्पादक रूप धारण कर लेता है और महत्त्वपूर्ण समस्याओं के गूढ़ अध्ययन के प्रति वचनबद्ध हो जाता है और समूह में होने वाली अंतः परिवर्तनों पर पूरा ध्यान देना भी आरंभ कर देता है। इस अवस्था में अब वे उपबोधक पर कम निर्भर करते हैं और विशिष्ट व्यक्तिगत-लक्ष्यों और समूह लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए ध्यान केंद्रित करना शुरू कर देते हैं। समूह सदस्य एक-दूसरे से आसानी से तर्क-वितर्क कर सकते हैं और चुनौतियों को बदलाव लाने में रचनात्मक साधनों के रूप में स्वीकार करना पसंद करते हैं। समूह में जब व्यवहारपरक और मनोवृत्तिपरक परिवर्तन लाने पर अंतःक्रिया का आरंभ होता है तो सदस्य इस चुनौती को स्वीकार करते हुए अपने रोजाना के जीवन में बदलाव लाने का प्रयास करते हैं।

उपबोधन के अंतर्गत सैद्धांतिक अभिविन्यासों के तदुनुरूप विविध तकनीकों का प्रयोग किया जाता है। भूमिका अभिनय, मनो-नाटक, आग्रहित प्रशिक्षण आदि भी ऐसी तकनीकें हैं जिनका सर्वाधिक प्रयोग किया जाता है।

- **समकेन और समाप्ति**

समाप्ति का अर्थ केवल उपबोधन प्राप्त करना बंद करना नहीं है। वास्तव में यह 'समूह उपबोधन' प्रक्रिया की एक महत्त्वपूर्ण अवस्था है। समूह उपबोधन में समाप्ति की तारीख पहले से ही तय करना एक सामान्य बात है। बेहतर होगा यदि अंतिम सत्र से पहले के तीन या चार सत्रों में समाप्ति सत्र के बारे में विचार-विमर्श करना आरंभ कर दिया जाए। इससे निर्भरता से मुक्ति से पहले मनोवैज्ञानिक या संवेगात्मक भावनाओं को नियंत्रित करने में पर्याप्त समय और बाहरी दुनिया में नए अनुभव अंतरित करने के प्रति पर्याप्त समय मिल जाता है और अधूरी समस्याओं को निर्धारित समय में पूरा किया जा सकता है। व्यक्तिगत सदस्यों के नए अनुभवों पर प्रकाश डाला जा सकता है और सोच-विचार किया जा सकता है कि इन अनुभवों के आधार पर सदस्य अपनी पहचान कैसे बना सकते हैं। उपबोधन सत्रों की समाप्ति के उपरांत यदि आवश्यक हो तो भावी सहायता के लिए सुझाव भी दिए जा सकते हैं। सहयोगपरक समूह या किसी अन्य बड़े समूहों की सदस्यता प्राप्त करके या अन्य उन्नत समूहों के भाग बनकर, पढ़कर या कार्यशालाओं में भाग लेकर नवीन अधिगम की व्यावहारिकता पर विशेष सुझाव भी प्राप्त किए जा सकते हैं।

4.4.5 समूह उपबोधन के लाभ और सीमाएँ

लाभ

क) यह विविध रूपों से कम खर्चीला है क्योंकि समूह उपबोधन के अंतर्गत एक साथ व्यक्तियों की बड़ी संख्या को उपबोधक द्वारा लाभान्वित किया जा सकता है और इससे समय और पैसे की बचत होती है।

ख) इससे व्यक्तियों को अपनी अभिवृत्तियों, आदतों तथा निर्णयन को समाजीकृत करने में सहायता मिलती है।

ग) इससे हर सदस्य को निरंतर प्रेरणा मिलती है कि वह हर कार्य को ऐसे सीखे जैसे कि वह वास्तविक जीवन में कोई कार्य कर रहा हो। विचारों और भावनाओं को खुलकर और सही तरीके से अभिव्यक्त करके समूह संबंध सुदृढ़ बनते हैं और उद्देश्य सामूहिक रूप में परिवर्तित हो जाता है जिससे उद्देश्य की प्राप्ति में सहायता मिलती है। सामान्य समस्याओं से जुड़े मुद्दों पर चर्चा करने से सदस्यों के अंतःव्यक्तिगत संबंध मजबूत बनते हैं। समूह में वे ऐसे व्यावहारिक क्षेत्र प्राप्त करते हैं जिसमें वे दूसरों से जुड़ने के अधिक लचीले और संतोषजनक नए तरीकों की जानकारी प्राप्त करते हैं। इसके अलावा सदस्य अपने मूल्यों का महत्त्व समझते हैं और इसी परिवेश में अच्छे मानवीय संबंध स्थापित करने के महत्त्व को भी समझ पाते हैं।

कुछ सदस्य जो व्यक्तिगत उपबोधन से लाभान्वित नहीं होते, वे समूह उपबोधन से समस्या का निवारण करने में सफल हो जाते हैं। समूह उपबोधन स्थिति में उत्तेजना, अकेलेपन की भावना कम हो जाती है और सदस्य खुलकर बातचीत करने में सक्षम हो जाते हैं। इसके अतिरिक्त समूह उपबोधन से उपबोधक को भी समूह निर्माण की प्रारंभिक अवस्था में व्यक्तियों का अध्ययन करने का अवसर प्राप्त होता है।

सीमाएँ

समूह उपबोधन सभी के लिए उपयुक्त नहीं है। कुछ व्यक्ति समूह में भय महसूस करते हैं और कुछ व्यक्तियों में सहनशक्ति का स्तर अत्यंत निम्न होता है और वे समूह की माँगों के अनुरूप व्यवहार बदलने में सक्षम नहीं होते। इसी प्रकार से समूह में व्यक्तिगत और निजी समस्याओं को उजागर नहीं किया जा सकता। इसके अतिरिक्त समूह उपबोधन के दौरान स्थिति के ऊपर उपबोधक का नियंत्रण कम होता है और कभी-कभी सदस्यों से अच्छे संबंध स्थापित करने में उपबोधक गंभीर रूप से पिछड़ जाता है। अतः उपबोधक को उपयुक्त कारकों को ध्यान में रखते हुए निर्णय लेना चाहिए कि किसी एक प्रकार के व्यक्तियों और संबद्ध समस्याओं के लिए समूह उपबोधन उपयुक्त रहेगा या नहीं।

व्यक्तिगत उपबोधन और समूह उपबोधन

व्यक्तिगत उपबोधन और समूह उपबोधन के बीच विभिन्नताएँ भी हैं और समानताएँ भी :

समानताएँ

क) दोनों का उद्देश्य समान है अर्थात् उपबोध्य को आत्म-बोध की प्राप्ति में सहायता प्रदान करना और उसे समेकित, आत्म-निर्भर, आत्म-निर्देशित और जिम्मेवार व्यक्ति बनने में सहायक होना।

ख) दोनों में समान तकनीकों का प्रयोग होता है जैसे, भावनाओं को स्पष्ट करना और विषयवस्तु का निपटारा करना आदि का प्रयोग किया जाता है।

ग) गोपनीयता और निजता को बनाए रखना।

घ) सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण बात है परिवेश जो कि स्वीकरणीय, अनुज्ञात्मक और सुरक्षित होता है।

च) दोनों माध्यमों से उपबोधन प्राप्त करने वालों में ऐसे व्यक्ति होते हैं जो तनाव, मायूसी, कुंठा, उत्तेजना या अन्य विकासपरक समस्याओं से संघर्ष करने की चेष्टा कर रहे हैं।

विभिन्नताएँ

क) व्यक्तिगत उपबोधन एकैकी तथा सामने बैठकर बनने वाले संबंध को दर्शाता है, जिसमें उपबोधक केवल अपने उपबोध्य के साथ आमने-सामने बैठकर उपबोधन देता है। लेकिन समूह उपबोधन में उपबोधक उपबोध्यों की बड़ी संख्या को एक साथ उपबोधन प्रदान करता है।

ख) व्यक्तिगत उपबोधन में केवल एक उपबोध्य ही सहायता प्राप्त करता है जबकि समूह उपबोधन में उपबोध्य आपस में एक-दूसरे को भी सहायता प्रदान करते हैं।

ग) समूह उपबोधन में समूह गतिकी के सिद्धांत के काफी अनुप्रयोग शामिल होते हैं जबकि व्यक्तिगत उपबोधन में उपबोधक और उपबोध्य का आपसी संबंध अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

4) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत :

i) उपबोधन केवल एक ही व्यक्ति द्वारा एक को दिये जाने की स्थिति में ही दिया जा सकता है।

ii) समूह उपबोधन में उपबोध्य के सहायतार्थ व्यावसायिक विशेषज्ञों का समूह साथ मिलकर उपबोध्य की सहायता करता है।

iii) समूह उपबोधन मदिरापान करने वालों के लिए उपयुक्त है।

iv) अत्यधिक क्रुद्ध और गर्म मिजाज व्यक्तियों को समूह उपबोधन से सर्वाधिक लाभ पहुँचता है।

v) समूह उपबोधन के अंतर्गत उपबोधक के कौशल की तुलना में भौतिक परिवेश (अभिविन्यास) अधिक महत्त्वपूर्ण है।

5) निम्न प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर लिखें।

i) समूह उपबोधन के दो लाभों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

ii) समूह उपबोधन की क्या सीमाएँ हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

iii) व्यक्तिगत उपबोधन और समूह उपबोधन के बीच के दो अंतरों का उल्लेख कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

iv) समूह उपबोधन की अवधारणाएँ कौन-सी हैं?

.....

.....

.....

.....

.....

4.5 समकक्ष उपबोधन

उपबोधन के समान ही समकक्ष उपबोधन भी एक सहायक संबंध व प्रक्रिया है। समकक्ष उपबोधन में दो व्यक्ति या व्यक्तियों का एक समूह एक सहायक संबंध में होते हैं। समकक्ष उपबोधन का प्रयोग उन स्थितियों में किया जाता है जहाँ व्यक्तियों के बीच कई बातें समान होती हैं। समकक्षों के बीच उपबोधन के लिए आधार यह होता है कि अधिकांश लोगों को जब कठिन परिस्थितियों का सामना करना पड़ता है तो वह महत्त्वपूर्ण निर्णयों को लेने में अपने मित्रों से ही सहायता लेते हैं।

स्कूल के वातावरण में समकक्षों से परामर्श लेने का अर्थ है एक विद्यार्थी दूसरे विद्यार्थी या विद्यार्थियों के समूह को परामर्श देता है। समकक्षों से परामर्श लेने को अब और भी महत्त्व इसलिए दिया जा रहा है क्योंकि बहुत सारे स्कूलों में नियमित, पूर्णकालिक व्यावसायिक उपबोधक नहीं है। यदि स्कूल में नियमित उपबोधक होता भी है तो एक ही उपबोधक के लिए इतने सारे विद्यार्थियों की अलग-अलग प्रकार की आवश्यकताओं को पूरा कर पाना कठिन होगा। ऐसे में बहुत सारे विद्यार्थियों के लिए अध्यापक के सामने खुलकर बात कर पाना सरल नहीं होगा। अवश्य ही अब आप सोच रहे होंगे कि क्या समकक्ष उपबोधक जटिल समस्याओं, मुद्दों और स्थितियों को सुलझा पाएंगें। आपका संदेह व चिन्ता सही है। वास्तव में सामान्य रूप से यह सोचा जाता है कि समकक्ष उपबोधकों का प्रयोग उपयुक्त स्थितियों में ही किया जाना चाहिए। उदाहरण के लिए, हम यह नहीं चाहते कि समकक्ष

उपबोधन यौन-उत्पीड़न या आत्महत्या के रूप में दिखाई दे। यहाँ पर समकक्ष परामर्शदाता का कार्य समवयस्क को समय से व्यावसायिक मदद प्राप्त करने में सहायता दिलवाने तक ही सीमित रह जाता है। समकक्ष परामर्शदाता द्वारा किया गया इस तरह का कार्य बहुत ही महत्त्वपूर्ण होता है क्योंकि इससे समवयस्क को स्थिति का सामना करने के लिए समय से सहायता मिल जाती है और उससे होने वाला नुकसान सीमित हो जाता है। लेकिन फिर भी एक समकक्ष अपने समवयस्क को कौशलों का ज्ञान प्राप्त करने, समय प्रबंधन, सामाजिक कौशलों को सीखने, स्कूल में नियमित उपस्थिति आदि के विषय में उपबोधन प्रदान कर सकता है।

समकक्ष उपबोधन या बुद्धिमत्तापूर्ण परामर्श एक नई संकल्पना नहीं है यद्यपि अब इसका महत्त्व निरंतर बढ़ता जा रहा है। कुछ आवासीय स्कूलों में एक विशेष प्रकार का समकक्षीय परामर्श काफी समय से व्यवहार में लाया जाता रहा है। कई बार स्कूल का एक वरिष्ठ विद्यार्थी एक या दो या और अधिक स्कूल में नये आये छात्रों को बुद्धिमत्तापूर्ण परामर्श देने की भूमिका निभाता है। यह वरिष्ठ विद्यार्थी स्कूल में आये नये छात्रों को स्कूल की दिनचर्या से परिचित कराकर उनको सामाजिक स्तर पर स्कूल में सामंजस्य बैठाने व भावनात्मक रूप में घर से दूर नये वातावरण में पढ़ाई आदि के काम में सहायता व परामर्श प्रदान करता है। दिन-दिन के रिहायशी स्कूल (boarding schools) में भी कई बार काफी अध्यापक समकक्ष परामर्श को प्रोत्साहित करते हैं। अध्यापक कई बार किसी होशियार बच्चे को अन्य बच्चों को, जो कि पढ़ाई के कामों में कठिनाई अनुभव करते हैं, बताने व सिखाने के लिए कह देते हैं। आप सहमत होंगे कि समकक्षों द्वारा परामर्श देना प्रारंभिक अवस्था में कई स्कूलों में विद्यमान थी। अध्यापक स्कूल में समकक्ष परामर्श का प्रयोग इसलिए करते थे क्योंकि उनको यह अपने विद्यार्थियों के लिए लाभदायक लगता था। समकक्ष परामर्श के कुछ लाभ निम्न प्रकार हैं –

- समकक्ष परामर्श, परामर्श देने वाले और परामर्श प्राप्त करने वाले दोनों को लाभ पहुँचाता है।
- यह कम खर्चीला होता है क्योंकि समकक्ष परामर्शदाता स्कूल के विद्यार्थियों में से ही लिए जाते हैं।
- समकक्ष परामर्श सरलता से उपलब्ध होता है।
- समकक्ष परामर्श अनौपचारिक होता है इसलिए परामर्श प्राप्त करने वाला बिना किसी संकोच के परामर्शदाता तक पहुँच सकता है।
- समकक्ष परामर्श स्कूल के उपबोधन कार्यक्रम को बढ़ाता है।
- समकक्ष परामर्श अधिक विद्यार्थियों को उपबोधन कार्यक्रम के अंतर्गत लाता है।
- समकक्ष परामर्शदाता विद्यार्थियों और व्यावसायिक परामर्शदाता के बीच की दूरी को कम करते हैं।

जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, कुछ अध्यापकों और स्कूलों ने कई बार अन्य विद्यार्थियों की सहायता के लिए समकक्ष परामर्श से प्राप्त सेवाओं का प्रयोग किया है। आइए, अब देखते हैं कि समकक्ष परामर्शदाता स्कूल के वातावरण में क्या-क्या काम कर सकता है।

क) **शैक्षिक गतिविधियों में सहायता :** समकक्ष परामर्शदाता अन्य विद्यार्थियों, जो कि सीख पाने के क्षेत्र में कठिनाई अनुभव करते हैं, को पढ़ा सकते हैं। समकक्ष परामर्शदाता को ऐसे विद्यार्थी या विद्यार्थियों के समूह के साथ जोड़ दिया जाता है जिनको पढ़ाई की विभिन्न गतिविधियों में अतिरिक्त सहायता की आवश्यकता पड़ती है। उदाहरणस्वरूप–

- एक विद्यार्थी के काफी समय बीमार रहने के कारण अनुपस्थित रहने पर पढ़ाई में उसकी सहायता करना।
- कठिन पढ़ाई को समझने में सहायता उपलब्ध कराना।
- किसी विद्यार्थी के लिखने और पढ़ने के कौशल में सुधार लाने में सहायता करना।
- विद्यार्थियों की अच्छी तरह से पढ़ाई कर पाने में सहायता करना।
- विद्यार्थियों की उनके समय प्रबंधन को और अच्छा बनाने में सहायता करना।

ख) **नये विद्यार्थियों का प्रवेश कराना :** जब बच्चे स्कूल में आते हैं या किसी नये स्कूल में जाते हैं तब शुरूआती समय में उनको स्कूल की दिनचर्या में अपने आप को ढालने में कठिनाई का अनुभव होता है। जब बच्चे स्कूल में पहली बार आते हैं तब स्कूल में पहले से आ रहे बच्चे समकक्ष परामर्शदाता के रूप में (जो कि आयु अन्तर परामर्श के नाम से भी जाना जाता है) उन्हें स्कूल के कार्य करने के तरीकों से परिचित कराने व सामाजिक व भावात्मक रूप में नये वातावरण को अपनाने में उनकी सहायता कर सकते हैं। समकक्ष परामर्शदाता किसी अन्य स्कूल से आये बच्चों के लिए भी इस प्रकार की सहायता उपलब्ध करा सकते हैं। नया बच्चा समकक्ष परामर्शदाता की सहायता से स्कूल की दिनचर्या, स्कूल के लोकाचार व सांस्कृतिक-सामाजिक वातावरण से परिचित हो सकते हैं। इस प्रकार की मदद वाला संबंध नये आये बालक को नये वातावरण में स्वीकृत होने की अनुभूति प्रदान करता है।

ग) **कठिनाइयों/विरोधाभास को दूर करने में सहायता :** स्कूल में विद्यार्थी अलग-अलग सामाजिक-सांस्कृतिक और आर्थिक परिवेश से आते हैं। उनमें अलग-अलग प्रकार की योग्यताएं होती हैं। माध्यामिक स्कूल की अवस्था के दौरान विद्यार्थी अपने जीवन के सबसे महत्त्वपूर्ण दौर 'किशोरावस्था' से गुज़रता है। यहाँ पर बताये गये सभी कारण कई बार स्कूलों में विरोधी स्थितियाँ पैदा करने में योगदान दे सकते हैं। समकक्ष परामर्शदाता विद्यार्थियों के बीच में मध्यस्थ के रूप में काम करके उनके विरोधों को दूर करने में सहायता कर सकता है।

घ) **अनुपस्थिति और पढ़ाई छोड़ने को रोकने में सहायता :** कुछ विद्यार्थी बिना सूचना दिये या छुट्टी लिए बिना ही स्कूल नहीं आते। कुछ मामलों में गलत कामों में पड़ जाने से भी स्कूल छोड़ना पड़ जाता है। समकक्ष परामर्शदाता इस प्रकार के विद्यार्थियों के साथ पारस्परिक क्रिया के माध्यम से उनको स्कूल आने के लिए प्रेरित कर सकता है।

कुछ कार्य ये हैं जिन्हें समकक्ष परामर्शदाता स्कूल में आयोजित कर सकता है। कुछ अन्य कार्यों को भी स्कूल की आवश्यकतानुसार इनमें जोड़ा जा सकता है –

समकक्ष उपबोधन कार्यक्रम तैयार करना .

अपने विद्यालय में आप समकक्ष उपबोधन कार्यक्रम कैसे तैयार करेंगे? आइए, इस कार्यक्रम को तैयार करने के लिए आप जिन मार्गदर्शी निर्देशों का अनुसरण कर सकते हैं; उन पर चर्चा करें।

क) **आवश्यकता का अनुमान लगाने के लिए सर्वे करना**

समकक्ष परामर्श कार्यक्रम की रूपरेखा तैयार करने से पहले हस्तक्षेप की आवश्यकता वाले विकास के क्षेत्रों (शैक्षिक, सामाजिक और भावनात्मक समायोजन, पारस्परिक

कौशल आदि) की पहचान, करने के लिए सर्वे करना। उसके बाद अनुमान लगाना कि इन क्षेत्रों में विकास के लिए समकक्ष परामर्श एक उपयुक्त विकल्प होगा या नहीं।

ख) लक्ष्यों को परिभाषित करना

समकक्ष परामर्श के लक्ष्य निम्नलिखित चीज़ों पर निर्भर होंगे–(1) विद्यार्थी जिन्हें आप परामर्शी सेवाएं प्रदान करना चाहते हैं; (2) कौन-से विद्यार्थी परामर्शदाता के रूप में कार्य करेंगे; व (3) विकास के वे क्षेत्र जिनकी आपने कार्यक्रम के लिए पहचान की है। कार्यक्रम की रूपरेखा का यह समान आयु का समूह (समकक्ष परामर्श) या अलग-अलग आयु के विद्यार्थियों का (बड़ी कक्षा के व छोटी कक्षा के विद्यार्थियों का) समूह होगा, भी कार्यक्रम के लक्ष्यों को निर्धारित कर सकते है। अपेक्षित परिणाम परिभाषित करने से भी की जाने वाली विशिष्ट क्रियाओं के संबंध में, क्रियाओं के लिए अपेक्षित संसाधनों तथा क्रियाओं आदि के लिए अपेक्षित भागीदारी आदि के विषय में स्पष्टता आयेगी।

ग) समकक्ष परामर्शदाताओं का चयन

समकक्ष परामर्श कार्यक्रम के सबसे महत्त्वपूर्ण भागीदार समकक्ष परामर्शदाता हैं। इसलिए समकक्ष परामर्शदाता का चयन करते समय बहुत ध्यान देने की आवश्यकता है। समकक्ष परामर्शदाता में वे सब विशेषताएं होनी चाहिए जो कि एक अच्छे परामर्शदाता में पाई जाती हैं। इसलिए आपको ऐसे विद्यार्थियों का चयन करना चाहिए जिनमें नीचे दी जा रही विशेषताएँ दृष्टिगोचर हों –

- तद्नुभूति
- आत्मविश्वास
- दूसरों की बात सुनने की योग्यता
- गैर-निर्णयात्मक व्यवहार
- दूसरों की सहायता करने की स्वाभाविक आवश्यकता
- विभिन्न स्थितियों को समझने वाला
- अच्छी विचार संचरण योग्यता
- विश्वसनीयता

घ) समकक्ष परामर्शदाता का प्रशिक्षण

समकक्ष परामर्शदाताओं की पहचान करने के बाद अगला काम होता है उनको प्रशिक्षित करने और तैयार करने का ताकि वे अपनी समकक्ष परामर्शदाता की भूमिका पूरी कर सके। इस प्रकार का प्रशिक्षण कार्यक्रम किसी व्यावसायिक परामर्शदाता द्वारा आयोजित किया जाना चाहिए।

च) सहभागियों की भूमिका को परिभाषित करना

समकक्ष परामर्श कार्यक्रम में कई अलग-अलग लोग कार्य करते हैं। इसलिए आवश्यक है कि प्रत्येक कार्यकर्ता की भूमिका स्पष्ट रूप से परिभाषित कर दी जाय। एक समायोजक की आवश्यकता कार्यक्रम में भाग लेने वाले विभिन्न लोगों की गतिविधियों को समायोजित करे। उदाहरण के लिए, यह समायोजक की ज़िम्मेवारी है कि समकक्ष परामर्शदाताओं के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन करे। इसके अतिरिक्त क्या

समायोजन को ही समकक्ष परामर्शदाता और परामर्श प्राप्त करने वालों का मिलान करना चाहिए या क्या यह काम स्कूल के उपबोधक द्वारा किया जाना चाहिए? समकक्ष परामर्शदाताओं को सुपरविज़न व सहायता कौन उपलब्ध कराएगा? कौन-कौन से विशेष कार्य समकक्ष परामर्शदाता को करने होंगे? स्कूल के अन्य अध्यापकों व स्टाफ के क्या-क्या काम होंगें? कार्यक्रम की सफलता के लिए आपको पहले-पहले विभिन्न भागीदारों की पहचान करनी चाहिए और फिर उन सबका काम अलग-अलग रूप से स्पष्ट कर देना चाहिए।

छ) स्कूल प्रशासन की सहायता प्राप्त करना

बिना स्कूल प्रशासन की मदद के आप स्कूल में किसी भी प्रकार की कोई गतिविधि आयोजित नहीं कर सकते। प्रधानाचार्य, अध्यापकों व अन्य स्टाफ की सहायता, कार्यक्रम की सफलता के लिए अत्यावश्यक है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

6) समकक्ष परामर्श की परिभाषा बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

7) समकक्ष परामर्श के क्या-क्या लाभ है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

8) समकक्ष परामर्शदाताओं के कार्य बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

9) समकक्ष परामर्श कार्यक्रम स्थापित करने के लिए अपनाए जाने वाले मार्गदर्शन और चरणों के विषय में बताइए।

.....

.....

.....

.....

.....

4.6 बहु-संस्कृति उपबोधन

आपने सीखा है कि परामर्श देना एक सहायक संबंध स्थापित करना होता है जहां कि एक व्यावसायिक उपबोधक और एक (परामर्श प्राप्त करने वाला) ग्राहक मिलकर ग्राहक में सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए कार्य करते हैं। एक बहु-संस्कृति समाज में सदैव परामर्श देने और लेने वाले एक ही सांस्कृतिक समुदाय के हों यह आवश्यक नहीं है। बहु-संस्कृति परामर्श यह समझने के लिए विकसित हुआ कि जब व्यावसायिक परामर्श देने वाला और उसका ग्राहक (उपबोध्य) एक अलग सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से आते हैं तो उनके बीच के अंतर पारस्परिक क्रियाओं और लाभदायक प्रक्रियाओं की गुणवत्ता को किस प्रकार प्रभावित करते हैं। भारतीय जनसंख्या बहुपहचान के रूप में गठित है। इसमें विभिन्न संस्कृति, समूह, जाति, जनजाति, सामाजिक आर्थिक वर्ग, धर्म, भाषा, अल्पसंख्यक, लिंग, आयु, लैंगिक पूर्वाभिमुखीकरण, भौगोलिक स्थिति आदि के आधार पर अंतर हैं। यह वास्तविकता स्कूल समुदाय में भी प्रतिबिंबित होती है। अध्यापक और विद्यार्थी एक-सी ही पृष्ठभूमि से आये हों यह आवश्यक नहीं होता है। विद्यार्थी समुदाय में भी आपस में अंतर होता है। इसलिए बहु-संस्कृति परामर्श स्कूल के परामर्श प्रदान करने के कार्यक्रम में महत्त्वपूर्ण बनता जा रहा है। एक बहु-संस्कृति परामर्श कार्यक्रम में परामर्शदाता को अतिरिक्त बहु-संस्कृति योग्यताएं प्राप्त करने और प्रदर्शित करने की आवश्यकता होगी। बहु-संस्कृति परामर्श में ग्राहक की संस्कृति के विषय में जानने, उनकी समाजीकरण की प्रक्रियाओं और उन प्रक्रियाओं को समझने की आवश्यकता होती है जिनके आधार पर उनके समाज में महिला-पुरुष की भूमिका की पहचान होती है, उनकी मान्यताएँ अभिवृत्तियाँ तथा विश्व दृष्टिकोण निर्धारित होते हैं। एक सांस्कृतिक रूप से दक्ष परामर्शदाता में अपने साथ काम करने वालों के अंतरों को समझने और उनका सम्मान करने की योग्यता होनी चाहिए। बहु-संस्कृति परामर्श यह अपेक्षा करता है कि एक परामर्शदाता के रूप में कार्य करते समय आप अपने ऊपर ध्यान दें और उन लोगों के प्रति, जो आपसे भिन्न हैं, अपने विश्वास, मान्यताओं, अभिवृत्तियों, पूर्वाग्रहों, धारणाओं तथा विश्व विचारों को पहचानें। अपने संबंध में जागरूक रहकर तथा ग्राहकों की संस्कृति के संबंध में जानकारी रखकर आपको ग्राहकों की वास्तविक समस्याओं को समझ कर उनके समाधान के लिए उपयुक्त हस्तक्षेप, कार्यनीतियों व तकनीकें अपनाने में सहायता मिलेगी।

4.7 संकटकालीन उपबोधन

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि जीवन में आये विनाशकारी परिवर्तन हमारी सामान्य रूप से काम करने की क्षमता को समाप्त कर देते हैं। हमें उस कठिन स्थिति का सामना करने और सामान्य स्थिति में वापिस आने के लिए मदद की आवश्यकता पड़ती है। एक संकटकालीन

स्थिति व्यक्ति के जीवन में किसी प्रियजन की मृत्यु अक्षम कर देने वाली चोट, बीमारी, शारीरिक अत्याचार, यौन उत्पीड़न, प्राकृतिक आपदा, युद्ध, युद्ध में संलग्नता, नागरिक संघर्ष/अव्यवस्था व अन्य इस प्रकार की घटनाओं के कारण उत्पन्न हो सकती है। बच्चे भी अपने जीवन में इस प्रकार की घटनाओं का सामना करते समय संकट का अनुभव कर सकते हैं। यह घटनाएं गहन हैं तथा तनावपूर्ण होती हैं और गंभीर रूप से व्यक्ति को इनका सामना करने की योग्यता को प्रभावित करती है। कई बार व्यक्ति इनका अकेले सामना कर पाना कठिन अनुभव करता है और इससे उनका दिन-प्रतिदिन का सामान्य जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। संकटकालीन स्थिति का सामना करने के लिए प्रदान की गई व्यावसायिक सहायता परामर्श प्रदान करने का एक अत्यंत विशेषज्ञता प्राप्त क्षेत्र है। आइए, कुछ ऐसी संकट स्थितियों पर विचार करें जिनका स्कूल के बच्चों को अपने जीवनकाल में सामना करना पड़ सकता है।

बालक दुरुपयोगः बालकों के दुरुपयोग में शारीरिक या मानसिक अत्याचार, भावात्मक उपेक्षा, यौन उत्पीड़न, वाणिज्यिक शोषण या कोई अन्य काम जो बालक के हित को नुकसान पहुंचाए अथवा उनके जीवन को संकट में डाले, सम्मिलित होता है। बालकों का दुरुपयोग करने वाले माता-पिता या कोई अन्य जो उनकी देखभाल करने वाला हो सकता है। यदि बच्चे ने शारीरिक/मानसिक अत्याचार या यौन उत्पीड़न का सामना किया है तो इससे उनके मानसिक स्वास्थ्य को क्षति पहुँच सकती है, उनमें आत्महीनता की भावना आ सकती है, उनमें व्याग्रता, हताशा, डर, आक्रमणशील व्यवहार या आत्महत्या की प्रवृत्ति भी आ सकती है। वे बच्चे जो अपने दुरुपयोग का अनुभव करते हैं वे अपने जीवन में एक सकंटकालीन स्थिति से गुज़रते हैं और उनको सहायता की आवश्यकता होती है। अध्यापक व स्कूल का परामर्शदाता बालक के साथ नज़दीक से पारस्पारिक क्रिया करते हैं व बहुत-सा समय एकसाथ व्यतीत करते हैं। इसलिए अध्यापक तथा उपबोधक उनके व्यवहार में आने वाले परिवर्तन को, यदि कोई है तो, ज्यादा अच्छी तरह से समझने की स्थिति में होते हैं। वह बच्चे जो दुरुपयोग का सामना करते हैं वे कई बार मानसिक आघात का अनुभव करते हैं व उसके विषय में औरों को बताने में कठिनाई का अनुभव करते हैं। अध्यापकों और परामर्शदाताओं को बालकों को ध्यान से देखना चाहिए व उनके वयवहार में आने वाले संकट के संकेतों को पहचान कर उनकी सहायता के लिए हस्तक्षेप कार्यनीतियाँ विकसित करनी चाहिए जिससे कि बालक उस संकट का सामना करके सामान्य जीवन की ओर वापिस आ सके।

गम्भीर बीमारीः बहुत समय तक चलने वाली या गंभीर बीमारी बालक के जीवन में संकटकालीन स्थिति का कारण हो सकती है। बालक स्वयं या उसके परिवार का कोई सदस्य गंभीर बीमारी से ग्रसित हो सकता है। एचआईवी/एड्स जैसी बीमारियों पर एक लांछन लगा हुआ है। यदि कोई बालक या परिवार का कोई सदस्य एचआईवी/एड्स से ग्रसित है तो वह बालक स्कूल व समुदाय में अलग-थलग कर दिया जाता है। उस पर आरोपित अलगाव उस बालक व परिवार के लिए एक मानसिक आघातपूर्ण अनुभव होता है। अध्यापक व परामर्शदाता को प्रभावित परिवार, अन्य विधार्थियों तथा आस-पास के समुदाय को परामर्श देना चाहिए तथा एचआईवी/एड्स के बारे में जागरूकता लानी चाहिए कि यह रोग किस प्रकार एक से दूसरे को संचरित होता है, इसके लिए क्या-क्या उपचार उपलब्ध हैं तथा किस प्रकार इसकी रोकथाम की जा सकती है, आदि। साथ ही उन व्यक्तियों को भी परामर्श देकर, जोकि एचआईवी/एड्स से प्रभावित लोगों/परिवार को निर्वासित कर देते हैं, उनको उनकी सोच में परिवर्तन लाकर रोगी के साथ उपयुक्त व्यवहार करने के लिए प्रेरित करना चाहिए। इस प्रकार दोहरा परामर्श प्रभावित लोगों के लिए स्थिति की गंभीरता को घटाने में मदद करता है।

आत्महत्या रोकथामः सामान्य रूप से माना जाता है कि बच्चे आत्महत्या नहीं करते। किंतु आँकड़े दिखा रहे हैं कि प्रतिवर्ष बड़ी संख्या में बच्चे आत्महत्या कर रहे हैं। आत्महत्या मानव जीवन का बहुत बड़ा अपव्यय है। ऐसे बहुत-से कारण हैं जिनकी वजह से लोग आत्महत्या कर सकते हैं। बोर्ड की परीक्षाओं के समय या बोर्ड परीक्षाओं के परिणाम की घोषणा के समय हमें कुछ बच्चों के द्वारा आत्महत्या करने की सूचना मिलती है। यह परीक्षा की तैयारी के तनाव, परीक्षा में पास न होने, नम्बर कम आने, मनचाहे कोर्स में दाखिला न मिल पाने आदि के कारण हो सकते हैं। आत्महत्या हताशा (depression), किसी प्रियजन की मृत्यु, किसी संबंध में असफलता, बाल दुरुपयोग, मादक द्रव्य व्यसनिक आदि के कारण भी हो सकती है। यदि संभावित पीड़ित व्यक्ति के आस-पास के व्यक्तियों में संकट के लक्षणों को पहचानने की योग्यता हो तो आत्महत्या को रोका जा सकता है। इसलिए अध्यापक और परामर्शदाता को उन बच्चों को परामर्श देना चाहिए जिनको खतरा हो। वह व्यक्ति जो आत्महत्या के बारे में सोचता है वह बहुत अधिक व्यग्रता, हताशा, थकान आदि प्रदर्शित करता है। वे अपने किसी मित्र से अपनी अपनी आत्महत्या की योजना के बारे में बात कर सकते हैं। वह अपने होने की व्यर्थता के संबंध में अपने विचार प्रकट कर सकते हैं। वह अपने किसी प्रिय की मृत्यु से बहुत ही अधिक दुखी हो सकते हैं। उन क्रियाओं में जिन्हें करने में पहले वह बहुत रुचि लेते थे अब कोई रुचि न ले रहे हों जैसे अच्छे वस्त्र पहनने और अच्छे दिखाई देने में। वहाँ आत्महत्या की चेतावनी देने के संकेत होते हैं और उनमें अध्यापक व उपबोधक को हस्तक्षेप करना चाहिए। यदि आपको अनुमान बताता है कि विद्यार्थी को आत्महत्या का खतरा है तो आपको तुरंत उसकी सूचना माता-पिता को देनी चाहिए और हस्तक्षेप के लिए योजना बनानी चाहिए। यदि आवश्यकता हो तो बाहर से इस क्षेत्र के व्यावसायिक अभिकरणों की सहायता लेनी चाहिए।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

10) बहु-संस्कृति उपबोधन क्या है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

11) संकटकालीन उपबोधन का क्या अर्थ है?

.....

.....

.....

.....

.....

.....

12) कुछ संकटकालीन स्थितियों को पहचानिए जो एक व्यक्ति के जीवन में उत्पन्न हो सकती हैं।

.....

.....

.....

.....

.....

4.8 उपबोधन से जुड़े विशिष्ट क्षेत्र

अभी तक, हम उपबोधन की, इसके विभिन्न पहलुओं और संबद्ध संकल्पनाओं के संदर्भ में सामान्य विवेचना कर रहे थे। लेकिन उपबोधन से जुड़े कुछ ऐसे क्षेत्र भी हैं जिनमें उपबोधक के लिए विशिष्ट विशेषज्ञता रखना और तकनीकों में सक्षम होना अनिवार्य है। इन क्षेत्रों को उपबोधन के विशेष क्षेत्र माना गया है।

4.8.1 पारिवारिक उपबोधन

परिवारिक उपबोधन के अंतर्गत वृत्तिक उपबोधक और परिवार के बीच अंतःक्रिया उत्पन्न होती है। जिसमें परिवार के सदस्यों के विचार संप्रेषण और संबंधों में सुधार आता है और प्रत्येक सदस्य की व्यक्तिगत अभिवृद्धि में बढ़ोतरी होती है और परिवार के सदस्यों में एक-दूसरे के प्रति बेहतर तालमेल और स्वस्थ अंतःक्रिया भी बढ़ती है।

परिवारिक उपबोधन चार विशिष्ट अवस्थाओं से होकर गुजरता है। प्रारंभिक अवस्था में संबंध विकसित करना और समस्या का निर्धारण करना शामिल है। मध्य अवस्था में परिवार के सदस्य अपनी समस्या के लिए उत्तरदायी कारकों की संवेगात्मक स्तर पर समझ विकसित करते हैं। अंतिम अवस्था में परिवार की सहायता की जाती है ताकि व्यवहार के विभिन्न वैकल्पिक तरीकों की पहचान करते हुए समूची पारिवारिक व्यवस्था को रूपांतरित किया जा सके। चतुर्थ, समाप्ति अवस्था निर्भरता मुक्ति अवस्था है जिसमें बिना उपबोधक की सहायता के परिवार को अपने निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति की शिक्षा दी जाती है।

प्रारंभिक सत्रों में उपबोधक सदस्यों से सौहार्द, विश्वास और भरोसा स्थापित करने का प्रयास करता है। इन सत्रों में प्रत्येक सदस्य को महत्त्वपूर्ण माना जाता है और आग्रह किया जाता है कि वे अपने बारे में स्वयं अधिकाधिक व्यक्त करें। सदस्यों को प्रेरित किया जाता है कि वे अपनी समस्या को उजागर करें और विचार-विमर्श करें कि वे अपने परिवार से क्या आशा करते हैं। उपबोधक परिवार की कार्यशैली (गतिकी), शक्ति संरचना का ध्यानपूर्वक पता लगाते हैं और देखते हैं कि परिवार के आपसी संप्रेषणात्मक रूप और सकारात्मक संसाधन कौन-से हैं। सदस्यों की सहायता की जाती है कि वे अपने आपको सामाजिक इकाई के रूप में देखें। यदि आवश्यक हो तो पारिवारिक वृत्त, विस्तृत परिवार सदस्यों से अंतःक्रिया आदि से भी खोजबीन की जा सकती है। यदि एक बार समस्या पर दुबारा से ध्यान केंद्रित हो जाए, उद्देश्य निर्धारित कर लिया जाए और प्रत्येक सदस्य की वचनबद्धता स्पष्ट हो तो निर्णय लिया जा सकता है कि सभी सदस्य एक ही सत्र में या अलग-अलग सत्रों में उपबोधन प्राप्त करेंगे। मध्य अवस्था में समस्या की संवेगात्मक समझ की प्राप्ति के लिए सदस्यों की सहायता की जाती है। इस अवस्था में उपबोधक संवेगावेशित समस्या को पूरी तरह से अनावृत कर देता है जैसे किसी निकटतम संबंधी के मरने से शोक में डूबे रोगी

को बाहर निकालना, तलाक हो जाना, बचपन का खो जाना आदि। इन सभी बातों को विस्तृतम रूप से अनावृत्त करके रोगी के सामने रखा जाता है। इस अवस्था में उपबोध्य अनुभव करते हैं कि संबंधों को अपनी बेहतरी के लिए परिवर्तित भी किया जा सकता है। इससे भूमिकाएँ स्पष्ट, अधिक लचीली हो जाती हैं और संप्रेषण प्रत्यक्ष और रचनात्मक बन जाता है।

अंतिम चरण में सदस्यों को प्रेरित किया जाता है कि वे इन परिवर्तित अंतःसंबंधों को परिवार में विकसित करें और समाप्ति चरण में परिवार उपबोधक की मदद के बिना व्यावहारिक दृष्टि से कार्य करना आरंभ कर देता है। इसके पश्चात् घटित होने वाली परिस्थितियों का पुनर्विलोकन (review), भावी समस्याओं पर चर्चा और उनका निपटान कैसे किया जाएगा आदि बातों पर ध्यान देना सहायक सिद्ध होता है।

4.8.2 वृत्तिक उपबोधन

व्यावसायिक उपबोधन से आशय ऐसा वृत्तिक संबंध कायम करना है जिसके अंतर्गत किसी भी व्यवसाय के चयन, प्रवेश प्राप्त करने की तैयारी और प्रभावी रूप से कार्य करने में उपबोध्यों को सहायता प्रदान की जाती है।

ई.जी.विलियमसन (1939) के अनुसार, ''उपबोध्य की समस्याओं को चार श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है अर्थात् चुनाव कर सकने का अभाव, अनिश्चित चयन विकल्प, अविवेकपूर्ण चयन तथा रुचि और अभिवृत्ति के बीच असमन्वय। इन संदर्भों में उपबोधन की प्रक्रिया, सामान्य उपबोधन से काफी मिलती-जुलती है क्योंकि पसंद विकसित करना और व्यवसाय की स्थापना, सामाजिक और पर्यावरणीय प्रभाव और व्यक्तित्व विकास से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं।''

उपबोध्यों की समस्याओं की पहचान और स्पष्टीकरण, एकत्रित जानकारी और स्थापित सौहार्द के माध्यम से होता है। इसी जानकारी के आधार पर उपबोधक परिकल्पना निर्माण करता है। उपबोध्य की समस्या का उपबोधक की सहायता से समाधान किया जाता है। तत्पश्चात् इसका मूल्यांकन किया जाता है। वृत्तिक उपबोधन से जुड़ा मुख्य अंतर है कि इसमें व्यावसायिक क्षेत्रों से अतिरिक्त जानकारी भी प्राप्त करनी पड़ती है। व्यावसायिक इतिहास की समीक्षा की जाती है और यदि आवश्यक हो तो व्यावसायिक परीक्षण किए जाते हैं और विभिन्न व्यवसायों और प्रशिक्षण संभावनाओं की जाँच-परख की जाती है। अंत में अपनाए जाने वाले व्यवसाय या विकास के लिए निर्णय लिए जाते हैं।

भारत में व्यावसायिक उपबोधन प्राथमिक रूप से शिक्षा तक सीमित है। सामुदायिक एजेंसियों और व्यावसायिक क्षेत्रों में कर्मचारियों को उपबोधन देने में इसका विस्तृत महत्त्व है। इसी प्रकार से विशिष्ट उपबोधक विकलांग और सुविधावंचित व्यक्तियों को रोजगार दिलाने में व्यावसायिक पुनर्वास स्थापित करने में सहायता करते हैं। इस क्षेत्र में किया गया व्यापक शोध दर्शाता है कि अधिकांशतः व्यावसायिक उपबोधन लाभकारी होते हैं।

4.8.3 मादक द्रव्य व्यसनिकों व मद्य व्यसनिकों का उपबोधन

हमारे देश में नशे की लत महामारी की तरह फैल चुकी है। इसके कुप्रभाव अनगिनत हैं। नशीले पदार्थ मनोसक्रिय होते हैं जिसके कारण मूड में, प्रत्यक्षण में तथा व्यवहार में परिवर्तन आ जाता है। इन पदार्थों के सेवन से भूख मर जाती है जिससे शरीर में पोषक तत्वों की भयंकर कमी हो जाती है और परिणामस्वरूप मनुष्य गंभीर रोगों से ग्रस्त हो जाता है। इसके सेवन से अंतर्वैयक्तिक समस्याएँ गंभीर रूप धारण कर लेती है जैसे घर में रोज क्लेश होना,

छोटे बच्चों से मारपीट करना, लैंगिक विकास आदि। इनका सेवन मनुष्य को शारीरिक और मानसिक तौर पर इन पदार्थों पर निर्भर बनाता है जिससे मनुष्य इनसे छुटकारा पाने में लगभग असमर्थ हो जाता है। ऐसे अपराध निरंतर बढ़ोतरी पर हैं जिनमें नशाखोर नशीले पदार्थ खरीदने के लिए पैसा हथियाने में सड़कों-गलियारों आदि में अपराध करते हैं।

मादक पदार्थ व्यसन छुड़ाने से संबद्ध उपबोधक जोर देते हैं कि रोगी का उपचार के अत्यधिक संरचित स्तरीय और सुरक्षित पर्यावरण के अंतर्गत आवसीय स्थिति में किया जाना चाहिए। क्योंकि यह महत्त्वपूर्ण है कि उन्हें प्रारंभ में बुरे वातावरण के प्रभावों से बचाया जाए। इसके अतिरिक्त व्यसनियों को सहायता करने के बहुत से मामलों में दवा देने की सलाह भी दी जाती है ताकि वे ऐसे पदार्थों पर निर्भर होने की आदत को छोड़ सकें।

मादक प्रतिरोधी उपबोधक अस्पताल में भर्ती होने की आवश्यकता को नकारते हुए, आग्रह करते हैं कि व्यसनियों को उपबोधन कार्यक्रम में भाग लेना चाहिए। उनका मानना है कि प्रथम चरण के रूप में व्यसनियों को मद्यपान से दूर रखा जाए क्योंकि इसके बिना उपयुक्त सौहार्द या संप्रेषण स्थापित करना असंभव है। इसी प्रकार से परिवार के सदस्यों को भी उपबोधित किया जाए और उनकी गलत भूमिकाओं तथा गलत संप्रेषण से उनको अवगत कराया जाए क्योंकि सदस्यों में पर्याप्त समन्वय या संप्रेषण स्थापित न होने से समस्याओं की उत्पत्ति होती है। व्यसनी और परिवार के सदस्य, दोनों को सहायता मिलनी चाहिए जिससे वे अपनी सार्थकता को समझें और अपने व्यवहार से जुड़े उत्तरदायित्व की भावना की अनुभूति कर सकें। वे अपनी आवश्यकताओं को प्रत्यक्ष रूप से अभिव्यक्त करना सीखते हैं। बचपन के अनुभवों की खोज से उन दमित नकारात्मक भावनाओं से अवगत हो जाते हैं जो उनके वर्तमान व्यवहार को प्रभावित कर रही है। वे तनाव से जूझने के नए तरीकों की जानकारी भी प्रापत करते हैं। व्यसनियों को समूह उपबोधन की आवश्यकता है क्योंकि सामाजिक कौशलों में वे अक्सर पिछड़े रहते हैं।

सहायक सेवाएँ जैसे मनोरंजनात्मक या व्यावसायिक चिकित्सा नई रूचियों को विकसित करने में सहायक होती हैं। पोषणात्मक मार्गदर्शन खाने की अच्छी आदतों को विकसित करने में सहायक होता है। उपबोधन समाज में उनकी सफलतापूर्वक वापसी को सुदृढ़ बनाता है और इससे समस्या का स्थायी निवारण भी संभव है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

13.) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही हैं या गलत :

i) पारिवारिक उपबोधन से आशय उपबोधक द्वारा दी जाने वाली ऐसी मनोवैज्ञानिक सहायता है जो वह अपने परिवार के सदस्यों और संबंधियों को देता है।

ii) वैवाहिक उपबोधन और पारिवारिक उपबोधन समान हैं।

iii) व्यवसनियों के परिवार के सदस्यों को उपबोधन देना आवश्यक है।

4.9 उपबोधन का मूल्यांकन

मूल्यांकन से आशय निर्धारित मानकों के अंतर्गत कार्यक्रम प्रभाविता की जाँच करना है। विद्यालय में संशोधित समायोजन, उपयुक्त व्यावसायिक चयन, यथार्थवादी आत्मधारणा या बेहतर ग्रेड प्राप्ति के रूप में इसे समझा जा सकता है। उपबोधन के संदर्भ में, मूल्यांकन का

अर्थ यह निर्धारित करना है कि इन लक्ष्यों की प्राप्ति हुई है या नहीं और यदि हाँ तो किस सीमा तक। ऐसे विभिन्न उपबोधन उपागमों और स्थितियों का मूल्यांकन भी आवश्यक है जिनमें उपबोधन सर्वाधिक प्रयुक्त किया जा सकता है।

मूल्यांकन में समस्याएँ

1) मानदंडों (निष्कर्षों) का चयन

किसी अन्य मूल्यांकन कार्यक्रम की भांति, उपबोधन का मूल्यांकन भी ऐसे निश्चित मानदंडों पर आधारित होता है जिनके आधार पर उपबोधन के परिणामों की जाँच की जाती है। अच्छा निष्कर्ष वह है जो अध्ययन की जाने वाली समस्या से संबद्ध या संगत हो और साथ ही साथ जिसे मापा भी जा सके। विशेष स्थिति से संबद्ध मानदंड निश्चित करना सरल हो सकता है लेकिन कई बार, ये अत्यंत अस्पष्ट और अव्यावहारिक होते हैं क्योंकि इन्हें संख्यात्मक रूप में निर्धारित करना अत्यंत कठिन हो जाता है। यदि हम व्यक्तिनिष्ठ मानदंड के चयन को प्रस्तावित करें अर्थात् उपबोधन की प्रभाविता की जाँच उपबोध्यों की व्यक्तिगत राय से करना चाहें तो शायद प्राप्त निष्कर्ष भी व्यक्तिनिष्ठ होंगे। प्रायः वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन को मूल्यांकन का सर्वश्रेष्ठ साधन माना जाता है। इसके अंतर्गत किसी तीसरे पक्ष या मनोवैज्ञानिक परीक्षण में प्राप्त अंकों के आधार पर मूल्यांकन किया जाता है जो भविष्य सूचक होता है तथा सर्वोत्तम माना जाता है। लेकिन इसकी अपनी सीमाएँ भी हैं, जैसे हीनभावना की अनुभूति को यदि मानदंड माना जाए तो किसी भी बाहरी एजेंसी के द्वारा इसका प्रेक्षण या अवलोकन नहीं किया जा सकता। इसलिए मनोवैज्ञानिक परीक्षणों का प्रयोग मात्र विकल्प के रूप में किया जा सकता है। परंतु वर्तमान समय में केवल कुछ गिने-चुने मनोवैज्ञानिक परीक्षणों को ही वैध माना जाता है। वास्तव में, सभी स्थितियों और व्यक्तियों के लिए कोई भी परीक्षण वैद्य नहीं है।

2) मूल्यांकन किए जाने वाले लक्ष्य की जटिलता

प्रायः उपबोधन का लक्ष्य आत्म-निदेशन और आत्म-निर्भरता की प्राप्ति करना होता है। ऐसे लक्ष्यों के संदर्भ में मूल्यांकन कार्य सरल प्रक्रिया नहीं हो सकती क्योंकि ये लक्ष्य अनूठे, जटिल और गतिशील होते हैं। यह विशेष रूप से व्यक्तिगत उपबोधन के मामले में होता है न कि शैक्षिक उपबोधन के मामले में, जहाँ लक्ष्य मुख्य रूप से विद्यालय में अधिक अंक प्राप्त करने, स्मृति कौशल और अध्ययन से जुड़ी आदतों आदि में सुधार लाने से संबद्ध होते हैं।

3) पर्याप्त आंकड़ों का अभाव

इसका संदर्भ पूर्व उपबोधन स्थिति की तुलना से है। यदि आंकड़ों का अभाव होगा तो सार्थक उपबोधन अव्यावहारिक रूप ले लेगा।

4) मूल्यांकन

उपबोधन के संदर्भ में मूल्यांकन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें काफी समय लगता है।

5) प्रशिक्षित कार्मिकों का अभाव

मूल्यांकन की तकनीकों में निपुण प्रशिक्षित कार्मिकों का अभाव भी समस्याएँ उत्पन्न कर सकता है।

लेकिन ऐसा नहीं है कि समस्याओं और प्रायोगिक कठिनाइयों से जूझने के डर से हम उपबोधन कार्यक्रमों का मूल्यांकन करना बंद कर देंगे। इसके बहुत से कारण हैं, पहला कारण है कि किसी भी कार्यक्रम के औचित्य और उपयोगिता का निर्णय मूल्यांकन के बिना संभव नहीं है। दूसरे, इसके कार्यक्रम की सीमाओं का पता चलता है। अतः सीमाओं या त्रुटियों का पता लगने से उपचारी उपाय सुनिश्चित करना और प्रदान की जाने वाली सेवाओं की गुणवत्ता में सुधार लाना संभव हो पाता है। अंत में उपबोध्य की दृष्टि से भी इसका महत्त्व है। क्योंकि इसके द्वारा उन्हें प्रतिपुष्टि प्रदान की जा सकती है ताकि वे श्रेष्ठ परिणामों के लिए अभिप्रेरित हो सकें।

इस प्रकार हमें इस क्षेत्र में मूल्यांकन की आवश्यकता और शोधकर्ताओं द्वारा अनुभूत समस्याओं का पता चल गया है। अब हम ऐसे तरीकों का अध्ययन करेंगे जिनके प्रयोग द्वारा मूल्यांकन प्रक्रिया को पूरा किया जाता है।

1) सर्वेक्षण उपागम

यह एक अत्यंत सरल विधि है। इसमें निश्चित उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए चयनित प्रतिदर्श पर किए गए सर्वेक्षणों से आँकड़े इकट्ठे किए जाते हैं। इस उपागम में शामिल हैं; समष्टि की पहचान करना, इससे प्रतिनिधिक प्रतिदर्श की प्राप्ति करना, जानकारी इकट्ठी करना, उपयुक्त मूल्यांकनपरक कार्यसूची का उपयोग करना और अंत में पूर्व-निर्धारित मानदंडों के आधार पर निकर्ष की विस्तृत व्याख्या प्रदान करना।

इस उपागम के अंतर्गत उपबोध्यों से प्रत्यक्ष रूप से प्रश्न पूछे जाते हैं या प्रश्नावली के माध्यम से उपबोधन की उपयोगिता पर उनके विचार प्राप्त किए जाते हैं कि उन्हें उपबोधन से लाभ मिला है या नहीं। उनसे उपबोधन में पाए जाने वाले दोषों और संभावित समाधानों को उजागर करने के लिए भी कहा जाता है। उपबोधन में सुधार लाने के लिए भी उपबोध्यों से विविध प्रश्न पूछे जाते हैं।

यह विधि काफी उपयोगी उपागम है क्योंकि इसके अंतर्गत यथोचित समय में बड़ी संख्या में आंकड़े इकट्ठे किए जा सकते हैं जिससे निष्कर्ष अधिक वैध बनते हैं। इस उपागम के कुछ दोष भी है जैसे, प्रतिदर्श में सम्मिलित व्यक्तियों के उत्तरों की अविश्वसनीयता, उनमें अधिकांश रूप से सामाजिक रूप से वांछित उत्तर देने की प्रवृत्ति अधिक होती है, प्रयोगात्मक वैधीकरण का अभाव रहता है और प्रतिचयन त्रुटियों के होने की संभावना बढ़ जाती है जिससे निष्कर्ष अभिन्न हो सकते हैं।

2) व्यक्ति अध्ययन उपागम

इस उपागम के अंतर्गत उपबोधकों का ध्यान व्यक्तिगत मामलों की ओर होता है। प्रत्येक मामले का विश्लेषण गहराई से किया जाता है जिससे उपबोधकों द्वारा दिए गए उपबोधन की प्रभाविता की पहचान हो सके। इसके पश्चात् व्यक्तिनिष्ठ मानदंडों का प्रयोग करते हुए दुबारा से मूल्यांकन किया जाता है जेसे उपबोध्यों का उपबोधन कार्यक्रम के प्रति क्या दृष्टिकोण है या अपनी बेहतरी को ध्यान में रखते हुए उपबोधन के प्रति उसके विचार कैसे हैं। जैसा कि पहले भी उल्लेख किया जा चुका है, वस्तुनिष्ठ मानदंडों का प्रयोग भी व्यक्ति की निजी सीमाओं को ध्यान में रखते हुए किया जा सकता है।

इस उपागम का मुख्य लाभ व्यक्तिगत मामलों में दिए जाने वाले जोर में निहित है। इस उपागम का एक बड़ा दोष है कि इसमें समय बहुत लगता है। इसके अतिरिक्त

हर व्यक्ति अपने आप में अनोखा है इसीलिए ऐसे आंकड़ों के आधार पर सामान्यतया राय कायम करना अनुपयुक्त होगा। लेकिन इसके विपरीत यदि हम अलग-अलग उपबोध्यों से संबद्ध आंकड़ों को अनदेखा करते हैं तो वह व्यक्तिगत उपागम के अनूठे लक्षणों को अनदेखा करना भी होगा।

3) **प्रयोगात्मक अध्ययन**

इस उपागम की बुनियादी अपेक्षाएँ हैं : (क) उद्देश्यों का निर्धारण या ऐसे लक्ष्य की स्थापना जिसे ध्यान में रखकर अध्ययन किया जाता है (परिकल्पनाओं का निर्माण); (ख) प्रयोग के लिए उपयुक्त विधि या रूपरेखा का चयन; (ग) दो या अधिक समतुल्य समूहों का चयन; (घ) ऐसी उपबोधन तकनीकों का अनुप्रयोग जिससे परिणामों की निष्पक्ष जाँच हो सके; और (च) आंकड़ों का विश्लेषण और निष्कर्षों की व्याख्या।

इस उपागम का प्रमुख सोपान, समतुल्य समूहों का चयन करना है। शैक्षिक क्षेत्र में भी इस तरीके से अध्ययन कौशलों में सुधार, बोधगम्यता, स्मृति, वाचन योग्यता आदि से जुड़ी प्रगति का मूल्यांकन इस विधि द्वारा किया जा सकता है। लेकिन व्यवसाय चयन और कार्मिक उपबोधन से जुड़े क्षेत्रों में उपबोध्य को संतुष्ट करना जटिल प्रकार्य है क्योंकि इसके द्वारा वस्तुनिष्ठ निर्धारण काफी कठिन होता है।

उपबोधन की उपयोगिता

अब हम ऐसे निष्कर्षों को सूत्रबद्ध करेंगे, जिसकी प्राप्ति उपबोधन कार्यक्रमों के मूल्यांकन से हुई है।

अनुवर्ती अध्ययन दर्शाते हैं कि विद्यार्थियों को स्कूल में और बाद में दिया जाने वाला उपबोधन ऐसे समूहों की तुलना में अधिक सफल होता है जिन्हें उपबोधन की प्राप्ति कभी नहीं हुई। इन दोनों समूहों के बीच अभिप्रेरणा की असमानताओं को नियंत्रित करने के बावजूद भी, सफलता दर में महत्त्वपूर्ण असमानताएँ देखने को मिलती हैं।

सभी मामलों में उपबोधन समान रूप से प्रभावी नहीं होता। व्यावसायिक उपबोधन से व्यावसायिक संतुलन को बेहतर बनाया जा सकता है।

अध्ययनों ने सिद्ध किया है कि उपबोधक को प्राप्त सैद्धांतिक शिक्षा की तुलना में उसकी व्यावहारिक दक्षता अधिक महत्त्व रखती है।

अपनी प्रगति की जाँच कीजिए

टिप्पणी :क) अपने उत्तरों के लिए नीचे दिए गए स्थान का प्रयोग कीजिए।

ख) इस खंड के अंत में दिए गए उत्तरों से अपने उत्तर मिलाइए।

14) बताइए कि निम्नलिखित कथन सही है या गलत :

i) उपबोधन की प्रभाविता पर उपबोध्य की व्यक्तिगत राय, मूल्यांकन का वस्तुनिष्ठ मानदंड है।

ii) मनोवैज्ञानिक परीक्षण से प्राप्त अंक, मूल्यांकन का व्यक्तिनिष्ठ मानदंड है।

iii) उपबोधन का मूल्यांकन, उपबोध्यों के लिए भी सहायक होता है।

iv) सर्वेक्षण प्रणाली उपबोधन कार्यक्रम को मूल्यांकित करने का सर्वाधिक सरल तरीका है।

4.10 सारांश

उपबोधन सहायक प्रवृत्ति वाला संबंध है। व्यक्तिगत उपबोधन एक वैयक्तीकरण की प्रक्रिया है जिसमें उपबोधक और उपबोध्य केवल एक-दूसरे के लिए या आमने-सामने के संबंध के आधार पर कार्य करके उपबोध्य की विभिन्न आवश्यकताओं का अन्वेषण करने पर ध्यान देते हैं। ऐसे व्यक्तियों के लिए समूह उपबोधन बहुत अधिक लाभदायक होता है जो अन्तर्वैयक्तिक अंतःक्रियाओं में शर्मीले या आक्रामक हैं, समूहों में उत्तेजित या असुविधा अनुभव करते हैं या सामाजिक अपेक्षाओं के प्रति अनिच्छुक हैं। समकक्ष उपबोधन का प्रयोग उन स्थितियों में किया जाता है जहाँ व्यक्तियों के बीच कई बातें समान होती हैं। स्कूल के वातावरण में समकक्षों से परामर्श लेने का अर्थ है एक विद्यार्थी दूसरे विद्यार्थी या विद्यार्थियों के समूह को परामर्श देता है। समकक्ष परामर्श के कुछ लाभ निम्न प्रकार हैं –

- समकक्ष परामर्श, परामर्श देने वाले और परामर्श प्राप्त करने वाले दोनों को लाभ पहुँचाता है।
- यह कम खर्चीला होता है क्योंकि समकक्ष परामर्शदाता स्कूल के विद्यार्थियों में से ही लिए जाते हैं।
- समकक्ष परामर्श सरलता से उपलब्ध होता है।
- समकक्ष परामर्श अनौपचारिक होता है इसलिए परामर्श प्राप्त करने वाला बिना किसी संकोच के परामर्शदाता तक पहुँच सकता है।
- समकक्ष परामर्श स्कूल के उपबोधन कार्यक्रम को बढ़ाता है।
- समकक्ष परामर्श अधिक विद्यार्थियों को उपबोधन कार्यक्रम के अंतर्गत लाता है।
- समकक्ष परामर्शदाता विद्यार्थियों और व्यावसायिक परामर्शदाता के बीच की दूरी को कम करते हैं।

बहु-संस्कृति उपबोधन यह समझने के लिए विकसित हुआ कि जब व्यावसायिक परामर्श देने वाला और उसका ग्राहक (उपबोध्य) एक अलग सामाजिक सांस्कृतिक पृष्ठभूमि से आते हैं तो उनके बीच के अंतर पारस्परिक क्रियाओं और लाभदायक प्रक्रियाओं की गुणवत्ता को प्रभावित करते हैं। एक बहु-संस्कृति उपबोधन कार्यक्रम में परामर्शदाता को अतिरिक्त बहु-संस्कृति योग्यताएं प्राप्त करने और प्रदर्शित करने की आवश्यकता होगी। बहु-संस्कृति उपबोधन में ग्राहक की संस्कृति के विषय में जानने, उनकी समाजीकरण की प्रक्रियाओं और उन प्रक्रियाओं को समझने की आवश्यकता होती है जिनके आधार पर उनके समाज में महिला-पुरुष की भूमिका की पहचान होती है, उनकी मान्यताएँ अभिवृत्तियाँ तथा विश्व दृष्टिकोण निर्धारित होते हैं।

एक संकटकालीन स्थिति व्यक्ति के जीवन में किसी प्रियजन की मृत्यु अक्षम कर देने वाली चोट, बीमारी, शारीरिक अत्याचार, यौन उत्पीड़न, प्राकृतिक आपदा, युद्ध, युद्ध में संलग्नता, नागरिक संघर्ष/अव्यवस्था व अन्य इस प्रकार की घटनाओं के कारण उत्पन्न हो सकती है। संकटकालीन स्थिति का सामना करने के लिए प्रदान की गई व्यावसायिक सहायता उपबोधन प्रदान करने का एक अत्यंत विशेषज्ञता प्राप्त क्षेत्र है। उपबोधन के कुछ क्षेत्रों में विशेषज्ञता अपेक्षित है जैसे कि पारिवारिक उपबोधन, वृत्तिक उपबोधन और मादक द्रव्य व्यसनिकों और मद्य व्यसनिकों का उपबोधन। अन्य सेवाओं के तहत उपबोधन सेवाओं का मूल्यांकन करना भी अनिवार्य है। मूल्यांकन कार्यक्रम की प्रभाविता के बारे में जानने में सहायक होता है।

4.11 इकाई के अंत में अभ्यास कार्य

1) व्यक्तिगत उपबोधन की समीक्षा करते हुए इसके लाभों और सीमाओं का मूल्यांकन कीजिए।

2) समूह उपबोधन के लाभ व सीमाओं का समीक्षात्मक मूल्यांकन कीजिए।

3) इकाई में दिए गए मार्गदर्शन के आधार पर अपने स्कूल में एक समकक्ष उपबोधन कार्यक्रम स्थापित कीजिए।

4) विद्यार्थियों के एक समूह से मिलकर उनकी संस्कृति में समाजीकरण की प्रक्रिया और समाज में लिंग भूमिका, मूल्यांकन, अभिवृत्तियों व विश्व के संबंध में विचारों का पता लगाइए। एक रिपोर्ट तैयार कीजिए कि दूसरों के विषय में प्राप्त नई समझ किस प्रकार एक उपबोधक के रूप में यह आपकी सहायता करेगी।

4.12 संदर्भ साहित्य एवं सुझावात्मक अध्ययन

Bengalee, M. (1984) : "*Guidance and Counselling"*, Seth Publishers, Bombay.

Bor, R., Ebner-Landy, J., Gill, S., & Brace, C. (2002). *Counselling in Schools*, New Delhi: Sage.

British Association for counseling (1991). Cited in Homby, G., Hall, C., & Hall, E. (edth. 2003). *Counselling Pupils in Schools.* p.1. London : Routledge Falmer.

Bruce Shetzer and Shelley C., Stone, *Fundamentals of Counselling.* 2nd ed. (Boston: Houghton Mifflin Company. 1974). p.20.

Buford Steffire and W.Harold Grand. *Theories of Counselling.* 2nd ed. (New York : McGraw-Hill Book Company. 1972), p.15.

Crow and Crow "*Introduction to Guidance"*. 2nd ed., Eunasia Publishing Co., New Delhi.

Dave, Indu (1984) : *The Basic Essentials of Counselling,* Sterling Publishers Private Limited, New Delhi.

Dryden, W. & Palmer. S. (1997). '*Individual Counselling'* in S.Palmer & G.Mc Mahon (eds), *Handbook of Counselling*, London: Routledge.

4.13 अपनी प्रगति की जाँच के उत्तर

इकाई 1

1) i) सही

ii) गलत

iii) गलत

iv) सही

v) सही

vi) गलत

2) i) ख

ii) क

iii) ग

3) i) गलत

ii) सही

iii) गलत

iv) गलत

v) गलत

vi) गलत

vii) सही

viii) गलत

ix) गलत

4) 1) सतत्

2) व्यवसाय

3) शारीरिक, भावात्मक, सामाजिक, नैतिक आध्यात्मिक

4) मनोरंजन

5) कार्यकलाप

5) i) सही

ii) सही

iii) गलत

iv) गलत

v) गलत

vi) गलत

6) i) क) अधिक समायोजित और संतोषजनक जीवन जीने के लिए व्यक्ति की सहायता करना उद्देश्य है।

ख) ग्राहक (विद्यार्थी) और चिकित्सक अथवा उपचारक (therapist)/उपबोधक के बीच संबंध अत्यंत महत्त्वपूर्ण होता है।

ii) जिस व्यक्ति को अनुदेश प्राप्त होता है, उसके लिए अनुदेशों का पालन करना सामान्यतः अनिवार्य होता है जबकि परामर्श के मामले में परामर्श प्राप्तकर्ता को परामर्शदाता द्वारा कही गई किसी बात के अनुसार पालन करना आवश्यक नहीं है।

iii) परामर्श एक प्रक्रिया है जिसमें संबंध निहित होता है। इसमें व्यावसायिक रूप से प्रशिक्षित, सक्षम परामर्शदाता और सहायता प्राप्त करने वाले व्यक्ति के बीच संबंध होता है। यह संबंध आकस्मिक, अनियत व्यापार जैसा नहीं होता। इस संबंध की विशेषता उत्साह, समझबूझ, स्वीकृति और विश्वास है।

iv) उपभाग 1.5.2 देखें।

7) i) गलत

ii) गलत

iii) सही

iv) गलत

8) • इस विश्व में प्रत्येक व्यक्ति अपने लिए उत्तरदायित्व लेने में सक्षम होता है; और

• प्रत्येक व्यक्ति को लोकतंत्र के सिद्धांतों पर आधारित अपना मार्ग चुनने का अधिकार है।

9) i) गलत

ii) सही

10) • सकारात्मक मानसिक स्वास्थ्य की प्राप्ति

• समस्या का समाधान

• निर्णय निर्धारण के लिए निर्देशन

• निजी प्रभावशीलता को सुधारना

• परिवर्तन में सहायता; और

• व्यवहार में परिवर्तन

11) i) गलत

ii) सही

iii) सही

iv) गलत

12) i) कार्ल रोजर्स

ii) थोर्न; संकलनात्मक (eclectic)

13) i) विश्लेषण, संश्लेषण, निदान, प्राग्ज्ञान (पूर्वानुमान) (prognosis) और परामर्श

ii) यह एक प्रकार का संकलनात्मक उपागम होता है। यह शब्द आर्नोल्ड लेजान्स ने प्रतिपादित किया था। इस उपागम का आग्रह है कि प्रत्येक व्यक्ति अपनी व्यक्तित्व संक्रिया (function) के सातों क्षेत्रों BASICID के साथ बेजोड़ होता है।

14) i) गलत

ii) गलत

iii) सही

15) प्रतिइच्छा (counterwill)

16) i) यह निर्धारित लक्ष्यों के लिए कार्य करने के परामर्शदाताओं के प्रयासों का विरोध करने के लिए, सेवार्थियों का रुझान होता है।

ii) यह वह परिघटना है जो तब घटित होती है जब परामर्शदाता अपने अनसुलझे द्वंद्वों (विरोधों) को सेवार्थियों पर आरोपित करता है।

1) i) युवाओं की आवश्यकताएँ; हमारी सामाजिक व्यवस्था की माँगों को पूरा करना; अधिगम प्रक्रिया और पाठ्यचर्या।

2) i) सही
   ii) गलत
   iii) सही
   iv) सही

3) i) ग
   ii) क
   iii) घ
   iv) ब

4) क) उपभाग 2.3.3 देखें।
   ख) इस कार्य के अंतर्गत यह देखना है कि 'समग्र व्यक्ति' की भौतिक, भावात्मक, सामाजिक और मानसिक आवश्यकताएँ पूरी हो जाती हैं।
   ग) अंग्रेजी कक्षाओं में मूल्यों को विकसित करने के अवसर सर्वाधिक स्पष्ट होते हैं। लघु कहानियाँ, नाटक, उपन्यास, निबंध और कविताएँ ऐसी स्थितियाँ प्रस्तुत करते हैं जिनमें लक्ष्य निहित होते हैं, समस्याओं का समाधान किया जाता है और निर्णय लिए जाते हैं। उपभाग 2.3.4 भी देखें।

5) क) अनुभव
   ख) अधिगम
   ग) व्यक्ति तथा मानवता के लिए जीवन हेतु योगदान

6) क) गलत
   ख) सही
   ग) सही

7) iii) चिकित्सीय

8) उपभाग 2.4.4 देखें।

9) क) परस्पर विरोधी नियम; जब वे व्यवहार जो घर में परिणाम लाते हैं (अभिभावकों को प्रसन्न करते हैं) और विद्यालय में उन्हें अनुचित और अनैतिक समझा जाता है तब विद्यार्थी विरोधी स्थिति का सामना करता है।
   ख) अनुपयुक्त भावनाएँ प्रायः विद्यालय में लोगों और वस्तुओं पर विस्थापित की जाती हैं।
   ग) 'दृढ़ नियंत्रण' तकनीक में मेरा मतलब कार्य से है, 'मुझे कार्य चाहिए' इस प्रकार की उसमें भावना है। यह अध्यापकों की आवाज़ के ढंग, चेहरे के हाव-भावों (अभिव्यक्तियों) अथवा भंगिमाओं (gestures) द्वारा की जा सकती हैं।

10) ग)

11) क) गलत

ख) सही

ग) गलत

घ) सही

च) सही

इकाई 3

1) i) गलत

ii) सही

iii) सही

iv) सही

v) गलत

vi) गलत

vii) गलत

viii) गलत

ix) गलत

x) गलत

2.) i) उपबोधक वह व्यक्ति है जो पूर्णकालिक निर्देशन कार्यकर्ता होता है। उसे पर्याप्त रूप से प्रशिक्षित और व्यावसायिक रूप से दक्ष व्यक्ति होना चाहिए जो परीक्षण तथा परामर्श का आयोजन कर सके और विद्यार्थियों को सूचना प्रदान कर सके।

ii) वृत्तिक उपबोधक विद्यालय में मूलरूप से एक अध्यापक होता है जो अपने प्रशिक्षण और अभिमुखीकरण (दिशा-निर्देश प्रदान करने) के कारण निर्देशन कार्य से जुड़ा होता है। वह शैक्षिक और व्यावसायिक सूचना एकत्र करने और उसका प्रचार प्रसार करने की कला में भी प्रशिक्षित होता है।

iii) अध्यापक निर्देशन कार्यकर्ता होता है क्योंकि वह पूरा दिन विद्यार्थियों के साथ रहता है।

3) i) गलत

ii) गलत

iii) गलत

iv) सही

v) गलत

4) i) चिकित्सीय

ii) संपूर्ण

iii) विद्यालय निर्देशन

iv) अध्यापक

5) i) सही
   ii) सही
   iii) गलत
   iv) गलत
   v) सही

6) i) सही
   ii) गलत
   iii) सही
   iv) गलत
   v) सही
   vi) गलत

7) i) सही
   ii) गलत
   iii) गलत
   iv) गलत
   v) सही

8) i) गलत
   ii) सही
   iii) गलत
   iv) गलत
   v) गलत
   vi) गलत
   vii) गलत
   viii) सही
   ix) सही
   x) सही

इकाई 4

1) व्यक्तिगत उपबोधन एक वैयक्तीकरण की प्रक्रिया है जिसमें उपबोधक और उपबोध्य केवल एक-दूसरे के लिए या आमने-सामने के संबंध के आधार पर कार्य करके उपबोध्य की विभिन्न आवश्यकताओं का अन्वेषण करने पर ध्यान देते हैं।

2) भाग 4.3 पढ़ें।

3) भाग 4.3 पढ़ें।

4) i) गलत

ii) गलत

iii) सही

iv) सही

v) गलत

vi) गलत

5) i) किफायती, अपनी अभिवृत्तियों, आदतों और निर्णयों का समाजीकरण करने के लिए सहायता करता है।

ii) सभी व्यक्तियों के लिए उचित नहीं, परामर्शदाता का स्थिति पर कम नियंत्रण होता है।

iii)
- व्यक्तिगत (पृथक) उपबोधन प्रत्यक्ष संबंध होता है जहाँ परामर्शदाता केवल उपबोधन प्राप्तकर्ता के साथ अंतःसंपर्क स्थापित करता है परंतु समूह परामर्श में उपबोधन एक ही समय पर अनेक व्यक्तियों के साथ अंतःसंपर्क करता है।
- व्यक्तिगत उपबोधन में केवल उपबोध्य सहायता प्राप्त करता है जबकि समूह निर्देशन में उपबोध्य भी दूसरों की सहायता प्रदान करता है।

iv)
- व्यक्ति विश्वास करने का आवश्यक गुण रखते हैं और उन पर अन्य समूह सदस्यों द्वारा भी विश्वास किया जाता है। उन्हें समूह में दूसरे लोगों के लिए बुनियादी सरोकार प्रदर्शित करना चाहिए।
- प्रत्येक व्यक्ति में स्व-परिवर्तन के लिए जिम्मेदारी लेने की क्षमता होती है।
- समूह सदस्य उद्देश्यों और समूह-प्रक्रिया की कार्यप्रणाली (methodology) से सीख और समझ सकते हैं।

6) समकक्ष निर्देशन का अभिप्राय है एक विद्यार्थी दूसरे विद्यार्थी या विद्यार्थियों के समूह को परामर्श देता है।

7) समकक्ष परामर्श के कुछ लाभ निम्न प्रकार हैं –

- समकक्ष परामर्श, परामर्श देने वाले और परामर्श प्राप्त करने वाले दोनों को लाभ पहुँचाता है।
- यह कम खर्चीला होता है क्योंकि समकक्ष परामर्शदाता स्कूल के विद्यार्थियों में से ही लिए जाते हैं।
- समकक्ष परामर्श सरलता से उपलब्ध होता है।
- समकक्ष परामर्श अनौपचारिक होता है इसलिए परामर्श प्राप्त करने वाला बिना किसी संकोच के परामर्शदाता तक पहुँच सकता है।
- समकक्ष परामर्श स्कूल के उपबोधन कार्यक्रम को बढ़ाता है।
- समकक्ष परामर्श अधिक विद्यार्थियों को उपबोधन कार्यक्रम के अंतर्गत लाता है।
- समकक्ष परामर्शदाता विद्यार्थियों और व्यावसायिक परामर्शदाता के बीच की दूरी को कम करते हैं।